ISSN 0973-3914

Centre for Research Studies
REWA (M.P.)

RESEARCH *Journal Of* SOCIAL AND LIFE SCIENCES

PEER-REVIEWED RESEARCH JOURNAL
UGC JOURNAL NO. (OLD) 40942
IMPACT FACTOR 3.928

Indexed & Listed at: Ulrich's International Periodicals Directory
ProQuest, U.S.A. Title Id: 715205

अंक-32 हिन्दी संस्करण वर्ष-16 जून 2020

2020

www.researchjournal.in

आई. एस. एस. एन. 0973-3914

रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 40942
Impact Factor 3.928
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, ProQuest,
U.S.A. Title Id : 715205

अंक-32	हिन्दी संस्करण	वर्ष-16	जून 2020

प्रोफेसर ब्रजगोपाल
प्रधान सम्पादक
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड से सम्मानित
profbrajgopal@gmail.com

डॉ. अखिलेश शुक्ल
ऑनरेरी सम्पादक
प्राध्यापक, समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित
akhileshtrscollege@gmail.com

डॉ. संध्या शुक्ल
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
drsandhyatrs@gmail.com

डॉ. गायत्री शुक्ल
अतिरिक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
shuklagayatri@gmail.com

डॉ. आर. एन. शर्मा
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा, रीवा
rnsharmanehru@gmail.com

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
की मुख्य शोध पत्रिका
म.प्र. सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1973 के अंतर्गत पंजीकृत
पंजीयन क्रमांक 1802, सन् 1997

विषय विशेषज्ञ/परामर्श मण्डल

1. डॉ. अरविंद जोशी (आचार्य) बनारस हिंदू विश्वविद्यालय वाराणसी
arvindvns@outlook.com
2. डॉ. रामशंकर, आचार्य, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर
rs_dubey@yahoo.com
3. डॉ. डी. एस. राजपूत, आचार्य, डॉक्टर हरीसिंह गौर केंद्रीय विश्वविद्यालय सागर
drdiwakarrajeut@rediffmail.com
4. डॉ. बी. के. सिंह, आचार्य, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी
imdrbrajesh.kv@gmail.com
5. डॉ. अंजली श्रीवास्तव, आचार्य, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा
anjali_apsu@rediffmail.com
6. डॉ. बी. पी. बडोला, सेवानिवृत्त, आचार्य, कांगड़ा हिमाचंल प्रदेश
bpbadola@gmail.com
7. डॉ. आभा सक्सेना, सह प्राध्यापक, अग्रसेन कन्या स्वशासी महाविद्यालय वाराणसी
drabhasaxena7@gmail.com
8. डॉ. प्रज्ञा मिश्रा, आचार्य, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट
pragyamishramgcgv@gmail.com
9. डॉ. आशीष सक्सेना, आचार्य, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद उत्तर प्रदेश।
ashish.ju@gmail.com
10. डॉ. ज्योति उपाध्याय, आचार्य, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन मध्य प्रदेश
drjyotiupadhyay11@gmail.com
11. डॉ. प्रमिला पुनिया, सह प्राध्यापक, इतिहास, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर राजस्थान
pramilapoonia@rediffmail.com
12. डॉ. रामलला शुक्ल, प्राध्यापक, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान रीवा
ramlalashukla666@gmail.com
13. डॉ. मृदुल जोशी, आचार्य, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार
dr_mriduljoshi@yahoo.com
14. डॉ. के. के. शर्मा, प्राध्यापक, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान रीवा
sharmakktrs@gmail.com
15. डॉ. शैलजा दुबे, प्राध्यापक, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय भोपाल
shailjadubey70@yahho.in
16. डॉ. प्रमिला श्रीवास्तव, आचार्य, शासकीय कला महाविद्यालय कोटा राजस्थान
dr21pramila@gmail.com
17. डॉ. जयशंकर शाही, आचार्य, अलवर राजस्थान
jayshankarshahi@gmail.com
18. डॉ.एन. पी. त्रिपाठी , सेवानिवृत्त आचार्य, रीवा मध्य प्रदेश
19. डॉ. राजेश भट्ट, एच. एन. बी. केंद्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखंड
rajeshbhatt11@gmail.com

Guide Lines

- **General:** English and Hindi Editions of Research Journal are published separately. Hence Research Papers can be sent in Hindi or English.
- **Manuscript of research paper:** It must be original and typed in double space on the one side of paper (A-4) and have a sufficient margin. Script should be checked before submission as there is no provision of sending proof. It must include Abstract,Keywords, Introduction, Methods, Analysis, Results and References. Hindi manuscripts must be in Devlys 010 or Kruti Dev 010 font, font size 14 and in double spacing. All the manuscripts should be in two copies and in Email also. Manuscripts should be in Microsoft word program. Authors are solely responsible for the factual accuracy of their contribution.
- **References :** References must be listed cited inside the paper and alphabetically in the order- Surname, Name, Year in bracket, Title, Name of book, Publisher, Place and Page number in the end of research paper as under- Shukla Akhilesh (2018) Criminology, Gayatri Publications, Rewa : Page 12.
- **Review System:** Every research paper will be reviewed by two members of peer review committee. The criteria used for acceptance of research papers are contemporary relevance, contribution to knowledge, clear and logical analysis, fairly good English or Hindi and sound methodology of research papers. The Editor reserves the right to reject any manuscript as unsuitable in topic, style or form without requesting external review.

लेखकों से निवेदन–

- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेज (ISSN-0973-3914) सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज की मुख्य शोध पत्रिका है, जो मानव संसाधन मंत्रालय तथा पंजीयक समाचार पत्र एवं पत्रिका, भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा पंजीकृत हैं।
- शोध पत्रिका उलरिच इन्टरनेशनल पीरियाडिकल्स डाइरेक्ट्री प्रोक्वेस्ट, संयुक्त राज्य अमेरिका से इंडेक्स्ड और लिस्टेड हैं।
- शोध पत्रिका का अंग्रेजी एवं हिन्दी संस्करण अलग–अलग प्रकाशित होता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेस का प्रकाशन प्रतिवर्ष मार्च, जून, सितंबर तथा दिसंबर में किया जाता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेस को इम्पैक्ट फैक्टर एवं आई.एस.एस.एन प्राप्त हैं। शोध पत्रिका Peer-Reviewed हैं।
- शोध पत्रिका के नवीनतम अंक में प्रकाशित शोध पत्रों को हमारी वेबसाइट www.researchjournal.in (Current Issue) में देखा जा सकता है तथा डाउनलोड किया जा सकता है।
- शोध पत्रिका का प्रिंट एडीशन सदस्यों को अलग से डाक द्वारा भेजा जाता है।
- शोध पत्र में शीर्षक, नाम, पद, पदस्थापना का विवरण, पत्र व्यवहार का पता तथा दूरभाष क्रमांक,
- मोबाइल नं., ई–मेल एड्रेस अवश्य दिया जाये।
- शोध पत्र के प्रारम्भ में कम से कम 50–100 शब्दों का सारांश दिया जाये।

- शोध पत्र में शोध पद्धति तथा शोध में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण किया जाना चाहिए।
- शोध पत्र में निष्कर्ष और अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची दी जाये। संदर्भ ग्रंथों का विवरण पूरा दिया जाये। लेखक का नाम, वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशक का विवरण, प्रकाशक का स्थान और पृष्ठ संख्या आदि का विवरण दिया जाना चाहिए।
- शोध पत्र माईक्रोसॉफ्ट वर्ड की फाइल में टाइप किया हुआ होना चाहिए। (नोट- पेज मेकर की फाइल, पी.डी.एफ. फाइल, स्कैन मैटर आदि में कदापि शोध पत्र न भेजें) शोध पत्र हिन्दी लिपि में कृतिदेव या देवलिस फांट 010 (फॉन्ट साइज 14, स्पेस डबल, मार्जिन ए-4 साईज के कागज में चारो तरफ 1 इंच) में भेजा जाना चाहिए।
- शोध पत्र के साथ यह घोषणा अवश्य संलग्न करें कि शोध पत्र मौलिक है तथा इसे कहीं अन्यत्र प्रकाशनार्थ प्रेषित नहीं किया गया है।

सर्वप्रथम शोध पत्र ई-मेल द्वारा भेजें-

- **researchjournal97@gmail.com,**
- **researchjournal.journal@gmail.com**
- शोध पत्र की स्वीकृति की सूचना सम्पादकीय कार्यालय द्वारा लेखक को ई-मेल एवं दूरभाष द्वारा प्रदान की जाती है।

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

एक अंक रुपये 500.00	-सदस्यता शुल्क -	
अवधि	व्यक्तिगत सदस्यता	संस्थागत सदस्यता
वर्ष एक	2000-00	2500-00
वर्ष दो	2500-00	4000-00

सदस्यता शुल्क की राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच-रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667 MICR Code 486002003) के खाता क्रमांक 30016445112 में जमा की जाय, नगद जमा की स्थिति में 75 रु. अतिरिक्त बैंक चार्ज जोड़ा जाय।

प्रकाशक: गायत्री पब्लिकेशन्स
रीवा- 486001 (म.प्र.)

मुद्रक: लीनेज ऑफसेट
रीवा (म.प्र.)

संपादकीय कार्यालय

186/1, विन्ध्य विहार कालोनी
रीवा- 486001 (म.प्र.)
E-mail- researchjournal97@gmail.com, researchjournal.journal@gmail.com
www.researchjournal.in

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के हैं, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र.) रहेगा।

सम्पादकीय

गुरु-शिष्य परंपरा भारत की संस्कृति का एक अभिन्न अंग है। परिवार बच्चे की प्रथम पाठशाला होती है और उसके प्रथम गुरु उसके मां और पिता होते हैं। किंतु जीवन जीने की कला सिखाने वाला तो गुरु ही होता है, शिष्य का असली सामाजीकरण तो गुरु ही करता है इसीलिए कहा गया है की गुरु से कपट मित्र से चोरी। या होई निर्धन या होई कोढ़ी। डॉ. राधाकृष्णन के जन्मदिन को एक उत्सव के रूप में मनाना हर भारतीय के लिए गौरव की बात है, किंतु समसामयिक परिप्रेक्ष्य में कहां आदरणीय राधाकृष्णन और कहां आज का शिक्षक। डॉ. राधाकृष्णन के दर्शन में पूरा विश्व एक विद्यालय था और शिक्षक के ऊपर विद्यार्थी को आत्मनिर्भर बनाने की जिम्मेदारी थी। वर्तमान समाज में आज चाहे वह स्कूल का शिक्षक हो या महाविद्यालय का या विश्वविद्यालय का, वह आज एक पढ़े-लिखे गुलाम की तरह अपना जीवन यापन कर रहा है और वर्तमान भौतिक युग में अपने को स्टेबल बनाए रखने के लिए हर संभव प्रयास कर रहा है, चाहे विद्यालय के शिक्षक हो या और अन्य किसी प्रजाति का शिक्षक। प्रबंधन, प्रशासन और राजनेता के नीचे अधिकांश को नतमस्तक कर दिया गया है।

राधाकृष्णन के जन्मदिन को मनाने के पीछे शायद यह उद्देश्य रहा होगा कि इससे शिक्षकों का सम्मान होगा। पहले शिक्षक विषय के साथ - साथ जीवन मूल्यों का भी प्रशिक्षण अपने विद्यार्थियों को दिया करता था। आज शिक्षक एक क्लर्क हो गया है। चुनावों में या शासन की किसी भी गणना कार्य में उसे एक इकाई के रूप में देखा जाता है, बिना शिक्षक के कोई गणना हो ही नहीं सकती है, चाहे वह इंसान की हो या जानवरों की। राधाकृष्णन की नजर में शिक्षक के जो कर्तव्य थे, वह आज बदल गए, आज जीवन मूल्यों की जगह गणना ने स्थान ले लिया है।

आज शिक्षा उद्योग में परिवर्तित हो गई है और उद्योग, प्रबंधन एवं उपभोक्ता का जो संबंध होता है, वह किसी से छिपा नहीं है। आज शिक्षक को एक सेल्समैन बना दिया गया है, वह अपनी कला और अपने पाठ्यक्रम को बाजार में बेचने का प्रयास कर रहा है। यहां दोष किसी एक का नहीं है वरन संपूर्ण परिप्रेक्ष्य में पूरे समाज का है। आज शिक्षक के मूल्यांकन का आधार यह हो गया है कि उसकी कक्षा के विद्यार्थी कितना अधिक नंबर लाते हैं, सामाजिक मूल्य, नैतिक मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य का कहीं ऑकलन नहीं है। अगर शिक्षक के विद्यार्थी इन सब मूल्यों को छोड़कर शत- प्रतिशत अंक ले आते हैं तो शिक्षक का सी. आर. उत्कृष्ट है, अब आप तय करिए की मूल्य जरूरी है, की शत- प्रतिशत अंक।

आज बात तो अनुशासन की की जाती है। शिक्षक बच्चों को डांट नहीं सकता है। अपनी कक्षा में खड़ा नहीं कर सकता है। बिना प्रशासन की अनुमति के कोई नवोन्मेष प्रयोग नहीं कर सकता है, अगर करता है, तो शिकायत में उसकी जांच हो जाएगी, उसका निलंबन तय है। जांच में दोष सिद्ध हुए बिना उसे मीडिया ट्रायल से भी गुजरना पड़ेगा। जांच में उसे अपनी प्रामाणिकता अपने सत्य और अपने मूल्य को सिद्ध करने के लिए अग्नि परीक्षा देनी पड़ती है, इसलिए आज शिक्षक भी एक स्वचालित मशीन हो

के लिए अग्नि परीक्षा देनी पड़ती है, इसलिए आज शिक्षक भी एक स्वचालित मशीन हो गया है और समाज का जो विघटन हो रहा है, उसका मूल कारण भी यही है। लोग कहते हैं कि शिक्षक भविष्य का निर्माता है, जब आपने उसे एक स्वचालित मशीन बना दिया तो वह भविष्य के वीरांगनाओं को कैसे पैदा कर सकता है, यह एक समाज के सामने यक्ष प्रश्न है? आज ब्यूरोक्रेट्स और नौकरशाही यह तय कर हैं कि शिक्षक को किस दिशा में आगे जाना है, जो शिक्षक समाज को दिशा देता था, आज लोग उसे दिशा देने लगे हैं।

वर्तमान समसामयिक भौतिकवादी समाज में कुछ शिक्षक व्यवसायिक प्रवृत्ति को अपनाते हुए अपने ज्ञान की बोली लगाने लगे हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखें तो गुरु-शिष्य की परंपरा क्षीण होती जा रही है। जबकि वर्तमान संक्रमणकारी समय मे शिक्षक का दायित्व अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गया है, किंतु दूसरी तरफ प्रशासकीय व्यवस्था में वह अकेले शासकीय कर्मचारी जैसा बन कर रह गया है, जबकि आवश्यकता है इसे व्यापक बनाने की है। समाज और प्रशासकीय तंत्र को अपने सोचने के नजरिए में व्यापकता का समावेश करना चाहिए। माना जाता है कि यदि शिक्षक नही होता तो शिक्षा की कल्पना भी नही की जा सकती थी। शिक्षा की आधारशिला शिक्षक के द्वारा ही रखी जाती है। इसीलिए शिक्षक के स्वरूप में ईश्वर की कल्पना गई "गुरु ब्रह्म गुरु विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः गुरु साक्षात पर ब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः" इस श्लोक में गुरु की तुलना ब्रह्म से की गई है।

(प्रोफेसर ब्रजगोपाल)
प्रधान संपादक

डॉ. अखिलेश शुक्ल
सम्पादक

अनुक्रमणिका

01 उदीयमान जातीय-प्रतिमानों में दलित महिला सशक्तिकरण की भूमिका 09
अखिलेश शुक्ल
राजेश कुमार दुबे

02 समता और समरसता के मूल्यों का विकास : 16
समग्र विकास के लिये शिक्षा के सम्मुख प्रमुख चुनौती
सुनील कुमार उपाध्याय

03 साम्प्रतिक संदर्भ में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम : आवश्यकताएं एवं चुनौतियाँ 30
रवि कान्त कुमार
सुनीता कुमारी

04 सहरसा जिला में प्राथमिक विद्यालय के मुसहर समुदाय के 38
बच्चों में पोषणीय स्थिति पर मध्याह्न भोजन का प्रभाव
माधुरी कुमारी

05 पर्वतीय क्षेत्रों में निवासरत युवाओं में साइबर अपराध के प्रति जागरूकता का 42
अध्ययन 'पौड़ी गढ़वाल जिले के विशेष सन्दर्भ में'
आरूशी

06 अपराध नियंत्रण में शिक्षा का योगदान 52
सीमा कुमारी
मोनी शुक्ला

07 साम्प्रतिक सन्दर्भ में महिला सशक्तीकरण योजनाओं की चुनौतियाँ 56
'देहरादून नगर स्थित मलिन बस्ती के विशेष संदर्भ में'
जयश्री थपलिया
भावना मिश्रा

08 स्वच्छता अभियान में नागरिकों की जागरुकता तथा सामाजिक संगठनों की 66
भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)
अखिलेश शुक्ल
शिवबिहारी कुशवाहा

09 ग्रामीण से नगरीय प्रवास को नियंत्रित करने में ग्रामीण सेवा केन्द्रों की भूमिका: 73
पटना जिला के बहरामपुर गाँव का एक सूक्ष्मस्तरीय अध्ययन
विवेक कुमार

10 जीवन बीमा नियमन ,नियंत्रण कानून एवं शिकायत निवारण 82
महेश शर्मा
मोनिका सिंघल
डी.के सिंघल

11 आत्मनिर्भर भारत अभियान में एम.एस.एम.ई. का योगदान 88
कुमुद श्रीवास्तव

12 प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना का ग्रामीण विकास में योगदान 92
सिद्धार्थ मिश्रा
विनोद शंकर सिंह

13 बिहार में महिला सशक्तिकरण के प्रयास 96
उपेन्द्र प्रसाद
14 नगरीय भारत में उदीयमान जातीय-प्रतिमानः 104
(इलाहाबाद/प्रयागराज नगर के दलित बाहुल्य क्षेत्र के सन्दर्भ में)
अखिलेश शुक्ल
राजेश कुमार दुबे
15 भारतीय राजनीति में सांप्रदायिकता की भूमिका 112
प्रदीप कुमार
16 अम्बेडकर का धर्म दर्शन विषयक विमर्श 117
नरेन्द्र कुमार बौद्ध
17 प्राचीन भारतीय इतिहास में दूत द्वारा किये गये कार्यों का अध्ययन 126
संतोष कुमार 'सुमन'
18 हिन्दू-मुस्लिम एकता में मुहम्मद अली जिन्ना की भूमिका (1922-35) 129
स्मिता कुमारी
19 गुप्तों के काल में सूर्य-पूजा एवं शैव-धर्म का विकास : 141
एक ऐतिहासिक विमर्श
अमोल कुमार
20 गोदान की प्रासंगिकता 146
पंकज कुमार झा
21 स्त्री विमर्श के आईने में मन्नू भण्डारी के उपन्यासों में वैवाहिक दृष्टिकोण 153
राजेश कुमार सिंह
22 प्रतिभा के धनी "नन्दलाल बोस" का नारी चित्रण 158
निशा गुप्ता
23 अध्यात्म शक्ति के द्वारा त्रिविध दुःखों का निवारण 162
प्रत्यूश वत्सला द्विवेदी
24 समस्तीपुर जिला के ताजपुर प्रखण्ड का शस्य प्रतिरूप और उत्पादकता : 168
एक भौगोलिक अध्ययन
विभा रानी
25 कोरोना वायरस-एक महामारी 175
मंजरी अवस्थी
26 पर्यावरण और संस्कृति पर कोविड-19 का प्रभाव 180
दलीप सिंह
26 कोरोना संकट,कृषि और श्रमिक 185
नीरज कुमार राय

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

उदीयमान जातीय-प्रतिमानों में दलित महिला सशक्तिकरण की भूमिका

• अखिलेश शुक्ल
•• राजेश कुमार दुबे

सारांश – किसी राष्ट्र एवं समाज के सामाजिक-आर्थिक विकास की संकल्पना महिला विकास के बिना सम्भव नहीं है। दलित महिला सशक्तिकरण महिला विकास की तार्किक परिणति है। भारतीय संविधान के विभिन्न उपबन्धों, पंचायती राज प्रणाली व नगरी निकाय, जेन्डर बजटिंग संकल्पना, विभिन्न सरकारी आयोजनाओं, राष्ट्रीय महिला आयोग, मानवाधिकार आयोग, सरकारी एवं गैर सरकारी प्रयासों के परिणाम स्वरूप दलित महिला सशक्तिकरण में उत्साहजनक परिणाम देखने को मिल रहे हैं। यद्यपि अब भी कुछ अन्य क्षेत्रों में सुधार की आवश्यकता है। नगरीय भारत के उदीयमान जातीय-प्रतिमानों के संदर्भ में दलित महिला सशक्तिकरण की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। महिला सशक्तिकरण के परिणाम स्वरूप यद्यपि जातीय चेतना में वृद्धि आयी है, किन्तु जाति-व्यवस्था (जातीय बंधन) शिथिल हुए हैं। समाज में अन्तर्जातीय विवाहों एवं अन्तर्धार्मिक विवाहों का प्रचलन बढ़ा है। आज शिक्षा व प्रशासन के क्षेत्र में दलित महिलाएं आगे आयी हैं तथा राजनैतिक क्षेत्रों में बढ़-चढ़कर भूमिका का निष्पादन सफलता पूर्वक कर रही हैं। दलित महिला आज विभिन्न औद्योगिक संस्थानों के उच्च पद पर आसीन होती दिख रही हैं। आज दलित महिलाएं देश के सामाजिक-आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। दलित महिला सशक्तिकरण के परिणाम स्वरूप ही नगरीय भारत में उदीयमान जातीय-प्रतिमानों के रूप में – उच्च जाति के लड़के-लड़कियों निम्न जातियों से वैवाहिक सम्बन्धों की अनदेखी कर रहे हैं तथा उनको किसी भी प्रकार का सामाजिक प्रतिरोध नहीं दिख रहा है। मंदिर के धार्मिक कार्यों में दलित महिलाएं भी देखने को मिल रही हैं। दलित महिला सशक्तिकरण के परिणामस्वरूप जातीय पंचायतों के प्रभाव में कमी आयी है। आज दलित महिला आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक इत्यादि क्षेत्रों में काफी आगे आकर देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती दिख रही हैं।

मुख्य शब्द- **उदीयमान जातीय- प्रतिमान, सशक्तिकरण, सामाजिक-आर्थिक विकास**

किसी देश के समग्र विकास के लिए महिला और पुरूष दोनों का समान गति एवं निर्वाध रूप से उन्नति के पद पर अग्रसर होना आवश्यक है। महिलाएं समाज के अभिन्न अंग हैं। अतः सामाजिक-आर्थिक विकास की संकल्पना बिना महिला सहभागिता के अधूरी रह जाती है। किसी समाज या राष्ट्र के विकास में महिलाओं का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उल्लेखनीय योगदान होता है। सभ्यता की आत्मा को समझना तथा उसकी उपलब्धियों व श्रेष्ठता का मूल्यांकन का सर्वोत्तम आधार स्त्रियों की स्थिति का अध्ययन करना है।

● प्राध्यापक,समाजशास्त्र,शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय,रीवा (म.प्र.)
●● शोध छात्र, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय,रीवा (म.प्र.)

महिलाएं समाज का अभिन्न अंग हैं। अत: सामाजिक-आर्थिक, विकास की संकल्पना महिला विकास के बिना संभव नहीं है। महिलाओं के विकास को प्राथमिकता देते हुए पं. जवाहर लाल नेहरू का मानना था कि "यदि आपको विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना होगा। महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वत: हो जायेगा। एक स्वस्थ व सभ्य राष्ट्र का निर्माण तभी सम्भव है, जब उस राष्ट्र की महिलाएं स्वस्थ, संस्कारित, शिक्षित व मानसिक रूप से सुदृढ़ हों।"

महिला सशक्तिकरण का आशय – महिलाओं को सक्षम व सामर्थ्यवान बनाने से है। दलित महिला सशक्तिकरण को आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक असमानताओं से उत्पन्न समस्याओं एवं रिक्तियों से निपटने के प्रभावी उपाय के रूप में देखा जा सकता है। महिला सशक्तिकरण महिला विकास की तार्किक परिणति है। महिला विकास के कारण महिलाओं के स्वतंत्र व्यक्तित्व का विकास हुआ। वर्ष 2001 में राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण नीति की घोषणा की गई। जिसका उद्देश्य सामाजिक-आर्थिक नीतियों से महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाना, उनके अधिकारों की रक्षा करना, निर्णय प्रक्रिया तक उनकी पहुंच को सुनिश्चित करना तथा महिलाओं के अनुकूल संस्थागत समर्थन प्रणाली को समर्थ बनाना था। इसी उद्देश्य हेतु जेन्डर बजटिंग की संकल्पना पर बल दिया गया जो सरकार के विभिन्न मंत्रालयों व विभागों द्वारा आवंटित राशि को इस प्रकार से व्यय सुनिश्चित करना था, जिससे 1/3 अनुपात में उनके लाभों को महिलाओं के लिए सुनिश्चित किया जा सकें। महिला आरक्षण महिला सशक्तिकरण का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। संविधान का अनुच्छेद 15(3) यह उपबंध करता है कि राज्य अगर चाहे तो महिलाओं एवं बच्चों के विकास के लिए विशेष उपबंध कर सकता है। इसी के आलोक में 73वें एवं 74वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थानों और नगरीय पालिकाओं को वैधानिक स्वरूप प्रदान किया गया तथा महिला को 1/3 आरक्षण प्रदान किया गया। महिला सशक्तिकरण के लिए सरकार इस दिशा में निरन्तर कदम आगे बढ़ा रही है। 08 मार्च, 2010 को राष्ट्रपति द्वारा महिला सशक्तिकरण हेतु राष्ट्रीय मिशन का शुभारम्भ किया गया, जो महिला सशक्तिकरण हेतु संस्थागत रूपरेखा तैयार करने में सहायक साबित हो रहा है। रोजगार के गारण्टी अभियान के रूप में 'मनरेगा' के तहत भी महिलाओं का ध्यान रखते हुए 50 प्रतिशत आरक्षण दिया गया। सरकार की सबला तथा इन्दिरा गांधी मातृत्व सहयोग योजना महिला सशक्तिकरण की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि एक कल्याणकारी राष्ट्र के रूप में समाज के सभी वर्गों विशेषकर पिछड़े व निर्धनों का चहुमुखी विकास करना राष्ट्र का उत्तरदायित्व है। सबको न्याय, समानता तथा समान अवसरों का अधिकार दिया जाय।

भारत का संविधान दलित महिला सशक्तिकरण हेतु शैक्षणिक व आर्थिक उत्थान करने तथा दलितों की सामाजिक-धार्मिक निर्योग्यताओं को दूर करने हेतु आवश्यक सुरक्षा व संरक्षण प्रदान करता है जो कि निम्नवत् है –

- दलितों के शैक्षिक व आर्थिक हितों को प्रोत्साहन और सभी प्रकार के शोषण व सामाजिक अन्यायों से उनका संरक्षण हो।
- अस्पृश्यता उन्मूलन तथा इसके किसी भी रूप में प्रचलन पर रोक।
- हिन्दुओं के सार्वजनिक-धार्मिक स्थलों को कानूनी रूप से सभी जातियों व वर्गों के

हिन्दुओं के लिए खोलना।

- दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों, मनोरंजन स्थलों, कुओं, तालाबों, घाटों, सड़कों, सरकार धन से पूरी तरह या आंशिक रूप से संरक्षित किसी भी स्थान या सार्वजनिक स्थल के उपभोग सम्बन्धी सभी अयोग्यताओं, उत्तरदायित्व, रूकावटों और शर्तों को समाप्त करना।
- दलितों के संरक्षण हेतु आम नागरिकों के भारत के किसी भी स्थान पर आने-जाने, रहने-बसने तथा सम्पत्ति खरीदने बेचने सम्बन्धी अधिकारों पर उचित प्रतिबंध लगाने की कानूनी व्यवस्था।
- सरकार द्वारा संचालित अथवा सरकारी खजाने से संचालित शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश सम्बन्धी प्रतिबंधों को समाप्त करना।
- लोकसभा, राज्यसभा तथा राज्यों की विधानसभाओं में दलित जातियों एवं जनजातियों के लिए विशेष प्रतिनिधित्व की व्यवस्था करना।
- राज्य के सरकारी नौकरियों में दलितों व जनजातियों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व देने तथा इस सम्बन्ध में उनके दावों पर विचार करने का अधिकार प्रदान करना।
- दलितों तथा जनजातीय क्षेत्रों के प्रशासन तथा नियंत्रण हेतु विशेष व्यवस्था।
- उनके कल्याण और हितों की रक्षा करने के लिए राज्यों में जनजातीय सलाहकर परिषदों तथा अलग विभागों की स्थापना और केन्द्र में विशेष अधिकारी की नियुक्ति।
- 65वें संविधान संशोधन अधिनियम 1990 के अनुच्छेद 338 के अन्तर्गत नियुक्त किये जाने वाले विशेष अधिकारी के स्थान पर राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति आयोग की स्थापना।
- मनुष्य के व्यापार तथा उनके जबरन मजदूरी कराने पर प्रतिबन्ध लगाना।

अध्ययन पद्धति एवं शोध उपकरण - शोधकर्ता वर्णनात्मक शोध के अन्तर्गत नगरीय भारत में उदीयमान जातीय-प्रतिमानों के अध्ययन क्षेत्र के लिए प्रयागराज नगर के दलित बाहुल्य क्षेत्र - सादियाबाद, स्वराजनगर, सराय लाला एवं चाँदपुर सलोरी - का चुनाव किया है। ये क्षेत्र अति दलित, शोषित एवं उपेक्षित रहे हैं। क्षेत्र निर्धारण में शोधकर्ता वहां रहकर सामाजिक व्यवहार के विभिन्न पक्षों के अति सूक्ष्म अध्ययन के आधार पर किया है। गहन सहभागी अवलोकन के आधार पर न्यादर्श विधि से 300 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। उत्तरदाताओं के चयन में परिवार के मुखिया के चयन को वरीयता दिया है। क्षेत्र से उत्तरदाताओं के चयन हेतु दैव निदर्शन विधि पर विशेष ध्यान दिया गया है। 300 उत्तरदाताओं का सहभागी अवलोकन द्वारा गहन साक्षात्कार किया गया। सामग्री संकलन के मुख्य स्रोत साक्षात्कार एवं अवलोकन है। गौण स्रोत के अंतर्गत विभिन्न दस्तावेजो, जैसे - प्रतिवेदन, अभिलेख, फाइले, डायरिया इत्यादि से सूचनाएं एकत्रित की गई है। अवलोकन पद्धति में सहभागिता पर यथोचित ध्यान दिया गया है। तथ्य संकलन में उपकरण के रूप में साक्षात्कार अनुसूची[7] का प्रयोग किया गया है। उत्तरदाताओं के सामाजिक व्यवहारों एवं अभिमतों से सम्बन्धित तथ्यों को जानने हेतु 300 उत्तरदाताओं का साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से गहन सर्वेक्षण किया गया है। तथ्य संकलन में सहभागी एवं अर्द्ध सहभागी निरीक्षण

दोनों पर बल दिया गया है। शोधक शोध क्षेत्र में लगभग एक वर्ष तक क्षेत्र कार्य के उपरान्त तथ्यों का संकलन किया। तथ्य संकलन में निरीक्षण एवं साक्षात्कार विधियों के साथ-साथ एकल अध्ययन पद्धति पर भी ध्यान बनाए रखने का प्रयास किया है। प्रस्तुत शोध पत्र में 300 उत्तरदाताओं का चयन उद्देश्य पूर्ण निदर्शन प्रणाली के माध्यम से किया गया। सामान्य जाति की 78 उत्तरदाता, पिछड़ी जाति की 64 उत्तरदाता, अनुसूचित जाति की 128 उत्तरदाता तथा अन्य वर्ग की 30 उत्तरदाताओं को इस अध्ययन में शामिल किया गया। साक्षात्कार हेतु साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण किया गया।

तथ्य संकलन, वर्गीकरण एवं विश्लेषण - तथ्यों का विश्लेषण निम्नलिखित तालिकाओं में किया जा रहा है।

तालिका संख्या- 01

क्या आर्थिक सम्पन्नता में वृद्धि हो जाने से दलित महिला की सामाजिक परिस्थिति में सुधार आया है ?

क्र.सं.	जाति परिवर्त्य	उत्तरदाता की संख्या		कुल
		हां	नहीं	
1	सामान्य जाति	52	26	78
2	पिछड़ी जाति	38	26	64
3	अनुसूचित जाति	78	50	128
4	अन्य	18	12	30
	योग	186	114	300

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि कुल 300 उत्तरदाताओं में 186 उत्तरदाताओं ने हां में तथा 114 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। अनुसूचित जाति के सर्वाधिक 78 उत्तरदाताओं ने हां में तथा अनुसूचित जाति के ही सर्वाधिक 50 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। पंचायती राज व्यवस्था, नगरीय निकाय, वयस्क मताधिकार, संवैधानिक प्रावधानों, विभिन्न सरकारी योजनाओं, मनरेगा, बढ़ते शिक्षा के स्तर, सरकारी एवं गैर सरकारी नौकरियों में उच्च पदों पर आसीन होने के कारण आज दलित महिला की सामाजिक प्रस्थिति में सुधार आया है।

तालिका 02

क्या दलित एवं अछूतों की जीवन प्रवृत्तियों में सुधार आया है ?

क्र.सं.	जाति परिवर्त्य	उत्तरदाता की संख्या		कुल
		हां	नहीं	
1	सामान्य जाति	30	48	78
2	पिछड़ी जाति	42	22	64
3	अनुसूचित जाति	93	35	128
4	अन्य	15	15	30
	योग	180	120	300

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि कुल 300 उत्तरदाताओं में 157 उत्तरदाताओं ने हां में तथा 143 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। अनुसूचित जाति में सर्वाधिक 78 उत्तरदाताओं ने हां में तथा अनुसूचित जाति में ही सर्वाधिक 50 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। धार्मिक एवं सामाजिक सुधार आन्दोलनों, शिक्षा के महत्व,

वैज्ञानिक दृष्टिकोण, विभिन्न सामाजिक आन्दोलनों के परिणाम स्वरूप दलितों एवं अछूतों की जीवन प्रवृत्तियों में सुधार आया है।

तालिका 03

क्या दलित महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि देखने को मिली है?

क्र.सं.	जाति परिवित्र्य	उत्तरदाता की संख्या		कुल
		हां	नहीं	
1	सामान्य जाति	48	30	78
2	पिछड़ी जाति	34	30	64
3	अनुसूचित जाति	74	54	128
4	अन्य	14	16	30
	योग	170	130	300

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि कुल 300 उत्तरदाताओं में 190 उत्तरदाताओं ने हां में तथा 110 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। अनुसूचित जाति के सर्वाधिक 84 उत्तरदाताओं ने हां में तथा अनुसूचित जाति के ही सर्वाधिक 44 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। संचार व आवागमन के साधनों के विकास, सूचना तकनीकी तंत्र, आधुनिकीकरण, लौकिकीकरण, बढ़ते शिक्षा के स्तर, औद्योगिकरण व नगरीकरण इत्यादि कारकों के फलस्वरूप दलित महिलाओं में सामाजिक गतिशीलता की मात्रा में वृद्धि देखने को मिली है।

तालिका 04

क्या दलित महिला सशक्तिकरण में वृद्धि देखने को मिल रही है ?

क्र.सं.	जाति परिवित्र्य	उत्तरदाता की संख्या		कुल
		हां	नहीं	
1	सामान्य जाति	32	46	78
2	पिछड़ी जाति	34	30	64
3	अनुसूचित जाति	78	50	128
4	अन्य	12	18	30
	योग	156	144	300

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि कुल 300 उत्तरदाताओं में 190 उत्तरदाताओं ने हां में तथा 110 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। अनुसूचित जाति में सर्वाधिक 82 उत्तरदाताओं ने हां में तथा अनुसूचित जाति में ही सर्वाधिक 46 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। शिक्षा एवं संचार के साधनों, बढ़ते साक्षरता दर, विभिन्न सरकारी योजनाओं, संवैधानिक प्रावधानों, पंचायती राज व्यवस्था, व्यक्तिगत जीवन में बढ़ते आर्थिक संसाधनों के महत्व इत्यादि के फलस्वरूप दलित महिलाएं सशक्त हुई हैं। इनके सशक्तिकरण में शिक्षा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

तालिका 05

क्या पंचायती राज अधिनियम एवं नगरीय विकास अधिनियम के लागू होने से दलित महिलाओं की स्थिति में सुधार आया है ?

क्र.सं.	जाति परिवर्त्य	उत्तरदाता की संख्या		कुल
		हां	नहीं	
1	सामान्य जाति	40	38	78
2	पिछड़ी जाति	37	27	64
3	अनुसूचित जाति	82	46	128
4	अन्य	17	13	30
	योग	176	124	300

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि कुल 300 उत्तरदाताओं में 193 उत्तरदाताओं ने हां में तथा 107 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। अनुसूचित जाति के सर्वाधिक 84 उत्तरदाताओं ने हां में तथा अनुसूचित जाति के ही सर्वाधिक 44 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। मनरेगा, पंचायती राजव्यवस्था, स्वच्छ भारत अभियान, विभिन्न सरकारी योजनाओं एवं शिक्षा के स्तर में सुधार के फलस्वरूप दलित महिलाओं की स्थित में आज सुधार आया है।

सरकारी एवं गैर-सरकारी प्रयासों के परिणाम स्वरूप आज दलित महिला सशक्तिकरण की चेतना में काफी वृद्धि देखने को मिल रही है। मानवाधिकार आयोग व राष्ट्रीय महिला आयोग भी दलित महिला सशक्तिकरण की दिशा में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आज शैक्षणिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में इनकी सहभागिता में वृद्धि देखने को मिल रही है, जिसके परिणामस्वरूप नगरीय भारत में कतिपय नये जातीय-प्रतिमानों का उदय होता दिख रहा है, जैसे- शिक्षा व प्रशासन के क्षेत्र में दलित महिला का आगे आना, राजनैतिक चुनावों में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेना, अर्न्तजातीय व अर्न्तधार्मिक विवाहों को करना, व्यवसायिक संगठनों में उच्च पदों पर आसीन होना। दलित महिलाओं में सामाजिक व सांस्कृतिक चेतना का संचार हुआ। शिक्षा के द्वारा ये आत्मनिर्भर हुई। इनके अन्दर सामाजिक गतिशीलता बढ़ी तथा राजनैतिक व प्रशासनिक क्षेत्र में इनकी सहभागिता बढ़ी। पंचायतीराज व्यवस्था, वयस्क मताधिकार, वैज्ञानिक एवं औद्योगिक उन्नति, व्यवसायों की बहुलता व विजातीयता, विभिन्न महिला आन्दोलनों, नवीन संवैधानिक प्रावधानों व कानूनों के कारण दलित महिला का विकास होने के फलस्वरूप इनमें स्वतंत्र व्यक्तित्व का विकास हुआ तथा सशक्तिकरण आया। वस्तुतः महिला सशक्तिकरण महिला विकास की तार्किक परिणति बनी है। दलित महिला सशक्तिकरण के कारण जातीय संरचना एवं जातीय प्रकार्य में परिवर्तन आया, जिसके फलस्वरूप नगरीय भारत में उदीयमान जातीय प्रतिमान दृष्टिगोचर हुए है। दलित महिला सशक्तिकरण को और अधिक मजबूत बनाने हेतु कुछ सुझाव अपेक्षित है -

- नये स्कूल-कालेजों की स्थापना दलित बस्तियों में हो।
- आवासीय कन्या विद्यालयों वहां होना चाहिए, जहाँ महिला शिक्षक ही हो।
- प्राथमिक शिक्षा, मिडिल शिक्षा व माध्यमिक शिक्षा पर बल दिया जाय।
- शिक्षा को व्यवसाय से जोड़ा जाए।

- अगर आवासीय विद्यालय सम्भव न हो तो स्कूल यूनिफार्म, फीस, खान-पान इत्यादि की व्यवस्था मुफ्त हो।
- लड़की को छोटे भाई-बहनों को पालने की जिम्मेदारी से मुक्त रखते हुये स्कूलों में ही क्रेच आदि की व्यवस्था हो।
- 10वीं पास करते ही दलित महिला को रोजगार की गारण्टी दिया जाय अथवा व्यवसायिक पाठ्यक्रमों में प्रवेश हेतु उसे प्राथमिकता के साथ-साथ कोटा भी निर्धारित हो।
- कुल महिला आरक्षण में दलित महिला का आरक्षण अलग से निर्धारित किया जाय। स्वास्थ व बीमा की व्यवस्था हो।
- वयस्क दलित महिला को विशेष प्रशिक्षण के साथ-साथ उसकी आमदनी को बढ़ाने हेतु काम-धन्धों की व्यवस्था तथा वजीफा की व्यवस्था हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. नेहरू, जवाहर लाल, सामुदायिक विकास एवं पंचायती राज, सस्ता साहित्य मण्डल, 1965, इलाहाबाद।
2. सिंह, वीना : मानवाधिकार: भारत में महिलाएं, बच्चे एवं अलग प्रकार से असक्षम लोग, हरिलीला पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
3. पाण्डेय, जे.एन., भारत का संविधान, इलाहाबाद।
4. जैन, एस.एन., भारतीय संविधान: शासन और राजनीति, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
5. बेयर एक्अ (2013), भारतीय संविधान, इलाहाबाद लॉ पब्लिकेशन
6. यंग, पी.वी., साइटिफिक, सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बाम्बे।
7. गुडे, विलियम जे. एवं हाट पाल के., मेथड्स इल सोशल रिसर्च, मैग्रेहिल बुक कम्पनी इंक, न्यूयार्क।
8. शुक्ला, माधवी : स्त्रियों में मानवाधिकार।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

समता और समरसता के मूल्यों का विकास : समग्र विकास के लिये शिक्षा के सम्मुख प्रमुख चुनौती

● सुनील कुमार उपाध्याय

हमारे सामने आज सबसे बड़ी चुनौती समरसता के साथ समता मूलक समाज की स्थापना है, बिना इसके समग्र विकास की संकल्पना सम्भव नहीं। लेकिन आज विषमता दूर करने के प्रयास वैमनस्यता बढ़ाने के साधन साबित होते जा रहे हैं। आज शिक्षा के सम्मुख सबसे बड़ी चुनौती है कि समाज में समरसता के साथ समता की स्थापना कर समग्र विकास की संकल्पना को साकार करे। लेकिन क्या शिक्षा समग्र विकास की इन चुनौतियों का समाधान खोज पा रही है? यदि नहीं तो शिक्षा को इसके पीछे के कारणों को भी खोजना होगा और समाधान भी। आशा है कि हमारी शिक्षा व्यवस्था इतिहास बोध कराते हुये रास्ते की तमाम बाधाओं को पार कर समता और समरसता के मूल्यों के साथ-साथ विकास के दायित्व का निर्वहन करते हुए समग्र विकास की संकल्पना की ओर आगे बढ़ेगी।

मुख्य शब्द - समग्र विकास, समता, समरसता, शिक्षा।

किसी भी सभ्य समाज की संकल्पना शिक्षा के बिना सम्भव नहीं। किसी भी व्यक्ति या समाज के विकास में शिक्षा की भूमिका प्रश्नों से परे है, बल्कि प्रश्न तो यह है कि क्या शिक्षा समग्र विकास की चुनौतियों का समाधान खोज पा रही है? क्या इस शैक्षिक व्यवस्था से हर बच्चे के पास अपनी योग्यता के अनुरूप विकास के अवसर उपलब्ध हैं? और यदि ये अवसर उपलब्ध नहीं हैं तो फिर हमें विचार करना होगा कि इतने वर्षों के बाद भी हम अपने संवैधानिक आदर्शों को प्राप्त करने में क्यों असफल साबित हुए? स्वतंत्रता और समता के लोकतान्त्रिक मूल्यों को अपने समाज में क्यों नहीं स्थापित कर पाये? जब तक हम समता मूलक समाज की स्थापना नहीं कर पायेंगे तब तक समाज में समरसता भी स्थापित नहीं हो पायेगी और ऐसी स्थिति में समग्र विकास की संकल्पना हमारे लिए स्वप्न ही बनी रह जायेगी।

आज हमारे सामने शायद सबसे बड़ी चुनौती समता मूलक समाज की स्थापना है, लेकिन इसके साथ ही एक और बड़ी चुनौती जो आज ज्यादा भयावह रूप में सामने आ रही है वह यह कि विषमता दूर करने के प्रयास कई बार वैमनस्यता बढ़ाने के साधन भी साबित होते जा रहे हैं। ऐसा नहीं कि हमने इसके लिए प्रयास न किया हो, गांधी, नेहरू, जय प्रकाश, लोहिया और पूरा समाजवादी आन्दोलन हमेशा से इस बारे में प्रयत्नशील रहा। लेकिन वर्ग संघर्ष की बजाय भूदान जैसे आन्दोलन और लोकतान्त्रिक प्रयासों से, स्वतंत्रता और समता के बीच सामंजस्य स्थापित करते हुए, राष्ट्रवाद और समाजवाद को बिना एक दूसरे का विरोधी बनाये, बिना धार्मिक आस्थाओं पर प्रहार किये समरसता के साथ समता के आदर्शों को प्राप्त करने हेतु हम प्रयत्नशील रहे। भारतीय समाजवादी आन्दोलन का तो पूरा दर्शन ही

● एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षक-शिक्षा विभाग, डी.बी.एस. कॉलेज,कानपुर

वैमनस्यता बढ़ाये बिना विषमता दूर करने का रहा है। राष्ट्रीयता और समाजवाद दोनों से हमारी पीढ़ियाँ प्रेरणा प्राप्त करती रही हैं। लेकिन क्या आज समता की ओर बढ़ते हमारे कदम वैमनस्यता दूर करने की जगह इसे बढ़ाने के कारण साबित नहीं हो रहे? आज शिक्षित, समृद्ध वर्ग क्या जाति और नस्ल की विभेदकारी अलोकतांत्रिक सोच को बढ़ाने में अपनी शिक्षा की सार्थकता नहीं देख रहा ? शिक्षा और लोकतंत्र एक दूसरे की जरूरत हैं। लेकिन हमारी शिक्षा न तो लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना कर पा रही है और न ही लोकतंत्र शिक्षा को सही दिशा दे पा रहा। आज शिक्षा के सम्मुख सबसे बड़ी चुनौती है कि किस तरह समरसता के साथ समतामूलक समाज की स्थापना करे।

आखिर वह देश जहाँ अहं ब्रह्मस्मि, तत्व मसि, सर्व खाल्विदं ब्रह्मम्, वसुैधैव कुटुम्बकम, सर्वे भवन्तु सुखिनः शताब्दियों से गूँजते रहे हों, समाज के अन्तिम छोर पर खड़े व्यक्ति को शंकराचार्य द्वारा अपना गुरू स्वीकार करना पड़ा हो[1], वहाँ समानता और समरसता कैसे एक बड़ी चुनौती बनी? शिक्षा को इन कारणों को भी खोजना होगा और समाधान भी।

आखिर कौन से ऐसे कारण थे कि आजादी के बाद भी हमने अपनी शिक्षा में मैकालियन व्यवस्था का अपनाये रखा? क्या आजाद भारत में शिक्षा के वहीं उद्देश्य थे जो ब्रिटिश भारत में थे? क्या ब्रिटिश सरकार का उद्देश्य समता और समरसता की स्थापना थी? इस बारे में कोई दो राय नहीं कि ब्रिटिश सरकार का उद्देश्य भारत को जाति, नस्ल, धर्म, भाषा के आधार पर विभाजित कर अपने हितों का संरक्षण करना रहा और इसके लिए उन्होंने साहित्य और शिक्षा को साधन बनाया और हम अपनी पीढ़ियों को इसी साहित्य को बताकर गर्व की अनुभूति करते रहे। आश्चर्य की बात तो यह कि हम अपने प्राचीन ग्रन्थों को भी इनके अनुवाद और व्याख्याओं के माध्मय से पढ़ उनकी दृष्टि से भारत और भारत की समस्याओं को समझते रहे।

यह कहना तो उचित नहीं होगा कि भारत में पहले इस तरह की समस्यायें नहीं रही पर सारी समस्याओं को जाति, नस्ल, वर्ण, धर्म के चश्में से देखने की प्रवृत्ति औपनिवेशिक शैक्षिक व्यवस्था की उपज है। इसका इतिहास भी बड़ा रोचक है, अंग्रेजों के पहले जो यूरोपीय जातियाँ भारत आयीं, उनसे भारतीयों को बहुत अच्छे अनुभव प्राप्त नहीं हुए। जिस कारण भारतीय मानस में यूरोपीय जातियों को स्वीकृति नहीं मिल पा रही थी। अंग्रेजों ने भारत में अपनी जड़े मजबूत करने के उद्देश्य से भारतीय मानस की स्वीकृति, सद्भावना प्राप्त करने के लिए भारतीयों को न्याय उनकी प्राचीन संहिताओं के आधार पर देने का प्रयास किया। इसी प्रयास में वे संस्कृत ग्रंथों के सम्पर्क में आये और इसे पढ़ते ही चकित से होने लगे कि जिस देश को इतना पिछड़ा समझ रहे थे, उस दे़ा में इतने गम्भीर दार्शनिक चिन्तन इतने प्राचीन काल में होने लगा था और फिर विलियम जोन्स[2], मैक्समूलर आदि ने हमारे अतीत का अन्वेषण करने का प्रयास व्यवस्थित अध्ययनों के माध्यम से किया। लेकिन बिना इन प्रयासों के महत्व को नकारे यह कहा जा सकता है कि इन प्रयासों का एक दुष्परिणाम भी रहा, जो अभी तक हम भुगत रहे हैं। मैक्समूलर जो प्राच्य विद्या का जानकार जर्मन मूल का एक भाषाविद् था, उसने वेदों और संस्कृत वाङ्मय में निहित ज्ञान से पश्चिमी देशों को परिचित भी कराया। लेकिन उसकी कई व्याख्याएं व स्थापनाएं विवादित भी हैं। उसके बारे में तो यह भी कहा जाता है कि उसने ब्रिटिश हितों को ध्यान में रखते हुए विभाजनकारी मंशा से

भारतीय प्राच्य विद्या की व्याख्याएं की। अपनी माँ[3] व पत्नी[4] को लिखे पत्रों से इसकी पुष्टि भी होती है।

मूलतः ब्रिटिशर्स भारत की आर्थिक समृद्धि से आकर्षित हो व्यापार के लिये आये थे लेकिन उनके व्यापार से भारत की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। आर्थिक इतिहासकार एंगस मैडिसन (2001) ने अपने अध्ययन में यह पाया कि 1700 ई. में पूरे विश्व के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में भारत की हिस्सेदारी 24.4 प्रतिशत थी जो 1913 ई. में घटकर 7.6 प्रतिशत तक आ गयी।[5] राइज एण्ड फाल ऑफ ग्रेट पावर्स (1987) में पॉल केनेडी अर्थशास्त्री पॉल बेरोच का हवाला देते हुए कहते हैं कि 1750 ई. में पूरी दुनियाँ के विनिर्माण उत्पादन (Manufacturing Output) में भारत की हिस्सेदारी 24.5 प्रतिशत तक थी, जो 1900 ई. में 1.7 प्रतिशत तक पहुँच गयी।[6] क्योंकि 1750 से 1900 के बीच भारत में विऔद्योगीकरण (Deindustrialization) की दर बहुत अधिक रही। क्लिंगिंगस्मिथ व विलिअम्सन (2005) अपने अध्ययन से इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि 19वीं शताब्दी में भारत में विऔद्योगिकरण बहुत तीव्र गति से हुआ।[7]

अंगेजों के पूर्व भारत में अर्थव्यवस्था में राज्य का कोई दखल नहीं था, जिसे पश्चिम में एडम स्थिम ने आर्थिक पूंजीवाद का सिद्धान्त कहा था, लेकिन अंग्रेजी सरकार की नीतियों व हस्तक्षेप के कारण लोग बेरोजगार होते गये। अमीय कुमार बागची (1976) ने गंगा किनारे बिहार के क्षेत्रों पर अपने अध्ययन में जो आँकड़े दिये हैं, उनसे यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भ में वहाँ के उद्योगों में रोजगार में लगे लोगों की जो संख्या थी, वह उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक आधे से भी कम हो गयी।[8] स्वाभाविक है उस दौर में बेरोजगार लोगों की संख्या तेजी से बढ़ी। इसी अवधि में पूरे देश में 2.5 से 3 करोड़ लोगों की भुखमरी से मृत्यु भी हुयी। स्वाभाविक है ये बेरोजगार लोग ही रहे होंगे।

विल दूरन्त (1930) द केस फॉर इण्डिया में अमेरिकी लेखक जे.टी. सुन्दरलैण्ड को उद्धृत करते हुए लिखते हैं कि दुनियाँ की कोई भी वस्तु ऐसी नहीं थी जो उपयोगी हो या आकर्षक, वह भारत में न बनती हो।[9]वस्तुतः अंग्रेज भारत की समृद्धि देख यहाँ के उत्पादक वर्ग को लूटने आये थे। अर्थशास्त्री उत्सा पटनायक (2018) का आंकलन है कि ब्रिटेन ने 1765 से 1938 के बीच भारत से 45 लाख करोड़ डालर की लूट की।[10]विल दूरन्त विल दूरन्त आगे लिखते हैं कि विऔद्योगीकरण (Deindustrialization) और कृषि पर कर की बोझ से बड़ी संख्या में लोग बेरोजगार हुए और ये लोग मजदूर और सफाईकर्मी बनने को विवश हो गये, जब सस्ते में सफाई का काम करने वाले मिल जाते हों तो कोई क्यों घर में शौचालय की व्यवस्था करे।[11]शशि थरूर (2016) भी 'एन इरा ऑफ डार्कनेस : दि ब्रिटिश इम्पायर इन इण्डिया' में ब्रिटिश लूट और उसके दुष्प्रभावों की बात करते हैं।

कार्ल मार्क्स (1853) भारत के बारे में लिखते हैं कि एशियाटिक मॉडल आफ प्रोडक्शन में उत्पादक और उपभोक्ता दोनों एक हैं, खुद ही निर्माण करते हैं और खुद ही इस्तेमाल। लेकिन ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने कृषि को बर्बाद कर दिया। आगे लिखते हैं जहाँ ब्रिटेन आयातक और भारत निर्यातक था पर ब्रिटिश नीतियों के कारण ब्रिटेन निर्यातक बन गया और भारत आयातक।[12]मार्क्स (1853) लिखता है कि भारत के निम्न वर्ग में भी गले, कान और हाथ की अँगुलियों में सोने के गहने पहनना सामान्य सी बात है। ......लेकिन ब्रिटिश घुसपैठ ने भारत में हथकरघा और चरखे को नष्ट कर दिया। 1818 से 1836 तक

भारत को ब्रिटेन के निर्यात का अनुपात 1 से 5200 तक हो गया। उसी समय ढाका की आबादी 1,50,000 से घटकर 20,000 पर आ गयी।[13] स्वाभाविक है आबादी में यह कमी उत्पादक वर्ग के बेरोजगार होने के कारण उनके विस्थापित होने से हुयी होगी।

त्रिभुवन सिंह (2019) शूद्र कौन थे: अवलोकन और समीक्षा में प्रश्न उठाते हैं कि इस बेरोजगार आबादी का क्या हुआ ? स्वाभाविक है यह उत्पादक वर्ग मजदूर बन गया होगा। एक तरफ लोग बेरोजगार और गरीब हो रहे थे वहीं अंग्रेज पादरी एम.ए. शेरिंग[14] यह चिन्ता व्यक्त कर रहा होता है कि आखिर भारत के हिन्दू उस समयकाल में दरिद्र हो जाने के बाद भी ईसाइयत में शामिल क्यों नहीं हो रहे? शेरिंग उन्हें ईसाइयत में सम्मिलित करने हेतु भड़काने का काम कर रहा होता है।[15] अपने व्यापारिक हितों के लिए उन्हें यहाँ अपनी सत्ता और जड़ें मजबूत करनी थी, जिसका एक माध्यम धर्मान्तरण भी था और इसके लिए भारत की धर्मभीरू जनता के मन में भारतीय धर्म के प्रति नकारात्मक भाव भरना उन्हें आवश्यक लगा और फिर बड़े ही संगठित तरीके से उन्होंने अपने उद्देश्य के लिए भारतीय धार्मिक साहित्य का अध्ययन, उसमें नकारात्मक तथ्यों की खोज और संदर्भ से हटकर शब्दों के अर्थ किये, अपनी व्याख्या की। इसी की शिक्षा भारतीयों को भी दी।

आर्य शब्द जो सभ्य, कुलीन होने का पर्याय था उसे एक नस्ल के रूप में मान्यता दिया जाने लगा। संस्कृत मे रेस शब्द का कोई समानार्थी नहीं, सुविधा के लिये हमनें फारसी शब्द नस्ल या नया शब्द प्रजाति बनाया। जिस देश के हजारों साल के इतिहास में रेस जैसा कोई शब्द न हो, स्वाभाविक है कि समाज में इस तरह की कोई अवधारणा नहीं रही होगी और न ही इस आधार पर कोई विभाजन भी रहा होगा, लेकिन आर्य इनवेशन सिद्धान्त की बात शुरू की गयी। यह प्रचारित किया गया कि आर्य बाहर से आकर यहाँ के मूल निवासी द्रविणों को हराकर उन्हें या तो दास बना लिये या उत्तर भारत से दक्षिण की ओर जाने के लिये विवश कर दिये। लेकिन अगर यह प्रवृत्ति रही होती तो पूरे भारतीय प्राचीन इतिहास या साहित्य में क्या ऐसा कोई प्रसंग नहीं मिलता जिसमें विजेता ने हारने वालों को दास बनाया हो या उन्हें उनके मूल निवास से विस्थापित किया हो? समसामयिक साहित्य को उपेक्षित कर क्या केवल अन्य दूसरे तरीकों से किसी काल के बारे में उचित निर्णय लिया जा सकता है ?

भारत में वर्ण व्यवस्था रही है। गीता में कृष्ण कहते हैं कि चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्म विभागशः।[16] गुणों से उत्पन्न कर्मों के आधार पर वर्ण व्यवस्था रही। सवर्ण शब्द का प्रयोग समान वर्ण और असवर्ण शब्द का प्रयोग असमान वर्ण के लिये किया जाता है। लेकिन रंग भेद व नस्ल के सिद्धान्त को मानने वालों ने अपनी सोच के अनुरूप वर्ण का अर्थ केवल रंग समझते हुए सवर्ण शब्द को तीन वर्ण और आर्य नस्ल के साथ जोड़ दिया और काले लोगों को असवर्ण और अनार्य बता दिया। जबकि शंकर, अष्टावक्र, राम, कृष्ण, व्यास सब श्यामवर्ण के माने गये। कुछ जातियों को तो वर्ण व्यवस्था से बाहर मान उन्हें अवर्ण कह दिया गया, जबकि अवर्ण शब्द भारतीय दार्शनिक विमर्श में ईश्वर के लिए प्रयुक्त हुआ है।[17]

भारत में जाति शब्द का प्रयोग कुल, वंशवृक्ष तथा पेशे के लिए किया जाता था। लेकिन इसे कास्ट शब्द का समानार्थी मान लिया गया। जबकि पश्चिम में कास्ट शब्द का प्रयोग नस्ल के लिये किया जाता था। परिणाम यह हुआ कि जातियों को नस्ल के आधार पर बाँट दिया गया।

एच.एच. रिश्ले जो 1901 में जनगणना आयुक्त था, 1901 की जनगणना में भारतीयों को 7 विभिन्न नस्लों में बाँट देता है।[18]जाति, वर्ण और नस्ल में स्पष्ट अन्तर किए बिना जनगणना में इन्हें वर्गीकरण का आधार बना दिया गया। कास्ट का देशी भाषाओं में कोई समानार्थी शब्द नहीं है। लेकिन अंग्रेजी के 'कास्ट' जो मूलतः एक पुर्तगीज शब्द है और नस्ल का समानार्थी है, [19]इसको स्वदेशी 'जाति' शब्द का समानार्थी मानकर जनगणना के आँकड़े दे दिया जाता है, जिसको लेकर जनगणना से जुड़े ब्रिटिश अधिकारियों की भी रिश्ले से असहमतियाँ रहीं। [20]कास्ट को रिश्ले ने जाति का समानार्थी मानते हुए व नाक की चौड़ाई से जातियों की सामाजिक स्थिति का सम्बन्ध[21] जोड़ व उनका अनुक्रम बना भारतीयों को 43 नस्लों और 2378 जातियों व जन जातियों में वर्गीकृत भी कर देता है।[22] हालाँकि द्वितीय विश्वयुद्ध के भयावहता के बाद यूनेस्को ने इस आधार पर नस्लों के वर्गीकरण को खारिज कर दिया। डॉ. अम्बेडकर खुद इस सिद्धान्त को अस्वीकृत करते हैं और आर्यों को एक नस्ल की बजाय विशेष धार्मिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक विश्वासों वाला सामाजिक समूह मानते हैं और भारत से उनका गहरा लगाव भी मानते हैं, [23]पर त्रिभुवन सिंह (2019)[24]लिखते है कि डॉ. अम्बेडकर व्हू वर द शूद्राज में जिस जान मुइर की ओरिजिनल संस्कृत टेक्स्ट्स आन द ओरिजिन एण्ड हिस्ट्री आफ द पिपुल ऑफ इण्डिया , देअर रिलिजन एण्ड इन्स्टीट्यूशन (1858) को बार-बार उदघृत करते हुए भारत की सामाजिक स्थिति का वर्णन करते हैं, वह जान मुइर खुद संस्कृत के शब्दों की संदर्भ से हटकर व्याख्या करता है। यहीं कारण रहा कि डॉ. अम्बेडकर शूद्रों की ऐतिहासिक, सामाजिक स्थिति को लेकर पश्चिमी व्याख्याओं से पूरी तरह मुक्त नहीं हो सके। जॉन मुइर वर्ण के साथ कास्ट तक को चमड़े के रंग से जोड़ते हुए लिखता है कि यह अनार्य नस्ल के लोग अमेरिका के रेड इण्डियन की तरह कमजोर नस्ल के थे।[25] जबकि कौटिल्य ने तो कुछ मामलों में शूद्र सेना को ब्राह्मण सेना से बेहतर माना है। टेवेर्नियर जो कि 17वीं शताब्दी का फ्रांसीसी यात्री था और 1630 से 1668 के मध्य 6 बार भारत की यात्रा की, वह अपनी पुस्तक ट्रेवल्स इन इण्डिया (1676) में सेना में शूद्र सैनिकों की उपस्थिति व उनकी बहादुरी की बात करता है।[26] हैमिल्टन बुकनान (1807) जर्नी फ्राम मद्रास में धनी शूद्रों की बात करता है जो धर्म परिवर्तन से बचने के लिये गोवा छोड़कर कर्नाटक आये।[27]

ब्रिटिश सरकार की आर्थिक नीतियों के कारण उत्पादक वर्ग जिसे कौटिल्य भी शूद्र मानते हैं, बुरी हालत में पहुँचा और इस हालत के कारण इनको जान मुइर ने कमजोर और अनार्य मान लिया और इनकी इस स्थिति के लिये ब्रिटिश सरकार को जिम्मेदारी से बचाने व इसके विपरीत धार्मिक व्यवस्था को जिम्मेदार मानने के लिए षड़यन्त्रपूर्वक संस्कृत ग्रन्थों से शब्दों की सुविधानुसार व्याख्या की।

एम.ए. शेरिंग (1872) ने हिन्दू ट्राइब्स एण्ड कास्ट में नमक के कारोबार में बनारस और मिर्जापुर में लोनिया ठाकुर, मुसहर, आदि जातियों की चर्चा की है।[28] जब नमक का कारोबार सरकारी नियंत्रण में आया तो इनकी स्थिति बदतर हुयी और लोनिया ठाकुर को भी कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण शूद्र और अनार्य मान लिया गया। शेरिंग कोरी जाति को भी वैश राजपूतों का वंशज मानता था[29], जो समय के साथ कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण श्रम आधारित कामों में लगने के कारण सामाजिक क्रम में नीचे की ओर चले गये। बहुत से उदाहरण ऐसे है जहाँ बेरोजगार होने के कारण लोग सामाजिक क्रम में नीचे की ओर गये और

केवल इसीलिए अनार्य मान लिये गये।

डॉ. अम्बेडकर ने स्मृतियों के आधार पर अधिकतम 12 अछूत जातियों के होने का वर्णन किया है। लेकिन 1935 में गवर्नमेन्ट काउन्सिल ने 429 जातियों को अछूत माना।[30] इतनी अछूत जातियाँ कहाँ से आ गयीं? अगर इतनी अछूत जातियाँ पहले से थीं तो मेगस्थनीज, अलबरूनी, वर्नियर, टेवरनियर किसी ने तो जिक्र किया होता। क्या इसके मूल में विल दूरन्त द्वारा किया गया वह अवलोकन नहीं है जिसमें वे कहते हैं कि ब्रिटिश नीतियों के कारण विऔद्योगीकरण (Deindustrialization) और कृषि पर कर की बोझ से बड़ी संख्या में लोग बेरोजगार हुए और ये लोग मजदूर और सफाईकर्मी बनने को विवश हो गये।[31] हैमिल्टन बुकनान (1807) जर्नी फ्राम मद्रास में दक्षिण भारत की सामाजिक स्थिति का विस्तार से वर्णन करता है, वह भी अछूतों का जिक्र नहीं करता। स्वाभाविक है कि ब्रिटिश शासनकाल में उत्पादक वर्ग के बेरोजगार होने के कारण उन्हें मैला ढोने या अन्य निम्न कार्य करने पड़े होंगे। और यह सर्व विदित है कि हिन्दुओं में घर में शौच करने व मैला ढोने की परम्परा का कोई वर्णन नहीं मिलता। अब यह स्पष्ट है कि किसके कारण लोग मैला ढोने के लिए मजबूर हुए और किसके यहाँ का मैला उन्हें ढोना पड़ा। त्रिभुवन सिंह (2019) कहते हैं कि सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में डॉ. अम्बेडकर की मंशा तो बिलकुल सही थी पर तथ्यों को प्राप्त करने के उनके स्रोत पश्चिमी लेखकों की पुस्तकें ही थीं,[32] जो भारत की संस्कृति से परिचित न होने के कारण संस्कृत ग्रन्थों के तथ्यों व शब्दों की उनके सही सन्दर्भो में व्याख्या नहीं कर पाये। डॉ. अम्बेडकर खुद स्वीकार करते हैं कि वे संस्कृत बहुत कम जानते हैं और अंग्रेजी अनुवाद के माध्यम से संस्कृत ग्रन्थों का ज्ञान प्राप्त किये।[33] ठीक इसी समय गांधी जो अर्थशास्त्री नही थे, वावजूद इसके वे इन सामाजिक समस्याओं का कारण खोजने ब्रिटिश सरकार की आर्थिक नीतियों की तरफ गए जबकि डॉ. अम्बेडकर इसका कारण संस्कृत ग्रन्थों में खोजने लगे। हालाँकि ऐसा नहीं कि भारत में जाति के बन्धन नहीं थे लेकिन जहाँ गुण और शील मिले वहाँ यह बन्धन कच्चे धागे की तरह टूट भी गये। ए. एल. बाशम (1954) द वन्डर दैट वाज इण्डिया में लिखते हैं कि मध्य युग के पूर्व भारत में जाति व्यवस्था तरल थी।[34] बहुत से उदाहरण ऐसे भी मिलते हैं, जहाँ वर्ण परिवर्तित होता रहा है। पेशे या कार्य को बदलने पर सामाजिक स्थिति बदलती रही है। हालाँकि जाति व्यवस्था को समाप्त करना आज सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता बन चुकी है और इसे समाप्त करने की दिशा में आगे भी बढ़ना होगा। लेकिन अतीत में जो हुआ उसे बिना पूर्वाग्रह के आर्थिक स्थिति, आनुवांशिकता, शुचिता, पेशा और इसके कारण होने वाले अनुबंधन के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के आलोक में समझना भी होगा, जिससे ब्रिटिश लोगों द्वारा फैलायी गयी भ्रामक जानकारियों से बचते हुए अपने लोगों में समरसता स्थापित की जा सके और जाति समाप्त कर समता के मूल्यों की तरफ भी हम बढ़ सकें।

अंग्रेजों की विभाजनकारी नीतियों का एक और उदाहरण पंजाब में देखने को मिला। खालसा पंथ हिन्दू धर्म की परिधि में ही अपने विश्वासों के साथ वर्षों से बना हुआ था पर मैक्स आर्थर मैकलिफे जो 1882 में पंजाब का डिप्टी कमिश्नर था। उसने सर्व प्रथम यह माना कि सिख और हिन्दू अलग-अलग धर्म हैं। कान्ह सिंह नाभा जो मैकलिफे का पंजाबी ट्यूटर था,[35] उसने 1898 में 'हम हिन्दू नहीं' नाम से एक पुस्तक लिखी। खुद मैक्स आर्थर

मैकलिफे ने 1909 में सिख रिलिजन : इट्स गुरूज, सेक्रेड राइटिंग्स एण्ड आथर्स नामक पुस्तक लिखी और सिखों को हिन्दू धर्म से अलग पहचान देने का प्रयास किया। इन्हीं सबका प्रयास रहा कि गुरूद्वारों से हिन्दू महन्त व पुजारियों को हटा सिख पुजारियों की नियुक्ति शुरू कर दी गयी और हिन्दुओं व सिखों के बीच विभाजन के दूसरे भी प्रयास किये गये।

इसी तरह के प्रयास भाषा के मामले में भी किये गये। पश्चिमी भाषाविद् भी भारतीय भाषाओं की उत्पत्ति संस्कृत से होने की बात करते हैं। पर 1816 में ए. डी. कैम्पबेल व साथ में फ्रांसीस व्हाइट इलिस[36] ने तेलगू भाषा का व्याकरण लिख उसे अरबी और हिब्रू से निकली भाषा बताने का प्रयास किया। जबकि ऐसा माना जाता है कि तेलगू भाषा की संस्कृत से बहुत ज्यादा साम्यता है। राबर्ट काडवेल (1856) ने तो अ कम्परेटिव ग्रामर ऑफ द द्रविडियन ऑर साउथ इण्डियन फेमिली ऑफ लैग्वेजेज के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया कि दक्षिण की भाषाएँ संस्कृत से अलग हैं और उसमें संस्कृत जबरदस्ती डाली गयी है।[37] क्या यह उनकी मंशा नहीं दिखाता है ?

एक और भ्रम भारत में शिक्षा के सन्दर्भ में फैलाया जाता है कि अंग्रेजों के आने के पूर्व भारत में शिक्षा कुछ वर्गों तक सीमित थी।

1931 के गोलमेज सम्मेलन में गांधी ने कहा कि आज से 50 या 100 वर्ष पूर्व भारत में शिक्षा आज से ज्यादा अच्छी हालत में थी। तब फिलिप हर्टाग जो साइमन कमीशन द्वारा शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं के अध्ययन के लिए बनी समिति का अध्यक्ष था, ने गांधी से असहमति जताते हुए अंग्रेजी शासन के पूर्व भारत में शिक्षा की सुलभता ब्रिटिश शासन की अपेक्षा कम होने की बात की थी। जिसको लेकर गांधी का हर्टाग से विवाद भी रहा।[38]

संयोगवश जब 1813 के चार्टर के बाद कम्पनी को शिक्षा की जिम्मेदारी दी गयी तब अंग्रेजी सरकार ने बोर्ड ऑफ रेवेन्यू को आदेश दिया कि शिक्षा से सम्बन्धित आँकड़े लिए जायें। 1820 से 30 के बीच का वह आँकड़ा उपलब्ध था, जिसके आधार पर गांधीवादी धरमपाल (1983) ने द ब्यूटीफुल ट्री लिखी है। उस समय के कम्पनी शासित मद्रास, बंगाल और पंजाब के आँकड़ो के आधार पर यह अनुमान करना मुश्किल नहीं है कि भारत में 1835 के पूर्व 1835 के बाद की अपेक्षा शिक्षा की स्थिति बेहतर थी, जिसमें कुछ जिलों के आँकड़े तो यह बताते हैं कि वहाँ शूद्र छात्रों की संख्या ब्राम्हण छात्रों से चार गुने से भी अधिक थी।[39] लड़कियों के मामले में भी ब्राम्हणों की तुलना में शूद्र वर्ग की छात्राओं की संख्या बहुत अधिक थी। हालाँकि तब भी लड़कियों की शिक्षा की स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी। यहाँ यह भी विचारणीय है कि जहाँ मैत्रेयी याज्ञवल्क्य से कहती हैं कि 'येनाह नामृता स्याम् किमहम् तेन कुर्याम्'[40] अर्थात जिस धन से मुझे अमृत न प्राप्त हो उसको लेकर मैं क्या करूँगी, मुझे तो अमरत्व वाला तत्व ज्ञान चाहिए। उस देश में स्त्री शिक्षा की स्थिति क्यों इतनी बुरी हुयी ? इसके लिए औपनिवेशिक काल से भी पहले की परिस्थितियों में जाना पड़ेगा। इस सम्बन्ध में अध्ययन हुए भी हैं तथा अलग से और अध्ययन करने की आवश्यकता भी है।

ब्रिटिश शासन के पूर्व शिक्षा के सम्बन्ध में रामधारी सिंह दिनकर (1956) संस्कृति के चार अध्याय में लिखते हैं कि नगरों व गांवों में रहने वाले प्रत्येक पण्डित का घर छोटी-मोटी पाठशाला होता था। प्राथमिक पाठशालाओं की संख्या बहुत अधिक थी, जिनमें पढ़कर लोग व्यावहारिक काम में लग जाते थे। 1821 में टॉमस मुनरो ने भी मद्रास में 2 लाख

लोगों के विद्यालयों में पढ़ने की बात की। दिनकर (1956) के अनुसार एम. आर. पराजँपे ने भी लिखा कि उस समय मद्रास के प्रत्येक गांव में एक स्कूल था।[41]

1835 के बाद ब्रिटिश शिक्षा व्यवस्था और उनके छन्नीकरण (Filtration) सिद्धान्त की वजह से शिक्षा की स्थिति बदतर होती गयी। ब्रिटिश सरकार की आर्थिक नीतियों के कारण बहुत से उत्पादक वर्ग के लोग गरीब होते गये और फिर छन्नीकरण सिद्धान्त के कारण शिक्षा इनकी पहुँच से बाहर होती गयी, जिस कारण से मिशनरियों के लिए वे धर्मान्तरण के आसान शिकार भी प्रतीत हुए। साथ ही जिन्हें शिक्षा उपलब्ध थी उनमें जाति, वर्ण, नस्ल, धर्म के आधार पर बहुत सी तथ्यहीन बातें पढ़ा अपनी संस्कृति से दूर कर वैमनस्यता बढ़ाने का भी प्रयास किया गया।

यह देखना महत्वपूर्ण है कि जहाँ ब्रिटिश नीतियों की मार सबसे ज्यादा उत्पादक वर्ग पर पड़ी, वहीं दूसरी तरफ ब्रिटिश नीतियों का परिणाम यह भी रहा कि रोजगार का सीधा संबंध अंग्रेजी शिक्षा से जुड़ गया। पहले ऐसा नही था, रोजगार के लिए सामान्य लिखना, पढ़ना व पेशेवर ज्ञान ही आवश्यक था, जो गांव की पाठशालाओं व परिवार से प्राप्त हो जाता था। परन्तु रोजगार का संबंध शिक्षा, वह भी अंग्रेजी शिक्षा से जुड़ जाने के कारण वह वर्ग काफी फायदे में रहा जिनका पहले से शिक्षा से जुड़ाव रहा था। उन वर्गों के लिए अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने के लिए ज्यादा परेशानी नहीं हुई जितना उत्पादक वर्ग को, जो शिक्षा का रोजगार से संबंध न होने के कारण इस धारा से दूर चला गया था। उपर से छन्नीकरण (Filtration) सिद्धान्त ने इन्हें शिक्षा से और दूर कर दिया। व्यापारिक वर्ग भी ब्रिटिश उत्पाद को व्यवसाय का साधन बना अपनी आजीविका चला पा रहा था, वहीं ब्रिटिश सरकार शासन व्यवस्था को सुदृढ़ बनाए रखने के लिए मार्धल मानी जाने वाली जातियों को पुलिस, सेना की भर्ती में प्राथमिकता दे उन्हें रोजगार दे रही थी। इसलिए इन वर्गों के कुछ लोगों को आजीविका हेतु रोजगार मिल पा रहा था। परन्तु उत्पादक वर्ग के हिस्से मजदूरी या छोटी नौकरी या उपेक्षित कामों का ही सहारा बचा था। अपनी आर्थिक व सामाजिक स्थिति खराब होने के कारण यह लोग मिधनरियों के आसान शिकार भी साबित हुए। जिस ब्रिटिश सरकार की नीतियां उनकी बदहाली की जिम्मेदार थीं, वहीं लोग उन्हें अपने बचाव व अपनी मजबूती स्थापित करने के लिए उन्हें उनकी बदहाली के लिए दूसरे कारणों को जिम्मेदार साबित करते रहे। उनके मन में समाज के शेष वर्ग के प्रति विद्वेष व प्रजाति के आधार पर अलगाव की भावना भर कर व उनकी समस्याओं का कारण धर्म को बता उनके मन में धर्म के प्रति अनादर का भाव भरने में कुछ हद तक सफल भी रहे। जिसका दुष्परिणाम भारतीय समाज आज भी भुगत रहा है।

आज आवश्यकता है कि शिक्षा को हमें किसी भी तरह के पूर्वाग्रहों से मुक्त करने की जिम्मेदारी लेनी होगी, इस क्षेत्र में अध्ययन और स्वस्थ विमर्श को प्रोत्साहित करना होगा और साथ ही शिक्षा को रोजगार से भी जोड़ना होगा। जब तक शिक्षा लोगों को रोजगार व स्वरोजगार हेतु कौशल नहीं दे पायेगी, बालकों को स्वस्थ वातावरण में अपनी योग्यता के अनुरूप विकास का अवसर नहीं दे पायेगी, औपनिवेशिक काल में पैदा किये गये पूर्वाग्रहों, दुराग्रहों से भावी पीढ़ी को मुक्त नहीं कर पायेगी, अपने इतिहास का उचित बोध कराते हुये सही तथ्यों को उद्घाटित नहीं कर पायेगी , तब तक समरसता के साथ समता के मूल्यों को नहीं पाया जा सकेगा।

हालाँकि इन प्रयासों में बहुत से अवरोध भी मिलेंगे, पर हमें इन अवरोधों को सार्थक विमर्श में स्थान देकर उनका निराकरण कर आगे बढ़ना होगा। स्वामी विवेकानन्द ने कहा है कि विरोध, गतिरोध से होकर निकलने वाली गति और विकास ही जीवन है। गंगा अनेक अवरोधों को पार करती है और प्रत्येक अवरोध गंगा की गति में वृद्धि करता है। उम्मीद करता हूँ कि हमारी शिक्षा व्यवस्था इन अवरोधों को पार कर सही तथ्यों को उद्घाटित कर समता और समरसता के मूल्यों साथ समग्र विकास की संकल्पना की ओर आगे बढ़ेगी।

निष्कर्ष – आज हमारे सामने बिना वैमनस्यता बढ़ाये समता मूलक समाज की स्थापना एक बड़ी चुनौती है। बिना ऐसा किए भारतीय समाज के समग्र विकास की संकल्पना हमारे लिए स्वप्न ही बना रह जायेगा। पर इन प्रयासों के रास्ते में बहुत से अवरोध हैं। भारत की प्राचीन सामाजिक व्यवस्था में समय के साथ कुछ कमियाँ जरूर आयीं पर उससे कहीं बहुत ज्यादा उसके बारे में अंग्रेजों द्वारा दुर्भावनावश दुष्प्रचार किया गया, जिससे उन्हीं की नीतियों के दुष्परिणाम स्वरूप कमजोर आर्थिक स्थिति व उसके कारण सामाजिक क्रम में नीचे की ओर गए वर्ग के मन में अन्य दूसरे वर्गों के लोगों को अपनी समस्याओं का कारण मान उनके प्रति अलगाव की भावना भरने का प्रयास हुआ, जिससे विषमता दूर करने के प्रयासों में कई बार वैमनस्यता भी आ जाती है।ऐसी परिस्थिति में ना विषमता दूर हो पाती है ना ही वैमनस्यता, जो राष्ट्र के समग्र विकास के रास्ते की सबसे बड़ी बाधा है। इस समस्या का हल शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। शिक्षा द्वारा ही ब्रिटिश काल में फैलाये गये दुष्प्रचारों से भावी पीढ़ी को मुक्त कर ,सही तथ्यों को उद्घाटित कर, अपने इतिहास का उचित बोध कराते हुये सामाजिक वातावरण को समरस बनाया जा सकता है व शिक्षा को वैयक्तिक उन्नति का साधन बनाते हुए, वंचित वर्ग की पहुँच तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का प्रसार करते हुए समता और समरसता के आदर्शों को एक साथ पाया जा सकता है। इसी रास्ते हम बंधुता और सद्भाव के साथ सामाजिक न्याय के संवैधानिक आदर्शों की तरफ बढ़ सकेंगे।

समाप्ति टिप्पणी –

1. आदि शंकराचार्य के सम्बन्ध में एक आख्यायिका प्रसिद्ध है कि काशी में गंगा स्नान से लौटते समय मार्ग में उनके सामने एक चाण्डाल आ गया। उन्होंने चाण्डाल से मार्ग से दूर हट जाने को कहा। तब चाण्डाल ने कहा कि आप शरीर में रहने वाले ब्रह्म की उपेक्षा कर रहे, इसलिए अब्राह्मण तो आप हैं। अत: आप मेरे मार्ग से हट जायें। चाण्डाल के इस बात का शंकराचार्य कोई उत्तर नहीं दे सके और उससे प्रभावित हो कहा कि आपने मुझे ज्ञान दिया है, अत: आप मेरे गुरू हुए। शंकराचार्य ने चाण्डाल को गुरू मान उनकी स्तुति की जिसे मनीषा पंचकम् स्तोत्र के नाम से जाना जाता है। ऐसा माना जाता है कि उन्हें चाण्डाल के स्थान पर शिव के दर्शन हुए। (आदि शंकराचार्य रचित मनीषा पंकचम्, स्वामी चिन्मयानन्द(व्याख्याकार)(2001), मुम्बई: सेन्ट्रल चिन्मय मिशन ट्रस्ट।)
2. कलकत्ता स्थित तब के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश रहे विलियम जोन्स ने भारतीय प्राच्य विद्या के अध्ययन हेतु 1784 ई. में एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना की। इसने तुलनात्मक भाषा विज्ञान के माध्यम से संस्कृत की यूरोपीय भाषाओं से समीपता व उन पर श्रेष्ठता स्थापित की। (दिनकर, रामधारी सिंह

(1956), संस्कृति के चार अध्याय, इलाहाबाद : लोक भारती प्रकाशन, पृ. 437।)

3. वही, पृ. 328

4. मैडिसन, एंगस (2001), द वर्ल्ड इकोनॉमी : ए मिलेनिअल पर्सपेक्टिव, पेरिस : ओ.ई.सी.डी. पब्लिकेशन, पृ. 263

5. अपनी पुस्तक राइज एण्ड फाल ऑफ ग्रेट पावर्स के पृष्ठ सं0 149 के सारणी-6 में पॉल केनेडी ने प्रस्तुत इन आँकड़ों के स्रोत के रूप में पुस्तक की समाप्ति नोट 4. 11 में निम्न संदर्भ दिया है-बेरोच, पॉल (1982), इण्टरनेशनल इण्डस्ट्रियलाइजेशन लेवल फ्रॉम 1750 टू 1980, जर्नल ऑफ यूरोपियन इकोनॉमिक हिस्ट्री, 11, पृ.296

6. क्लिंगिंगस्मिथ, डेविड एण्ड विलिअम्सन, जेफ्री (2005), इण्डियाज डिइण्डस्ट्रियलाइजेशन इन द एट्टीन्थ एण्ड नाइन्टीन्थ सेंचुरीज, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी, पृ. 12-13

7. बागची, अमीय कुमार (1976), डिइण्डस्ट्रियलाइजेशन इन गैंगेटिक बिहार 1809-1901, इन बी.डे, एट एल. (एडिटर्स), एसेज इन आनर ऑफ प्रो. एस.सी. सरकार, न्यू देल्ही : पीपल्स पब्लिशिंग हाउस, पृ. 499-522

8. विल दूरन्त (1930), द केस फॉर इण्डिया, न्यूयार्क : सिमन एण्ड स्कस्टर, पृ. 8

9. शर्मा, मनोज (एडिटर) (19 नवम्बर, 2018), हाउ मच मनी डिड ब्रिटेन टेक अवे फ्रॉम इण्डिया ? अबाउट 45 ट्रिलियन डालर इन 173 ईयर्स, सेज टॉप इकोनॉमिस्ट, एचटीटीपी://डब्लूडब्लूडब्लू.बिजनेसटूडे. इन/करेन्ट/इकोनॉमी-पालिटिक्स/दिस-इकोनॉमिस्ट-सेज-ब्रिटेन-टुक-अवे-यूएसडालर-45-ट्रिलियन-फ्रॉम-इण्डिया-इन- 173-ईयर्स/स्टोरी/292352. एचटीएमएल से पुनः प्राप्त

10. विल दूरन्त (1930), द केस फॉर इण्डिया, न्यूयार्क : सिमन एण्ड स्कस्टर, पृ.32

11. मार्क्स कार्ल (1853), द ईस्ट इण्डिया कम्पनी - इट्स हिस्ट्री एण्ड रिजल्ट्स, न्यूयार्क डेली ट्रिब्यून, 11 जुलाई

12. मार्क्स, कार्ल (1853), द ब्रिटिश रूल इन इण्डिया, न्यूयार्क डेली ट्रिब्यून, 25 जून

13. अंग्रेज पादरी जिसने 1872 में 'हिन्दू ट्राइब्स एण्ड कास्ट' नाम से पुस्तक लिखी

14. सिंह, त्रिभुवन (2019), शूद्र कौन थे : अवलोकन और समीक्षा, इलाहाबाद: अनामिका प्रकाशन, पृ.116-118

15. श्रीमद्भागवद्गीता - 4/13

16. माण्डूक्य उपनिषद्,1/6।

17. द इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया, खण्ड-1, (1909), आक्सफोर्ड: क्लेरेण्डन प्रेस, पृ. 292

18. वही पृ.311।

19. फुलर, सी. जे. (2016), कालोनियल एन्थ्रोपोलॉजी एण्ड द डिक्लाइन ऑफ द

राज : कास्ट, रिलिजन एण्ड पोलिटिकल चेन्ज इन इण्डिया इन द अरली ट्वन्टीएथ सेन्चुरी, जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसाइटी, 26(3), पृ.463-486

20. मल्होत्रा, राजीव व नीलकन्दन, अरविन्दन (2011)ए ब्रेकिंग इंडिया , नई दिल्ली: अमारिलिस, पृ. 55

21. वही, पृ. 58

22. बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय, खण्ड-13 (1998), सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृ. 52

23. सिंह, त्रिभुवन (2019), शूद्र कौन थे : अवलोकन और समीक्षा, इलाहाबाद: अनामिका प्रकाशन, पृ. 119-120

24. वही, पृ. 121

25. टेवेर्नियर, जे. बी. (1676), ट्रेवल्स इन इण्डिया , ट्रान्सलेटेड फ्रॉम फ्रेन्च टू इंग्लिश बाई वी. बाल (1889), एडिटेड बाई डब्लू .क्रोक (2004), न्यू देल्ही : एशियन एडुकेशनल सर्विस, पृ. 181-186

26. बुकनान, फ्रांसिस हैमिल्टन (1807)ए जर्नी फ्रॉम मद्रास थ्रू द कन्ट्रीज ऑफ मैसूर, कनारा एवं मालाबार, खण्ड-3, अमेरिकाना: हिगिन्बोथम एण्ड कम्पनी, पुनःमुद्रित क्रिएटिव मीडिया पार्टनर्स एल एल सी, (2013), पृ. 20-21

27. शेरिंग, एम. ए. (1872), हिन्दू ट्राइब्स एण्ड कास्ट, लन्दन: ट्रबनर एण्ड कम्पनी, पृ. 347

28. वही, पृ. 345

29. अम्बेडकर, बी. आर. (1949), अछूत कौन और कैसे, भदन्त आनन्द कौसल्यायन द्वारा अनुवादित, दिल्ली : गौतम बुक डिपो, पृ. 166

30. विल दूरन्त (1930), द केस फॉर इण्डिया, न्यूयार्क : सिमन एण्ड स्कस्टर, पृ.32

31. सिंह, त्रिभुवन (2019), शूद्र कौन थे : अवलोकन और समीक्षा, इलाहाबाद: अनामिका प्रकाशन, पृ.43

32. अम्बेडकर, बी. आर. (1946), हू वर द शूद्राज, बाम्बे: ठाकर एण्ड कम्पनी लिमिटेड

33. बाशम, ए. एल. (1954)ए द वण्डर दैट वाज इण्डिया, लन्दन: पिकाडोर, पृ.146

34. मैकलिफे, मैक्स आर्थर (1909), सिख रिलिजन : इट्स गुरूज, सेक्रेड राइटिंग्स एण्ड आथर्स, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 29

35. कैम्पबेल, ए. डी. (1816), अ ग्रामर ऑफ द तेलगू लैंग्वेज, कामनली टर्म्ड द जेन्टू, पेक्युलियर टू द हिन्दूज इनहैबिटिंग द नार्थइस्टर्न प्राविन्सेज ऑफ द इण्डियन पेनिन्सुला (थर्ड एडिशन, 1849), मद्रास:हिन्दू प्रेस के नोट टू इन्ट्रोडक्शन में

36. श्रीनिवासन पी. ;2006), कैन वी क्रास द चाश्म ? एजेन्सी एण्ड ओरियन्टलिस्ट डिस्कोर्स इन कालोनियल तमिल कान्टेक्स्ट, इन चन्द्रेयी नियोगी (एडिटर) रिओरिएन्टिंग ओरिएन्टलिज्म, नई दिल्ली : सेज प्रकाशन, पृ. 231-232

37. धरमपाल (1983)ए द ब्यूटीफुल ट्री, नई दिल्ली: बिब्लिआ इम्पेक्स प्रा. लि., पृ. 346-348

38. वही, पृ. 133-140

39. बृहदारण्यक उपनिषद्, 4/5/4

40. दिनकर, रामधारी सिंह (1956), संस्कृति के चार अध्याय, इलाहाबाद : लोक भारती प्रकाशन, पृ. 422

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

अम्बेडकर, बी. आर. (1946), हू वर द शूद्राज, बाम्बे: ठाकर एण्ड कम्पनी लिमिटेड।

अम्बेडकर, बी. आर. (1949), अछूत कौन और कैसे, भदन्त आनन्द कौसल्यायन द्वारा अनुवादित, दिल्ली : गौतम बुक डिपो।

काडवेल, राबर्ट (1856), अ कम्परेटिव ग्रामर ऑफ द द्रविडियन ऑर साउथ इण्डियन फेमिली ऑफ लैंग्वेजेज, लन्दनः हैरीसन, पुनःमुद्रित लन्दन, के.पाल, ट्रेन्च (1913), ट्रबनर एण्ड कम्पनी।

क्लिंगिंगस्मिथ, डेविड एण्ड विलिअम्सन, जेफ्री (2005), इण्डियाज डिइण्डस्ट्रियलाइजेशन इन द एट्टीन्थ एण्ड नाइन्टीन्थ सेंचुरीज, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी।

केनेडी, पॉल (1987) ए द राइज एण्ड फाल ऑफ द ग्रेट पावर्स, न्यूयार्क: विन्टेज बुक्स।

कैम्पबेल, ए. डी. (1816), अ ग्रामर ऑफ द तेलगू लैंग्वेज, कामनली टर्म्ड द जेन्टू, पेक्युलियर टू द हिन्दूज इनहैबिटिंग द नार्थइस्टर्न प्राविन्सेज ऑफ द इण्डियन पेनिन्सुला (थर्ड एडिशन, 1849), मद्रासःहिन्दू प्रेस।

कोलब्रोक, एच .टी. (1805), अ ग्रामर ऑफ द संस्कृत लैंग्वेज, कलकत्ताःकम्पनीज प्रेस।

टेवेर्नियर, जे. बी. (1676), ट्रेवल्स इन इण्डिया , ट्रान्सलेटेड फ्रॉम फ्रेन्च टू इंग्लिश बाई वी. बाल (1889), एडिटेड बाई डब्लू .क्रोक (2004), न्यू देल्ही: एशियन एडुकेशनल सर्विस।

थरूर, शशि (2016), एन इरा ऑफ डार्कनेस : दि ब्रिटिश इम्पायर इन इण्डिया, न्यू देल्ही: एलेफ बुक कम्पनी।

द इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया, खण्ड-1, (1909), आक्सफोर्ड: क्लेरेण्डन प्रेस।

दत्त, रोमेश (1904) ए द इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, पब्लिकेशन डिविजन, नई दिल्ली: मिनिस्ट्री ऑफ इन्फार्मेशन एण्ड ब्राडकास्टिंग।

दिनकर, रामधारी सिंह (1956)ए संस्कृति के चार अध्याय, इलाहाबाद:लोक भारती प्रकाशन।

दूरन्त, विल (1930)ए द केस फॉर इण्डिया, न्यूयार्क: सिमन एण्ड स्कस्टर।

धरमपाल (1983)ए द ब्यूटीफुल ट्री, नई दिल्ली: बिब्लिआ इम्पेक्स प्रा. लि.।

नाभा, कान्ह सिंह (1898), हम हिन्दू नहीं, पंजाब डिजिटल लाइब्रेरी, पुनः प्राप्त जनवरी, 2019।

पटनायक, उत्सा (2018), उत्सा पटनायक इन अरिन्दम बनर्जी एण्ड सी.पी. चन्द्रशेखर (एडिटर्स), डिसपोजेशन, डेप्रिवेशन एण्ड डेवलपमेन्ट : एसेज फॉर उत्सा पटनायक, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस।

फुलर, सी. जे. (2016), कालोनियल एन्थ्रोपोलॉजी एण्ड द डिक्लाइन ऑफ द राज : कास्ट, रिलिजन एण्ड पोलिटिकल चेन्ज इन इण्डिया इन द अरली ट्वन्टीएथ सेन्चुरी, जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसाइटी, 26(3), पृ. 463-486।

बागची, अमीय कुमार (1976), डिइण्डस्ट्रियलाइजेशन इन गैंगेटिक बिहार 1809-1901, इन बी.डे, एट एल. (एडिटर्स), एसेज इन आनर ऑफ प्रो. एस.सी. सरकार, न्यू देल्ही : पीपल्स पब्लिशिंग हाउस, पृ. 499-522।

बागची, अमीय कुमार (2010), कालोनियलिज्म एण्ड इण्डियन इकोनॉमी, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय, खण्ड-13 (1998), सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

बाशम, ए. एल. (1954)ए द वण्डर दैट वाज इण्डिया, लन्दनः पिकाडोर।

बुकनान, फ्रांसिस हैमिल्टन (1807)ए जर्नी फ्रॉम मद्रास थ्रू द कन्ट्रीज ऑफ मैसूर,कनारा एवं मालाबार, खण्ड-3, अमेरिकानाः हिगिन्बोथम एण्ड कम्पनी, पुनःमुद्रित क्रिएटिव मीडिया पार्टनर्स एल एल सी, (2013)।

मल्होत्रा, राजीव व नीलकन्दन, अरविन्दन (2011)ए ब्रेकिंग इंडिया , नई दिल्लीः अमारिलिस। मार्क्स, कार्ल (1853), द ब्रिटिश रूल इन इण्डिया, न्यूयार्क डेली ट्रिब्यून, 25 जून।

मार्क्स कार्ल (1853), द ईस्ट इण्डिया कम्पनी - इट्स हिस्ट्री एण्ड रिजल्ट्स, न्यूयार्क डेली ट्रिब्यून, 11 जुलाई।

मार्क्स, कार्ल (1853)ए द फ्यूचर रिजल्ट ऑफ ब्रिटिश रूल इन इण्डिया, न्यूयार्क डेली ट्रिब्यून, 8 अगस्त।

मैक्समूलर, जोर्जिना (एडिटर), (1902), द लाइफ एण्ड लेटर्स ऑफ द राइट आनरेबल फ्रेडरिक मैक्समूलर, लन्दन : लांग मैन्स, ग्रीन एण्ड कम्पनी।

मैकलिफे, मैक्स आर्थर (1909), सिख रिलिजनः इट्स गुरूज, सेक्रेड राइटिंग्स एण्ड आथर्स, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

मैडिसन, एंगस(2001),दवर्ल्डइकोनॉमीः ए मिलेनिअल पर्सपेक्टिव, पेरिसः ओ. ई.सी.डी. पब्लिकेशन

मुइर, जान (1858), ओरिजिनल संस्कृत टेक्स्ट्स आन द ओरिजिन एण्ड हिस्ट्री आफ द पिपुल ऑफ इण्डिया , देअर रिलिजन एण्ड इन्स्टीट्यूशन्स, लन्दनः ट्रूबनर।

रिश्ले, एच. एच. (1908), द पीपल ऑफ इण्डिया ,एडिटेड बाई डब्लू .क्रोक (1915),लण्दनः डब्लू.ठाकर एण्ड कम्पनी।

शर्मा, मनोज (एडिटर) (19 नवम्बर, 2018), हाउ मच मनी डिड ब्रिटेन टेक अवे फ्रॉम इण्डिया? अबाउट 45 ट्रिलियन डालर इन 173 ईयर्स, सेज टॉप इकोनॉमिस्ट, एचटीटीपीः//डब्लूडब्लूडब्लू.बिजनेसटूडे.

इन/करेन्ट/इकोनॉमी-पालिटिक्स/
दिस-इकोनॉमिस्ट-सेज-ब्रिटेन-टुक-अवे-यूएसडालर-45-ट्रिलियन-फ्रॉम-इण्डिया-इन- 173-ईयर्स/स्टोरी/292352.एचटीएमएल से पुनः प्राप्त।

श्रीकुमार, पी. (2009), फ्रांसीस व्हाइट इलिस एण्ड द बिगनिंग ऑफ कम्परेटिव द्रविडियन लिंगविस्टिक,हिस्टोरिओग्राफिआ लिंग्यूस्टिका,36(1),75-95।

श्रीनिवासन पी. ;2006), कैन वी क्रास द चाश्म? एजेन्सी एण्ड ओरियन्टलिस्ट डिस्कोर्स इन कालोनियल तमिल कान्टेक्स्ट, इन चन्द्रेयी नियोगी (एडिटर) रिओरिएन्टिंग ओरिएन्टलिज्म, नई दिल्ली: सेज प्रकाशन, पृ. 228-244।

शेरिंग, एम. ए. (1872), हिन्दू ट्राइब्स एण्ड कास्ट, लन्दन: ट्रबनर एण्ड कम्पनी।

सिंह, त्रिभुवन (2019), शूद्र कौन थे: अवलोकन और समीक्षा, इलाहाबाद: अनामिका प्रकाशन

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

साम्प्रतिक संदर्भ में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम : आवश्यकताएं एवं चुनौतियाँ

● रवि कान्त कुमार
●● सुनीता कुमारी

सारांश – समकालीन समय में भारत ही नहीं बल्कि वैश्विक स्तर पर सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। यह एक ऐसी औपचारिक व्यवस्था है जिसका उद्देश्य अपने समाज या क्षेत्र के रहवासियों एवं उनके परिवारों को आकस्मिक अप्रिय घटनाओं के समय एवं वृद्धावस्था में आने वाली आर्थिक समस्याओं से सुरक्षा प्रदान करना है। दूसरे शब्दों में कह सकते है कि किसी एक व्यक्ति या परिवार पर आने वाली आकस्मिक आर्थिक संकट को समाज के समस्त लोगों पर आवंटित कर उसका सरल समाधान तलाशना। साम्प्रतिक समाज वैश्वीकरण, औद्योगीकरण, नगरीकरण, आधुनिकीकरण, संस्कृतीकरण, संचार क्रांति एवं उपभोक्तावादी संस्कृति के दौर से गुजर रहा है। इसने समाज की विभिन्न पारंपरिक व्यवस्थाओं एवं संस्कृति में व्यापक परिवर्तन लाने का कार्य किया है। इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप ही समाज में संयुक्त परिवार का विघटन, धन की पूजा एवं व्यक्तिवादिता की भावना का विकास जैसे सामाजिक परिवर्तन संबंधी घटनाओं में वृद्धि दर्ज की जा रही है। ऐसी परिस्थिति में जब किसी व्यक्ति या परिवार को किसी अप्रिय घटना या विविध रूपों में आयी आकस्मिक आर्थिक संकट का सामना करना पड़ता है, तो उसके समक्ष असामाजिक कार्यों में संलिप्त होने, भुखमरी, कुपोषण के शिकार होने या आत्महत्या के अलावा कोई विकल्प नहीं रहता। ऐसी अकल्पनीय एवं आकस्मिक घटित होने वाली घटनाओं से तथा समाज के वैसे सदस्यों जो आर्थिक क्रिया में सहयोग करने में शारीरिक रूप से अक्षम हो जाते हैं, के लिए सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम की आवश्यकता महसूस होती है।

भारतीय परिवेश में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम को राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर जिन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रारंभ किया गया था, आज भी धरातल पर वह उससे मीलों दूर नजर आता है। समाज में बढ़ती असामाजिक घटनाएं, स्वास्थ्य के अभाव में दम तोड़ते गरीब, आर्थिक वंचना के शिकार बच्चे एवं युवावर्ग की उपस्थिति, समाज में वृद्धों की बढ़ती उपेक्षा एवं वृद्धाश्रम का बढ़ता महत्व आदि छवियां वर्तमान परिदृश्य में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम की अपेक्षित सफलता से दूर रहने की दिशा की ओर संकेत करती है। इसके लिए किसी एक या दो कारक को जिम्मेवार ठहराना समयोचित प्रतीत नहीं होता है। यदि हम उत्तराखण्ड की परिस्थितियों के अनुरूप बात करें तो समाज में बढ़ती जनसंख्या, जागरूकता का अभाव, भ्रष्टाचार, उपभोक्तावादी संस्कृति की चमक, भौगोलिक परिवेश, अशिक्षा आदि अनेक ऐसे कारक हैं, जो आज सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम की सफलता के मार्ग में बाधक हैं। बावजूद इसके इस पर्वतीय क्षेत्र में आज जिस रूप में यह कार्यक्रम संचालित किया जा रहा है, वह अपेक्षित रूप में उपयोगी साबित हो रही है। जरूरत सिर्फ इस बात की है कि इन योजनाओं की सफलता के मार्ग में आने वाली बाधाओं की पहचान कर उसका निराकरण समय रहते किया जाए। प्रस्तुत विषय के इसी महत्व के कारण इस शोध पत्र हेतु अध्ययन विषय के

● पोस्ट डॉक्टरल रिसर्च स्कॉलर (ICSSR, New Delhi), समाजशास्त्र विभाग राधे हरि राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय काशीपुर, उधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड
●● लुटाबड़ रामनगर, नैनीताल उत्तराखण्ड-244715

रूप में साम्प्रतिक संदर्भ में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम – आवश्यकताएं एवं चुनौतियाँ 'उत्तराखण्ड के विशेष संदर्भ में' शीर्षक का चयन किया गया है। यह अध्ययन मूल रूप से द्वितीयक तथ्यों पर आधारित एक वर्णनात्मक अध्ययन है। इसके लिए सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम के विविध पहलुओं पर द्वितीयक तथ्यों के आधार पर प्रकाश डाला गया है तथा इसी के आधार पर निष्कर्ष का आलेखन किया गया है।

शब्द कुँजी - वैश्विक समाज, औपचारिक व्यवस्था, संचार क्रांति, उपभोक्तावादी संस्कृति, आर्थिक वंचना, वृद्धावस्था पेंशन, श्रसाध्य, मलिन बस्ती, वृद्धाश्रम, अनौपचारिक नियंत्रण

प्रस्तावना – सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम साम्प्रतिक वैश्विक परिदृश्य में सर्वाधिक महत्वपूर्ण मुद्दों में एक है। इसके लिए आज प्रत्येक राष्ट्र विविध रूपों में यह कार्यक्रम संचालित कर रहा है। सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम का सामान्य तात्पर्य अपने समाज के लोगों को उनके भविष्य के प्रति जागरूक करना तथा आने वाली संभावित समस्याओं तथा आर्थिक संकटों से सुरक्षित करने संबंधी प्रावधानों को सुनिश्चित करने से है। सार्वभौमिक मानव अधिकार घोषणा (संयुक्त राष्ट्र महासभा संकल्प 21 क, 1948) के अनुच्छेद 22 में सामाजिक सुरक्षा को स्पष्ट करते हुए लिखा गया है कि ''समाज के सदस्य के रूप में, प्रत्येक व्यक्ति को सुरक्षा का अधिकार है और वह राष्ट्रीय प्रयासों, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग, प्रत्येक राज्य की संस्था तथा संसाधन, अर्थव्यवस्था तथा व्यक्ति की प्रतिष्ठा के लिए अनिवार्य सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों के माध्यम से और अपने व्यक्तित्व के मुक्तक विकास के अनुसार सामाजिक सुरक्षा पाने का हकदार है। इसी घोषणा के अनुच्छेद 23 में यह स्पष्ट रूप में उल्लेखित है कि ''काम करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाए, यदि संभव हो तो सामाजिक सुरक्षा के किसी अन्य माध्यम द्वारा'' इन तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम किसी भी समाज की इकाई के स्वस्थ विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

समकालीन समय में भारत ही नहीं बल्कि वैश्विक स्तर पर सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। यह एक ऐसी औपचारिक व्यवस्था है जिसका उद्देश्य अपने समाज या क्षेत्र के रहवासियों एवं उनके परिवारों को आकस्मिक अप्रिय घटनाओं के समय एवं वृद्धावस्था में आने वाली आर्थिक समस्याओं से सुरक्षा प्रदान करना है। यह कोई नवीन कार्य या सामाजिक आवश्यकता नहीं है, बल्कि सामाजिक व्यवस्था के आरंभिक काल से ही यह प्रावधान किसी न किसी रूप में मौजूद रही है। उस समय इस प्रकार की परिस्थिति का सामना अन्य रूपों में अनौपचारिक तरीके से समाज के सदस्यों के द्वारा किया जाता था। वर्तमान स्वरूप में इस कार्यक्रम या योजना की शुरूआत उन्नीसवीं सदी की देन है। वैश्विक स्तर पर सर्वप्रथम सामाजिक सुरक्षा से जुड़े प्रावधान का श्रेय जर्मनी को जाता है, जिसने 1884 में तात्कालिक चांसलर वॉन विस्मार्क के समय कामगार क्षतिपूर्ति कार्यक्रम की शुरूआत की, तत्पश्चात 1888 में बीमारी बीमा योजना की शुरूआत की गयी। इसी दौरान ब्रिटेन एवं अमेरिका में भी सामाजिक सुरक्षा से जुड़े विविध प्रावधान किए जा रहे थे। ब्रिटेन में सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करने लिए 1897 में कामगार क्षतिपूर्ति अधिनियम तथा 1911 में राष्ट्रीय बीमा अधिनियम का प्रावधान किया। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद परिवर्तित परिस्थितियों एवं राजनीतिक तथा लोकतांत्रिक प्रणाली के बढ़ते महत्व के कारण

तात्कालिक प्रभाव से यहां की जनता के लिए एकीकृत सामाजिक सुरक्षा प्रणाली की स्थापना की गई। अमेरिका में भी 1900 से 1920 के बीच की अवधि में इस व्यवस्था का बीजारोपन का कार्य हो गया था लेकिन इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाने का प्रमाण सामाजिक सुरक्षा अधिनियम 1935 के लागू होने के बाद मिलता है। इसके बाद ही सन् 1943 में एकीकृत राष्ट्रीय सामाजिक बीमा प्रणाली लागू किया गया है।

सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम भारतीय सामाजिक परिवेश में बेहद महत्वपूर्ण कदम है। आजादी के बाद स्थापित लोकतांत्रिक शासन में नागरिकों को स्वस्थ जीवन का अधिकार प्रदान किया गया है। 2011 की जनगणना के अनुसार यहां की कुल जनसंख्या 1210193422 है, जिनमें 1210.85 मिलीयन युवा वर्ग है जबकि आर्थिक रूप से श्रमसाध्य कार्य करने में अक्षम बुजुर्ग व्यक्तियों की संख्या लगभग 104 मिलीयन है। एक बिडम्बना यह भी है कि आज के दौर में बदलती रोजगार की प्रकृति, औद्योगीकरण तथा तकनीकी के विकास ने शिक्षित बेरोजगारों की एक बड़ी फौज खड़ी करने का कार्य किया है। पीउ रिसर्च सेन्टर के एक रिपोर्ट के अनुसार वर्तमान समय में देश की लगभग 18.6 मिलीयन व्यक्ति बेरोजगार हैं, जबकि 393.7 मिलीयन किसी तरह अस्थायी एवं योग्यता के परे काम से जुड़कर अपने एवं अपने परिवार का भरण-पोषण कर रहे हैं। ये बेरोजगार या आंशिक रूप से रोजगारपरक व्यक्ति आज अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तथा भौतिकवादी चकाचौंध से दिग्भ्रमित होकर अपराध की दिशा में बढ़ जाते हैं। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण एनसीआरबी के ऑकड़ों से पता चलता है। एक अध्ययन में यह भी पता चला है कि आज भी आर्थिक रूप से पिछड़े समाज के युवा एवं मलिन बस्तियों में निवास करने वाले युवा अपराधिक गतिविधियों में अधिक संलिप्त है। योजना जुलाई 2017 में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में आर्थिक रूप से गरीबी रेखा से उपर जीवन यापन करने वाले व्यक्तियों में से प्रत्येक वर्ष छह करोड़ तीस लाख व्यक्ति अपने आर्थिक स्थिति में गिरावट के कारण गरीबी रेखा के नीचे या उसके आस-पास की स्थिति को प्राप्त करता है। इसका एक प्रमुख कारण है, बदलते समय के साथ मंहगी होती चिकित्सा व्यवस्था। ऐसे में एक स्वस्थ समाज के निर्माण के लिए यह अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि उसके समस्त इकाई और खासकर जो आर्थिक रूप से निम्न वर्गीय श्रेणी से है, के लिए सामाजिक सुरक्षा का प्रावधान किया जाए।

भारत में सामाजिक सुरक्षा के दृष्टिगत सर्वप्रथम सन 1923 में कामगार श्रमिक अधिनियम का प्रावधान किया गया है। वर्तमान समय में विविध रूप में संचालित पेंशन योजनाएं, सहायता योजाएं तथा बीमा योजनाएं इस बदलती परिस्थितियों की मांग के कारण अस्तित्व में है। उत्तरांखण्ड सरकार द्वारा वर्तमान समय में केन्द्र प्रायोजित सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम को अपने परिवेश की मांग के अनुरूप लागू करने का प्रयास किया गया है। वर्तमान समय में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की बहुद्देशीय सामाजिक सुरक्षा योजना जिनमें प्रधानमंत्री जीवन ज्योति बीमा योजना, प्रधानमंत्री सुरक्षा बीमा योजना, आयुष्मान भारत तथा अटल पेंशन योजना के अतिरिक्त अशक्त एवं वृद्ध गृहों का संचालन, राजकीय भिक्षुक गृह का संचालन, वृद्धावस्था पेंशन योजना, राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम आदि योजनाओं का संचालन किया जा रहा है। जिनसे राज्य का एक बड़ा वर्ग लाभान्वित हो रहा है।

अध्ययन की प्रासंगिकता एवं उद्देश्य - प्रस्तुत शोध पत्र शीर्षक साम्प्रतिक संदर्भ में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम - आवश्यकताएं एवं चुनौतियाँ 'उत्तरांखण्ड के विशेष संदर्भ

में' वर्तमान समय में चलाए जा रहे विविध सुरक्षा कार्यक्रम पर केन्द्रित है। आज के दौर में जब आर्थिक प्रतिस्पर्धा दिन-प्रतिदिन तीव्र गति से बढ़ती जा रही है। ऐसे में वैसे परिवार जो आर्थिक रूप से पिछड़े हुए हैं, को विशेष अवसर पर आर्थिक सुरक्षा मुहैया कराई जा रही है। लेकिन धरातल स्तर पर किए अवलोकन से पता चलता है कि सामाजिक सुरक्षा से जुड़े बहुत सी योजनाओं से आज भी सामान्य जन और खासकर दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों में निवास करने वाले गरीब ग्रामीण अनभिज्ञ हैं। ऐसे में इस प्रकार के कार्यक्रम की अपेक्षित सफलता कोरी कल्पना प्रतीत होती है।

प्रस्तुत अध्ययन इस बात को जानने पर केन्द्रित है कि भारत के नवगठित पर्वतीय राज्य उत्तरांखण्ड में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम की वास्तविक दशा क्या है। यहां की किन परिस्थितियों के कारण इस प्रकार की योजनाएं संचालित किया जाना आवश्यक है तथा इसके मार्ग में आने वाली प्रमुख बाधाएं क्या है। इन सूचनाओं के आधार पर न केवल सरकारी स्तर पर संचालित योजनाओं के क्रियान्वयन में मदद मिलेगी बल्कि सामाजिक जागरूकता लाने के लिए भी एक निश्चित दिशा का आकलन करने में सहायक साबित होगी।

अध्ययन के उद्देश्य - उपर्युक्त तथ्यों एवं अध्ययन की प्रासंगिकता को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन कार्य हेतु अध्ययन के उद्देश्यों का निर्धारण किया है, जो इस प्रकार है-

1. उत्तराखण्ड में संचालित प्रमुख सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम के स्वरूप अध्ययन करना
2. उत्तराखण्ड में संचालित प्रमुख सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम की वास्तविक दशा का अध्ययन करना
3. उत्तराखण्ड में संचालित प्रमुख सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम के अपेक्षित परिणाम में बाधक कारकों का अध्ययन करना

सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम की आवश्यकताएँ - आज के दौर में विविध रूपों में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम के बढ़ती आवश्यकताओं का एक प्रमुख कारण है, समाज की बदलती सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियां। साम्प्रतिक समाज वैश्वीकरण, औद्योगीकरण, नगरीकरण, आधुनिकीकरण, संस्कृतीकरण, संचार क्रांति एवं उपभोक्तावादी संस्कृति के दौर से गुजर रहा है। इसने समाज की विभिन्न पारंपरिक व्यवस्थाओं एवं संस्कृति में व्यापक परिवर्तन लाने का कार्य किया है। इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप ही समाज में संयुक्त परिवार का विघटन, परिवार के बुजुर्ग सदस्यों का महत्वहीन होना, धन की पूजा एवं व्यक्तिवादिता की भावना जैसे विचारों एवं संस्कृतियों का महत्व बढ़ गया। भारतीय संस्कृति में कुछ समय पूर्व तक परिवार ही नहीं बल्कि समाज में भी बुजुर्ग सदस्यों को सम्मानपूर्वक स्थान प्राप्त था। उन्हें परिवार की रीढ़ माना जाता था। बदलते समय के साथ इस स्थिति में व्यापक परिवर्तन परिलक्षित होता है। आज के दौर में घर के बुजुर्ग जो आर्थिक क्रिया करने में अक्षम हो जाते हैं, को बोझ समझा जाने लगा है। आलम यह हो गया है कि बच्चे अपने माता-पिता को साथ रखने तक को तैयार नहीं है। समाज में ऐसे जीवन जी रहे कुछ बुजुर्गों से बात करने पर जो बातें सामने आयी, उन्हें इन पंक्तियों के रूप में कलमवद्ध किया जा सकता है -

जीने की आरजू थी मेरी,
जिन्दगी ने साथ छोड़ दिया।
कल तक जिनको अपना माना,
दिल आज उसी ने तोड़ दिया।।

ऐसी परिस्थिति में जीवन-यापन करने वाले व्यक्ति के लिए सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है। आज यह स्थिति केवल वृद्धजनों के साथ नहीं है, बल्कि विधवा एवं अपंग व्यक्ति भी इस प्रकार की उपेक्षा का दंश झेलने को मजबूर है। साथ ही ऐसे परिवार के लिए जिसकी आर्थिक स्थिति को संचालित करने वाले सदस्यों के साथ कोई अप्रिय घटना घटित हो गयी हो या परिवार के किसी सदस्यों की गंभीर बीमारी के कारण परिवार का आर्थिक बजट बिगड़ गया हो, के समक्ष असामाजिक कार्यों में संलिप्त होने या आत्महत्या के अलावा कोई विकल्प नहीं रहता था। ऐसी परिस्थिति में इस प्रकार के कार्यक्रम की व्यवस्था कर किसी एक परिवार या इकाई की आर्थिक समस्या को समाज या राज्य की समस्या बनाकर उसका आसान समाधान निकाला जाता है। यही कारण है कि बदलते सामाजिक परिवेश में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम न केवल समाज की जरूरत बन गयी है बल्कि आज के समय में एक स्वस्थ समाज के संचालन के लिए आवश्यक शर्त भी बन गयी है। इसके अभाव में स्वस्थ समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती है।

उत्तराखण्ड में संचालित प्रमुख सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम एवं उसकी वास्तविक दशा वर्तमान समय में उत्तराखण्ड में विविध रूपों में सामाजिक सुरक्षा एवं कल्याण संबंधी कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है (स्रोत - www.ssp.uk.gov.in)-

1. अशक्त एवं वृद्ध गृहों का संचालन- वृद्ध एवं अशक्त पुरूषों एवं महिलाओं के लिए 50 की क्षमता के दो आवासीय गृह चमोली एवं बागेश्वर में संचालित हो रहे हैं। इसमें 60 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्तियों को आवासीय सुविधा तथा निःशुल्क भोजन, औषधि आदि की व्यवस्था का प्रावधान है।
2. राजकीय भिक्षुक गृह का संचालन - भिक्षावृति जैसी सामाजिक कुप्रथा को हतोतसाहित करने तथा उसके उन्मूलन के उद्देश्य से वर्ष 1975 से उ.प्र.सरकार ने भिक्षावृति प्रतिषेध अधिनियम लागू किया है। इसके अतर्गत उत्तराखण्ड के हरिद्वार स्थित प्रदेश का एकमात्र भिक्षुक गृह संचालित है। इसमें 200 भिक्षुओं को रखने की व्यवस्था है।
3. अकिंचन मृतकों के दाह-दफन संस्कार हेतु अनुदान- लावारिस शवों तथा निर्धन व्यक्तियों की मृत्यु की दशा में उनके अन्तिम संस्कार हेतु राज्य सरकार प्रति व्यक्ति रूपये 2500 की दर से दाह संस्कार पर व्यय करती है।
4. कश्मीरी विस्थापितों को आर्थिक सहायता- प्रदेश में कश्मीरी विस्थापितों के लिए आर्थिक सहायता योजना संचालित है, जनपद देहरादून में लगभग 43 कश्मीरी विस्थापित परिवार हैं, इन परिवारों के भरण-पोषण हेतु पूर्व में रू. 750 प्रतिमाह की आर्थिक सहायता प्रदान की जाती थी। इस भरण-पोषण की धनराशि को पुनरीक्षित करते हुए 01 अप्रैल, 2005 से रूपये 1125 प्रतिमाह कर दिया गया है। भरण-पोषण की धनराशि लाभार्थियों को जिलाधिकारी के माध्यम से दी जाती है।
5. वृद्धावस्था पेंशन योजना - सामाजिक सुरक्षा के अतर्गत निराश्रित वृद्धजनों को उनके भरण-पोषण हेतु वृद्धावस्था पेंशन योजना लागू की गयी है। जिसमें 60 वर्ष से अधिक आयु के निराश्रित वृद्धजनों को निम्न मानकों/शर्तों के अतर्गत पेंशन प्रदान करने की योजना है।

पेंशन पाने हेतु नियम –

- लाभार्थी की उम्र 60 वर्ष या अधिक होनी चाहिए।
- लाभार्थी बी.पी.एल. परिवार का हो अथवा उसकी मासिक आय रू. 4000 तक हो।
- अभ्यर्थी के कोई पुत्र/पौत्र यदि 20 वर्ष से अधिक आयु के हो किन्तु गरीबी की रेखा के नीचे जीवन–यापन कर रहे हो तो ऐसे अभ्यर्थी पेंशन से वंचित नहीं किया जायेगा।
- गरीबी की रेखा के नीचे जीवन–यापन करने वाले 60 वर्ष से अधिक आयु के समस्त अभ्यर्थी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना में पात्र होंगे।
- 60 वर्ष या अधिक आयु के वृद्धजन जो बी. पी. एल. चयनित परिवार के सदस्य न हों उन्हें पेंशन की पूरी धनराशि राज्य सरकार द्वारा दी जाती है।

6. राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (एन. एस. ए. पी.) – इस योजना के अंतर्गत प्रदेश में चार प्रकार की उपयोजनाओं का संचालन किया रहा है–

- इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना– यह योजना राज्य सरकार द्वारा संचालित की जा रही वृद्धावस्था पेंशन योजना के साथ संचालित की जाती है। 60 वर्ष एवं इससे ऊपर के पेंशनर जो बी. पी. एल. परिवार के हों, को रूपये 1000 प्रतिमाह पेंशन दी जाती है। जिसमें 80 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों को रूपये 200 प्रतिमाह केन्द्र सरकार द्वारा तथा रूपये 800 राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है। 80 वर्ष से अधिक आयु के वृद्धों को मिलने वाले पेंशन में केन्द्र सरकार द्वारा देय बढ़कर रूपये 500 प्रतिमाह हो जाता है तथा राज्य सरकार का देय रूपये 800 से घटकर रूपये 500 और कुल रूपये 1000 प्रतिमाह हो जाता है।
- इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय दिव्यांग पेंशन योजना– इस योजना में निराश्रित दिव्यांग पेंशन पाने के पात्र व्यक्तियों में से ही बी० पी० एल० चयनित परिवारों के 18 वर्ष से 59 वर्ष आयु के 80 प्रतिशत दिव्यांगता अथवा बहुदिव्यांगता वाले दिव्यांग व्यक्तियों को इस योजना का लाभ दिया जाता है। इस योजना में राज्य सरकार द्वारा रूपये 700 तथा केन्द्र सरकार द्वारा रूपये 300 कुल रूपये 1000 प्रतिमाह पेंशन दी जाती है।
- इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन योजना– इस योजना में वैसी विधवा महिला को जो निराश्रित हों, में से ही बी. पी. एल. चयनित परिवारों की 40 वर्ष से 79 वर्ष आयु वर्ग की विधवा महिलाओं को पात्र माना जाता है। इस योजना में दिनांक 1.10.2012 से राज्य सरकार द्वारा रूपये 700 तथा केन्द्र सरकार द्वारा रूपये 300 कुल रूपये 1000 प्रतिमाह पेंशन दिए जाने का प्रावधान किया गया है।
- राष्ट्रीय पारिवारिक लाभ योजना – इस योजना में ऐसे परिवार जो बी० पी० एल० की श्रेणी में आते हैं, के कामगार सदस्य की मृत्यु होने पर रूपये 20,000 की सहायता राशि दिये जाने का प्रावधान है, जिसके लिए आयु सीमा 18 से 59 वर्ष निर्धारित की गयी है। इसका संचालन जिला समाज कल्याण अधिकारी द्वारा किया जाता है। यह योजना पूर्णरूपेन केन्द्र प्रायोजित है।

7. निराश्रित विधवाओं की पुत्रियों के विवाह हेतु अनुदान– इस योजना के अंतर्गत वैसी निराश्रित विधवायें जो कि विधवा पेंशन पाने की पात्र होती है, की पुत्रियों के विवाह हेतु रूपये 50,000 का अनुदान दिया जाता है।

8. अन्तर्जातीय/अन्तर्धार्मिक विवाह हेतु प्रोत्साहन योजना– इस योजना का उद्देश्य अन्तर्जातीय/अन्तर्धार्मिक विवाह को प्रोत्साहन देना है। इसके लिए सरकार द्वारा ऐसे युवक/युवतियों को जो अन्तर्जातीय/अन्तर्धार्मिक विवाह करते हैं, को प्रोत्साहन स्वरूप रूपये 50,000 एकमुश्त प्रदान किये जाने का प्रावधान है।

सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम की चुनौतियॉं – भारतीय परिवेश में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम को राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर जिन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रारंभ किया गया था, आज भी धरातल पर वह उससे मीलो दूर नजर आता है। समाज में बढ़ती असामाजिक घटनाएं, स्वास्थ्य के अभाव में दम तोड़ते गरीब, आर्थिक वंचना के शिकार कामगार मजदूर तथा इसके परिणामस्वरूप पनपते बाल अपचार एवं बाल श्रमिक, समाज में वृद्धों की बढ़ती उपेक्षा एवं वृद्धाश्रम का बढ़ता महत्व, अपने ही घर में उपेक्षित एवं बंधुआ मजदूर की जिन्दगी जीने को मजबूर बुजुर्ग आदि छवियां वर्तमान परिदृश्य में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम की अपेक्षित सफलता से दूर रहने की दिशा की ओर संकेत करती है। इसके लिए किसी एक या दो कारक को जिम्मेवार ठहराना समयोचित प्रतीत नहीं होता है। समाज में बढ़ती जनसंख्या, जागरूकता का अभाव, भ्रष्टाचार, उपभोक्तावादी संस्कृति की चमक, अनौपचारिक नियंत्रण के साधनों की ढ़ीली पकड़, भौगोलिक परिवेश, अशिक्षा, संवादहीनता (कम्यूनिकेशन गेप) आदि अनेक ऐसे कारक हैं, जो आज सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम की सफलता के मार्ग में बाधक है।

हमारे देश की जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ रही है। यदि हम आजादी के बाद हुए जनगणना के आंकड़ों पर दृष्टि डालें तो पता चलता है कि आखिर क्यूं सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम अपने अपेक्षाओं पर खड़ा होने से वंचित रह जाती है। 1951 से 2011 तक की जनसंख्या वृद्धि दर (प्रतिशत में) एवं साक्षरता दर (महिला एवं पुरूष) का विवरण सारणी संख्या 01 में दर्शाया गया है।

सारणी संख्या 01

स्रोत – http://censusindia.gov.in

क्षेत्र	आंकड़े की प्रकृति		2011	2001	1991	1981	1971	1961	1951
भारत	जनसंख्या वृद्धि (प्रतिशत में)		17.64	21.54	23.87	24.66	24.80	21.64	13.31
	साक्षरता दर	पुरूष	82.1	75.9	64.1	56.4	46.0	40.4	27.2
		महिला	65.5	54.2	39.3	26.6	22.0	15.4	08.9
उत्ताराखण्ड	जनसंख्या वृद्धि (प्रतिशत में)		18.81	19.20	उत्ताराखण्ड राज्य का गठन 9 नवम्बर 2000 को हुआ था। इसके कारण 2001 से पूर्व विषय से संबंधित पूर्व का डेटा अनुपलब्ध है।				
	साक्षरता दर	पुरूष	87.40	83.28					
		महिला	70.01	59.63					

समाज में तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या एवं अपेक्षित रूप में महिलाओं की जो किसी समाज की आधी आबादी होती है, कि निम्न साक्षरता दर आज भी सामाजिक विकास में बाधक है। यह इस समाज में किसी भी प्रकार की योजनाओं को लागू करने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बाधक है। इसके अतिरिक्त इन समाजों में आज भी किसी न किसी रूप में जातिवादी विचारधारा एवं भाई–भतीजावाद की भावना प्रबल है। इसके परिणामस्वरूप समाज के आर्थिक पिछड़ेपन के शिकार तबकों तक सरकारी योजनाओं का लाभ अपेक्षित रूप में नहीं मिल पाते हैं। सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम के मार्ग में एक और सर्वाधिक

महत्वपूर्ण कारक की चर्चा किया जाना आवश्यक प्रतीत होता है जिसके कारण इसका लाभ वास्तविक पीड़ित तक नहीं पहुंच पाता है, वह है भ्रष्टाचार। आज उत्तराखण्ड ही नहीं बल्कि भारत का हर राज्य इसकी चपेट में है। आज यदि चंद नौकरशाहों एवं राजनीतिज्ञों को छोड़ दिया जाए तो सभी दूसरे का हक छीनने को तैयार बैठा है। इससे बचने के लिए सरकारी स्तर पर पारदर्शिता लाने हेतु अनेक प्रावधान किए जा रहे हैं, बावजूद इसके वास्तविक स्थिति में विशेष परिवर्तन दिखाई नहीं दे रहा है। आज न तो जिनका अधिकार छीन रहा है वो अपने अधिकार के प्रति जागरूक है और न ही अधिकारी इसके लिए उसमें जागरूकता लाना चाहते हैं। ऐसे में किसी भी योजनाओं की सफलता की बात करना उचित प्रतीत नहीं होता है। आज जरूरत इस बात की है कि एक ओर भ्रष्ट राजनीतिज्ञों एवं नौकरशाहों में नैतिकता की भावना जागृत की जाए तथा जनता को उसके लिए संचालित योजनाओं से अवगत कराने के लिए गैर सरकारी संगठन एवं संचार माध्यमों से धरातल स्तर पर काम को महत्व प्रदान किया जाए।

निष्कर्ष - सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम सरकार की प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से संचालित एक बेहद महत्वपूर्ण योजना है। आज के बदलते परिवेश में यह इसलिए भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि समाज का एक बड़ा वर्ग निराश्रित जीवन जीने को विवश है। इसके अतिरिक्त समाज का एक बड़ा वर्ग गरीबी रेखा के नीचे जीवन व्यतीत कर रहा है या उस रेखा के इर्द-गिर्द कहीं उपर की स्थिति में है। ऐसी स्थिति में जीवन-यापन करने वाले व्यक्ति या परिवार के लिए जब कभी आकस्मिक आर्थिक बोझ बढ़ता है तो वह अकेले उसका सहन करने में सक्षम नहीं होते। इस प्रकार की परिस्थिति से बचाने के लिए ही राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर इस प्रकार की योजनाओं का संचालन किया जाता है। विडम्बना यह है कि आज के दौर में भी समाज में इतनी अज्ञानता है कि किसी भी योजना की जानकारी सही स्वरूप में पीड़ित एवं लक्षित समूह वर्ग तक नहीं पहुंच पाते हैं। यदि पहुंच भी जाते हैं तो समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ जाती है, जिसके कारण इस प्रकार की योजनाएं अपेक्षित परिणाम देने में अक्षम प्रतीत होती है। आज जरूरत इस बात की है कि इन समस्याओं का समाधान तलाशते हुए योजनाओं को लक्षित वर्ग तक पहुंचाया जाए। इसके बिना अपेक्षित परिणाम की कल्पना कभी साकार रूप धारण नहीं कर सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

योजना जुलाई 2017

युथ इन इंडिया, भारत सरकार, 2017

www.ssp.uk.gov.in

www. censusindia.gov.in

www.uk.gov.in

www.india.gov.in

www.socialwelfare.uk.gov.in

www.schooleducation.uk.gov.in

www.pewresearch.org

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

सहरसा जिला में प्राथमिक विद्यालय के मुसहर समुदाय के बच्चों में पोषणीय स्थिति पर मध्याह्न भोजन का प्रभाव

● माधुरी कुमारी

सारांश :-सहरसा जिलान्तर्गत मुसहर समुदाय के बच्चें सर्वाधिक कमजोर एवं उपेक्षित माने जाते हैं, जो पोषणाभाव के कारण कुपोषित होते हैं। बच्चों के विकास में पोषण का प्रभाव पड़ता है, जिसके कारण बच्चों के बीच विद्यालय के द्वारा प्रदर्शन खराब होता है। इस शोध पत्र में स्कूली बच्चों की पोषणीय स्थिति पर मध्याह्न भोजन कार्यक्रम का प्रभाव को ऑकलन करने का प्रयास किया गया है। उपलब्ध परिणामों से ज्ञात होता है कि प्राथमिक विद्यालय के मुसहर समुदायों के लड़कें-लड़कियों की ऊंचाई और वजन उस आयु वर्ग के लिए आई.सी.एम.आर. मानकों से कम है। उक्त बच्चों को विद्यालय द्वारा जो मध्याह्न भोजन उपलब्ध कराया जाता है, वह उनके घरेलू भोजनों की तुलना में कहीं अधिक उच्च स्तरीय सिद्ध होता है। अत: पौष्टिक व्यंजनों की और अधिक मात्रा मध्याह्न भोजन कार्यक्रम में शामिल की जानी चाहिए ताकि आई.सी.एम.आर. मानदंडों को पूरा किया जा सके।

मुख्य शब्द - मुसहर, पोषण, मध्याह्न भोजन कार्यक्रम, आई.सी.एम.आर., कुपोषण

प्रस्तावना - प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का विशेष महत्व होता है क्योंकि यही स्तर आगे होने वाले ज्ञान का आधार वर्ष है। प्राथमिक शिक्षा के सार्वीकरण की आवश्यकता प्रसांगिक है। केरल जैसे कुछ राज्यों में बच्चों का नामांकन पहले से ही शत-प्रतिशत है, अत: वहाँ गुणवत्ता पर बल देने की आवश्यकता है। परन्तु आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान, झारखंड और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में नामांकन अब भी एक प्रमुख समस्या है। जिन राज्यों में नामांकन बढ़ा है, परन्तु वहाँ विद्यालय में विद्यार्थियों की कम उपस्थिति और विद्यालय छोड़ने (छीजन) संबंधी समस्या अब भी बनी हुई है।[1]

भारत में स्कूल जाने वाले बच्चे की आबादी कुल आबादी का 20-25 प्रतिशत हैं। भारत में लगभग 40 प्रतिशत बच्चों को उनके आवश्यकताओं की अपेक्षा अपर्याप्त पौष्टिक आहार मिलने के कारण अल्पपोषित या कुपोषित हैं।[2] बच्चे महत्वपूर्ण मानव क्षमता में योगदान करते हैं और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था एवं विकास को शक्ति प्रदान करते हैं। विद्यालीय उम्र बच्चों के लिए विकास की उम्र होती है। इस उम्र के बच्चों के स्वास्थ्य और पोषण की स्थिति बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि किसी भी देश में बच्चों की 6-12 वर्ष की आयु सीखने, परिपक्वता और शारीरिक विकास की अवधि है।[3] इस उम्र में बच्चें तेजी से शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक परिवर्तनों से गुजरता है। पोषण स्वास्थ्य, श्रम उत्पादकता और मानसिक विकास का एक प्रमुख निर्धारक तत्व होने के नाते सर्वाधिक बुनियादी जरूरत है। बच्चों की पोषण स्थिति बेहतर होगी तो देश का सर्वांगीण विकास होगा।[4]

● कावेरी-15, वास्तु विहार, बैजनाथपुर, सहरसा(बिहार)

पर्याप्त पोषण बच्चे के वृद्धि और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं जो जीवन के बाद के वर्षों में वृद्धि को प्रभावित कर सकता है। वास्तव में विद्यालीय बच्चों के समक्ष आने वाली मुख्य पोषण संबंधी समस्याओं में रूग्न वृद्धि, एनीमिया, कम वजन और विटामिन ए की कमी शामिल है।

भारत सरकार ने प्रारंभिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण हेतु अनेक कार्यक्रम चलाया और विभिन्न प्रकार की योजनाओं को विकेन्द्रित किया जिसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्यक्रम मध्याह्न भोजन कार्यक्रम संचालित है। राष्ट्रीय कार्यक्रम के अंतर्गत प्राथमिक शिक्षा में नामांकन, ठहराव और उपस्थिति बढ़ाने, छीजन को कम करने और बच्चें की पोषण स्थिति में सुधार करने के उद्देश्य से यह कार्यक्रम शुरू किया गया। प्राथमिक विद्यालीय बच्चों को इस कार्यक्रम के अंतर्गत सभी कार्य दिवसों में मुफ्त भोजन उपलब्ध कराया जाता है जो ग्रामीण एवं शहरी दोनों क्षेत्रों के विद्यालीय बच्चों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करती है।[5] आज तक 'क्लास रूम हंगर' (भूखे पेट पढ़ाई) से बच्चे पढ़ाई पर ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते थे और जिससे उनकी ज्ञान हासिल करने की क्षमता भी घटती रही है।[6]

भोजन में 450 किलों कैलोरी के साथ-साथ 12 ग्राम प्रोटीन व 700 किलों कैलोरी और 20 ग्राम प्रोटीन क्रमशः 1-5 तथा 6-8 वर्ग के बच्चों को राष्ट्रीय कार्यक्रम के अंतर्गत प्रदान किया जाना चाहिए। इसके साथ-ही आयरन, फौलिक एसिड, विटामिन-ए इत्यादि सूक्ष्म पोषक तत्वों की पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए।

अच्छा पोषण स्वास्थ्य का एक बुनियादी घटक है। यह शरीर के देखभाल और रोग की रोकथाम में मुख्य भूमिका निभाती हैं। प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को पोषण संबंधी सहायता को गुणवत्तापूर्ण मुफ्त और अनिवार्य सार्वभौमिक प्रारंभिक शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से समीचीन माना गया है, इसके अंतर्गत नामांकन वृद्धि, विद्यालय में उपस्थिति व ठहराव और बच्चों के पोषणीय क्षमता को बढ़ावा देकर प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण को प्रोत्साहित किया जाता है।[7]

विदित हो कि भारत में मुसहर समुदाय को सबसे अधिक उपेक्षित वर्ग माना गया है। विडम्बना तो ये है कि दलितों समुदायों में भी उन्हें सामाजिक स्तर पर अति तुच्छ माना जाता है। इन्हें 'दलितों में दलित' कहा जाता है। कुछ वर्ष पहले इन्हें बिहार सरकार द्वारा महादलित का दर्जा दिया गया था। भारतीय जनगणना, (2011) के अनुसार देश की साक्षरता दर 74 प्रतिशत है, जिसमें 82.1 प्रतिशत पुरुष व 65.5 प्रतिशत महिलाओं की है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, (2010) के अनुसार भारत में 45 प्रतिशत दलित निरक्षर हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के 62.2 प्रतिशत दलित महिला निरक्षर हैं। महादलित आयोग, (2007) के अनुसार 91 प्रतिशत मुसहर गैर-साक्षर हैं और चौंकाने वाली बात तो यह है कि 98 प्रतिशत मुसहर महिलाएँ गैर-साक्षर हैं। मुसहर समुदाय के बीच बच्चों की शिक्षा की स्थिति बहिष्कृत और भेदभावपूर्ण होने के कारण साक्षरता दर और इनके शिक्षा स्तर में काफी गिरावट आई है।[8]

ऐसे कई कारण हैं कि मुसहर बच्चें का विद्यालय से छीजन दर काफी हैं, जिसमें गरीबी एक प्रमुख कारण हैं। मुसहर को पर्याप्त और पोषण युक्त भोजन नहीं मिलने के कारण इनके बच्चें अधिकांशतः बीमार और कुपोषित रहते है। विकासशील देशों के साथ यह दुर्भाग्य सन्निहित है कि कुपोषण के परिणाम स्वरूप बच्चों का स्वास्थ्य रूग्ण होता है, जिसके कारण मृत्यु दर उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है। यह वैश्विक केन्द्रीय समस्या है जो प्रति वर्ष

विश्व के आधे बच्चों की मृत्यु दर बढ़ाती है।

सामग्री एवं विधि :न्यार्दशों का चयन –बिहार राज्य अवस्थित सहरसा जिला अंतर्गत प्राथमिक विद्यालय के मुसहर समुदाय के 200 बच्चों को न्यायर्दश के रूप में चयनित किया गया।

आँकड़ों का संग्रहण – चयनित विद्यालय में, मुसहर समुदाय के लड़कें – लड़कियों को एंथ्रोपोमेट्री, नैदानिक परीक्षा और शैक्षिक उपलब्धि के लिए प्रत्येक कक्षा से यादृच्छिक रूप में चुना गया। एंथ्रोपोमेट्री (ऊंचाई और वजन) और नैदानिक परीक्षा द्वारा बच्चों के पोषण की स्थिति का आॅकलन किया गया।

सारणी 01

मध्याह्न भोजन प्राप्त करने वाले प्राथमिक विद्यालय के मुसहर समुदाय के लड़का एवं लड़की की औसत ऊंचाई की तुलना आई.सी.एम.आर. मानकों के साथ

उम्र (वर्ष में)	आई.सी.एम. आर. मानक ऊंचाई (सें.मी.में)	न्यार्दशों की संख्या (N)	मुसहर समुदाय के लड़कें		मुसहर समुदाय के लड़कियाँ	
			औसत ऊंचाई (सें.मी.में)	अंतर मान	औसत ऊंचाई (सें.मी.में)	अंतर मान
6	114.6	12	104.4	10.2	103.7	10.9
7	120.6	24	116.8	3.8	115.2	5.4
8	126.4	12	120.5	5.9	117.2	9.2
9	132.2	14	125.3	6.9	119.8	12.4
10	138.3	16	122.6	15.7	121.7	16.6
11	142.0	12	131.8	9.2	127.1	14.9
12	148.0	10	134.7	13.3	132.2	15.8
कुल		100				

सारणी 02

मध्याह्न भोजन प्राप्त करने वाले प्राथमिक विद्यालय के मुसहर समुदाय के लड़का एवं लड़की की औसत वजन की तुलना आई.सी.एम.आर. मानकों के साथ

उम्र (वर्ष में)	आई.सी.एम.आर. मानक वजन (किलोग्राम में)	न्यार्दशों की संख्या (N)	मुसहर समुदाय के लड़कें		मुसहर समुदाय के लड़कियाँ	
			औसत वजन (किलोग्राम में)	अंतर मान	वजन (किलोग्राम में)	अंतर मान
6	19.5	12	17.0	2.5	16.3	3.2
7	21.8	24	18.3	3.5	16.4	5.4
8	24.8	12	21.1	3.7	20.9	3.9
9	28.5	14	23.3	5.2	22.3	6.2
10	32.5	16	24.9	7.6	21.1	11.4
11	33.7	12	26.5	7.2	24.6	9.1
12	38.7	10	28.1	10.6	26.9	11.8
कुल		100				

तथ्यों का विश्लेषण – सारणी 01 से स्पष्ट है कि मुसहर समुदाय के लड़के एवं लड़कियों की ऊंचाई के वितरण से संकेत मिलता है कि लड़के के आई.सी.एम.आर. मानकों की तुलना में 3.8 से 15.7 सें.मी. तक कम पाया गया जबकि मुसहर समुदाय के लड़कियों को आई.सी.एम.आर. मानकों की तुलना में 5.4 से 16.6 सें.मी. तक कम पाया गया। मुसहर समुदाय के लड़के एवं लड़कियों की ऊंचाई में 10 वर्ष की उम्र में सबसे ज्यादा

अंतर पाया गया। लड़के में यह अंतर 15.7 सें.मी. और लड़कियों में 16.6 सें.मी. है। आंकड़ों से यह भी पता चलता है कि सभी उम्र में मुसहर समुदाय के लड़कों की तुलना में लड़कियों की ऊंचाई आई.सी.एम.आर. मानक से कम पाया गया है।

सारणी – 2 ने संकेत दिया कि मुसहर समुदाय के लड़के एवं लड़कियों का वजन 6 से 12 वर्ष की उम्र में बढ़ता है। 6 से 12 वर्ष की लड़कियों का वजन 16.3 किलोग्राम से 26.9 किलोग्राम तक है जबकि लड़कों का वजन 17 किलोग्राम से 28.1 किलोग्राम तक है। लड़के और लड़कियों का वजन आई.सी.एम.आर. मानकों की तुलना में कम पाया गया हालांकि 12 वर्ष के उम्र में सबसे अधिक अंतर पाया गया जो लड़कों में 10.6 तथा लड़कियों में 11.8 पाया गया है।

निष्कर्ष – उपरोक्त सांख्यिकीय अध्ययन से यह बात सिद्ध हो गयी कि मध्याह्न भोजन विद्यालयीन लड़कें – लड़कियों की औसत ऊंचाई और वजन आई.सी.एम.आर.ए 2010 के मानकों से कम है। आई.सी.एम.आर. मानदंडों की अपेक्षा मध्याह्न भोजन कार्यक्रम कम कैलोरी और प्रोटीन प्रदान करता है। मुसहर बच्चों को विद्यालय द्वारा जो मध्याह्न भोजन उपलब्ध कराया जाता है वह उनके घरेलू भोजनों की तुलना में कहीं अधिक उच्च स्तरीय सिद्ध होता है। अतः पौष्टिक व्यंजनों की और अधिक मात्रा मध्याह्न भोजन कार्यक्रम में शामिल की जानी चाहिए ताकि आई.सी.एम.आर. मानदंडों को पूरा किया जा सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. सिंह, राजीव कुमार और कुमारी, माधुरी(2008); प्राथमिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण में मध्याह्न भोजन योजना की प्रासंगिकता– एक विश्लेषणात्मक अध्ययन; XII(3) ,द्वितीय खंड, 42–48
2. मित्रा, एम., कुमार, पी. भी., चक्रवत्ती, एस. और पी. भारती(2007); छत्तीसगढ़ में कामर आदिवासी बच्चों के पोषण की स्थिति; इंडियन जर्नल पेडिट्रिस, 74, 381–384
3. कुलश्रेष्ठ, कंचन और शर्मा, प्रज्ञा (2007); मेरठ क्षेत्र, उत्तर प्रदेश में मिड डे मील योजना और प्राथमिक कक्षाओं के स्वास्थ्य पर इसके प्रभाव का अध्ययन; फूड साइंस रिसर्च जर्नल; 2(2), 122–124
4. यादव, पूनम और कुमार, अन्नम्मा (2014); इलाहाबाद के स्कूलों में मिड डे मील की पोषण पर्याप्तता; एशियन जर्नल ऑफ होम साइंस, 9(2), 655–657
5. मेहता, भावना, ग्रोवर, किरण और कौर, रविंदर (2013); पंजाब के लुधियाना जिले में स्कूली बच्चों के आहार सेवन में मध्याह्न भोजन का पोषक योगदान; पोषण खाद्य विज्ञान जर्नल, 3(3), 181–183

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

पर्वतीय क्षेत्रों में निवासरत युवाओं में साइबर अपराध के प्रति जागरूकता का अध्ययन 'पौड़ी गढ़वाल जिले के विशेष सन्दर्भ में'

● आरूशी

सारांश - 21वीं शताब्दी के आरंभिक काल में संचार साधनों के क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ है। इस परिवर्तन ने एक ओर जहां सामाजिक दूरियों को कम करने का कार्य किया है, वहीं अपराध जगत को भी नये स्वरूप में ढ़ालने का कार्य किया है। आज व्यक्ति और खास कर समाज को दिशा देने वाले युवा वर्ग आज इस माध्यम से प्रभावित है। संचार और रोजगार के क्षेत्र में बढ़ते तकनीकी व इंटरनेट ने समाज को एक नये युग में प्रवेश दिलाने का कार्य किया है। जिसने समाज दर्शिता लाने के साथ-साथ साइबर अपराध और संगठित अपराध जैसे जटिल अपराध को जन्म दिया है। साइबर अपराध के अंतर्गत अंतर्गत विभिन्न वैसे आपराधिक कृत्य जो इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से संचालित होते हैं, को शामिल किया गया है। ई-मेल बॉम्बिंग, पहचान की चोरी, वेब जैकिंग, लॉजिक बॉम्ब आदि गतिविधियाँ साइबर अपराध के अंतर्गत आते हैं। इंटरनेट और स्मार्ट फोन के बढ़ते बाजार ने आज न केवल महानगरों को बल्कि ग्रामीण एवं दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों को भी अपनी जद शामिल कर लिया है। आज पर्वतीय क्षेत्र के युवाओं का आकर्षण ई-बैंकिंग, सोशल मीडिया पर उपस्थिति, ई-व्यापार, मेल आदि की ओर बढ़ा है। ऐसे में इस क्षेत्र में साइबर अपराध का खतरा निरंतर बढ़ता जा रहा है। इसका एक अन्य कारण यह भी है कि साइबर अपराध को अंजाम देने के लिए आपराधिक क्षेत्र में जाने की जरूरत नहीं होती है। आज तकनीकी रूप से शिक्षित आपराधिक मनोवृति के व्यक्ति और खासकर युवा वर्ग इस कार्य में संलिप्त हैं तथा शहरों एवं महानगरों में बैठे-बैठे ऐसे कार्य को अंजाम देते हैं। पर्वतीय क्षेत्र जहां के युवा इस प्रकार की घटनाओं से अनभिज्ञ होते हैं, ऐसे अपराधियों के आसान शिकार होते हैं। ऐसे में यह जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है कि पर्वतीय क्षेत्रों में निवासरत युवाओं में साइबर अपराध संवंधी जानकारी कितनी है। इससे यह भी स्पष्ट पता चलता है कि साइबर अपराध की बढ़ती संख्या को नियंत्रित करने हेतु व्यक्तिगत व सामूहिक जागरूकता की आवश्यकता है। इसके लिए आवश्यक है कि विभिन्न उपयोगकर्ताओं को इससे संम्बन्धित मूलभूत जानकारी हो व साइबर अपराध के शिकार होने से बचने के विभिन्न तरीकों की समझ विकसित हो। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध पत्र हेतु अध्ययन विषय के रूप में पर्वतीय क्षेत्रों में निवासरत युवाओं में साइबर अपराध के प्रति जागरूकता का अध्ययन 'पौड़ी गढ़वाल जिले के विशेष सन्दर्भ में" शीर्षक का चयन किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन के विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए उत्तराखण्ड के जनपद पौड़ी गढ़वाल के उत्तरदाताओं का चयन किया गया है तथा उत्तरदाताओं के रूप में चयनित जनपद के 100 युवाओं का चयन किया गया है तथा इनसे विविध मुद्दों पर सूचना एकत्रित कर यह जानने का प्रयास किया गया है कि साइबर अपराध के प्रति युवाओं की जागरूकता का स्तर क्या है।

मुख्य शब्द - साइबर अपराध, सनातन धर्म, आई.टी. अधिनियम, आई.पी.सी., एस.एल.एल., संचार क्रांति

● शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग राधे हरि स्नातकोत्तर महाविद्यालय काशीपुर उधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड

प्रस्तावना – युवा शक्ति राष्ट्र की अमूल्य धरोहर है। आज की बदलते सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश में युवा शक्ति ही किसी भी राष्ट्र के विकास की दशा व दिशा का निर्धारण करती है। यही कारण है कि इनके स्वस्थ समाजीकरण के साथ–साथ उचित मार्गदर्शन की व्यवस्था करना प्रगतिशील राष्ट्र का प्राथमिक दायित्व है। समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति खासकर के युवा अपने आस–पास की गतिविधियों का अनुकरण करते हैं। यही वह समय होता है जब व्यक्ति अपने सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश के साथ अनुकूलन के लिए सर्वाधिक अर्तद्वन्द की स्थिति से गुजर रहा होता है।

21वीं शताब्दी के आरंभिक दौर में भारत जैसे कृषि प्रधान देश में भी तकनीकी व इंटरनेट ने अपनी स्थिति मजबूत करने में सफलता पायी है। साथ ही समाज के युवा वर्ग का संचार के आधुनिक साधनों यथा स्मार्ट फोन और इंटरनेट पर निर्भरता का स्तर भी तीव्र गति से बढ़ा है। तकनीकी उन्नति व इंटरनेट , सनातन धर्म के विचार 'वसुधैव कुटुम्बकम' को लागू करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है। वर्तमान में इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या में तीव्र गति से वृद्धि हुई है। एक सर्वे के अनुसार 2015 में जहां इंटरनेट यूजर की संख्या 302.36 मिलियन थी वहीं 2020 में लगभग 696.77 मिलियन हो चुकी है। वर्तमान में शायद ही ऐसा कोई क्षेत्र होगा जहाँ इंटरनेट की पहुँच ना हो। इसके विकास लक्ष्यों व लाभों के साथ ही साइबर अपराध की अवधारणा का भी विकास हुआ है। साइबर अपराध, ''कम्प्यूटर प्रणाली और इंटरनेट का उपयोग करके की गई अवैध गतिविधियों के रूप में परिभाषित किया गया है जो कानूनन दण्डनीय अपराध है। साइबर अपराध से जुड़े मामलों का आई टी अधिनियम , भारतीय दण्ड संहिता (आईपीसी) तथा एसएलएल के अधीन दर्ज किया जाता है।

वैश्विक सुरक्षा एजेंसियों ने साइबर अपराध को अब तक 166 श्रेणियों में बाँटा है और ये सिलसिला बदस्तूर जारी है। साइबर अपराध के अंतर्गत स्टॉकिंग, साइबर गैम्बलिंग, पासवर्ड तोड़ना , हैकिंग, बुलिंग, पोर्नाग्राफी , ई–मेल हैकिंग, बुलिंग, पोर्नोग्राफी, ई–मेल बॉम्बिंग, डाटा डिडलिंग, ट्रोजन अटैक, वायरस वार्म अटैक , सलामी अटैक , महिलाओं की अश्लील तस्वीरें लेना या भेजना आदि शामिल है। वर्ष 2012 में साइबर अपराध से सम्बन्धित कुल 3477 मामले दर्ज किये गए। 2015 में इनकी संख्या 11592 थी व 2018 में यह आंकड़ा 27248 तक पहुच गया । 2018 में दर्ज मामलों में 18495 मामले आई टी अधिनियम के तहत 8647 केस आई पी सी की विभिन्न धाराओं के तहत और 106 केस एस एल एल के तहत दर्ज किये गए। सर्वाधिक साइबर अपराध से सम्बन्धित मामले उत्तर प्रदेश में लगभग 6300 दर्ज किये गये हैं। आईटी अधिनियम के तहत 2018 में पहचान की चोरी के 6688 मामले, महिलाओं के अश्लील चित्रण (प्रतिशोध) अधिनियम के तहत 3076 मामले दर्ज किये गए।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि साइबर अपराध की रोकथाम हेतु उपयोगकर्ताओं को साइबर अपराध की जानकारी बारीकियों से अवगत होना आवश्यक है साथ ही समय–समय पर अपने कम्प्यूटर व सॉफ्टवेयर एप्लीकेशन को अपडेट करते रहना भी आवश्यक है। इससे साइबर अपराध संबंधी जोखिम कम रहता है।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध कार्य हेतु निम्नलिखित उद्देश्यों का निर्धारण किया गया है–

1. भारत में साइबर अपराध की वर्तमान स्थिति का अवलोकन करना
2. साइबर अपराध के प्रति पौड़ी गढ़वाल जिले के युवाओं की जागरूकता स्तर का अध्ययन करना।

शोध समस्या – भारत में साइबर अपराध जिस गति से बढ़ रहें हैं, वह भविष्य में आने वाले किसी बड़े खतरे के संकेत हैं। बहुत से लोग इसके शिकार हो रहें हैं जिसका मुख्य कारण है लोगों के मध्य उचित जानकारी का अभाव । इससे संबंन्धित समस्त जोखिमों को समझना अति आवश्यक है। इन्हीं आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए पर्वतीय क्षेत्र के युवाओं को केन्द्र में रखकर इस अध्ययन को सम्पादित किया गया है।

अध्ययन विधि – किसी भी अध्ययन या शोध के लिए एक विधि का चयन अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। प्रस्तुत शोध पत्र सामाजिक अनुसंधान अंतर्गत प्रयुक्त होने वाले वैज्ञानिक पद्धति के विविध चरणों का प्रयोग किया गया है। इन चरणों का क्रमवद्ध विवरण आगे किया जा रहा है।

शोध अभिकल्प – प्रस्तुत शोध–पत्र हेतु किए गए अध्ययन में शोध अभिकल्प के रूप में वर्णनात्मक अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया गया है।

निदर्शन – निदर्शन के चुनाव हेतु सोद्देश्य निदर्शन पद्धति को प्रयोग में लाया गया है। इसके अंतर्गत 18 से 30 आयु वर्ग के युवाओं को उत्तरदाता के रूप में चयनित किया गया है। शोध–पत्र हेतु प्राथमिक सूचना संकलन के लिए 100 उत्तरदाताओं को चयनित किया गया है। इस चयन के दौरान इस बात का खास ध्यान रखा गया है कि उत्तरदाता के रूप में महिला व पुरुष का प्रतिनिधित्व समान हो। इस प्रकार प्रस्तुत अध्ययन हेतु 50 महिला और 50 पुरूष उत्तरदाताओं का चयन किया गया हैं। साथ ही इस बात का ध्यान रखा है कि इन उत्तरदाताओं की शैक्षिक योग्यता भी विविध स्तर की हो। जिनमें मुख्य रूप से ग्रेजुएशन, पोस्ट ग्रेजुएशन, डाक्टरेट के आधार पर विभाजित किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध पत्र पर्वतीय क्षेत्रों में निवासरत युवाओं में साइबर अपराध के प्रति जागरूकता का अध्ययन 'पौड़ी गढ़वाल जिले के विशेष सन्दर्भ में 'शीर्षक को शोध विषय के रूप में चयनित किया गया है। शोध के अध्ययन क्षेत्र के रूप में पौड़ी गढ़वाल जिले को चुना गया है जोकि उत्तराखण्ड राज्य का एक पर्वतीय जनपद है। चयनित जनपद में चुनाव का मूल उद्देश्य ग्रामीण व पर्वतीय क्षेत्र में कम्प्यूटर, इंटरनेट और स्मार्ट फोन की सुरक्षा बारीकियों से अवगत कराना है। जिसके लिए वास्तविक स्थिति का आकलन होना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। अध्ययन क्षेत्र के इसी महत्व को आधारभूत कारक स्वीकार करते हुए इसका चयन किया गया है।

आंकड़ा संग्रहण – प्रस्तुत अध्ययन के सफल संपादन के लिए आवश्यक तथ्य संकलित करने हेतु तथ्य संकलन के प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक तथ्य संकलन के लिए प्रश्नावली प्रविधि का चयन किया गया है। साथ ही इंटरनेट, शोध प्रबंध, पुस्तकें, आदि के माध्यम से द्वितीयक तथ्यों का संकलन किया गया है।

तथ्यों का विश्लेषण – उपर्युक्त वर्णित तथ्यों के अवलोकन से स्पष्ट है कि युवाओं की साइबर अपराध के प्रति जागरूगता का आंकलन किया जाना आवश्यक है। इसके लिए शोधकर्ता द्वारा शोध उपकरण के तौर पर प्रश्नावली को चुना गया है जिसके अंतर्गत इंटरनेट प्रयोग सम्बन्धी आदतों व साइबर अपराध की जानकारी से सम्बन्धित सामान्य प्रश्नों को सम्मिलित किया गया है। इस दौरान उत्तरदाताओं से उनके वैयक्तिक गुण तथा उनके साइबर अपराध से जुड़े सूचना से अवगत होने संबंधी जानकारियों का संकलन किया है। दैनिक जीवन में इंटरनेट का कितना प्रयोग किया जाता है, कम्प्यूटर व ई–मेल

आदि के पासवर्ड बदलने की आवृत्ति को जानना है इसके अतिरिक्त आई टी अधिनियम 2000 जो इस सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण अधिनियम है , इससे कितने उत्तरदाता अवगत हैं ? सामान्य तौर कहा जाता है कि समाज में व्याप्त विभिन्न समस्याओं का समाधान शिक्षा में निहित है अत: यह जानने का प्रयत्न किया गया है कि साइबर अपराध जैसी गतिविधयों को नियंत्रित करने में शिक्षा की भूमिका क्या है ? तथा किस प्रकार की आपराधिक गतिविधियों से उत्तरदाताओं का सामना होता है।

बदलते समय के साथ युवा वर्ग अपना ज्यादा से ज्यादा समय इंटरनेट व विभिन्न तकनीकों के प्रयोग में लगाता है। चाहे शिक्षा हो , कार्य हो, मनोरंजन हो, शॉपिंग हो या फिर बैंकिंग लगभग सभी कार्य इंटरनेट के माध्यम से ही संपन्न किए जा रहें हैं। अत: उत्तरदाताओं से भी इस संबध में विचार पूछे गये है, जिनके प्राप्त प्रत्युत्तर को वगीकृत कर उसका प्रस्तुतीकरण चित्र संख्या 01 में किया गया है।

चित्र संख्या 01

उत्तरदाताओं द्वारा इंटरनेट पर बिताये जाने वाले समय का वर्गीकरण

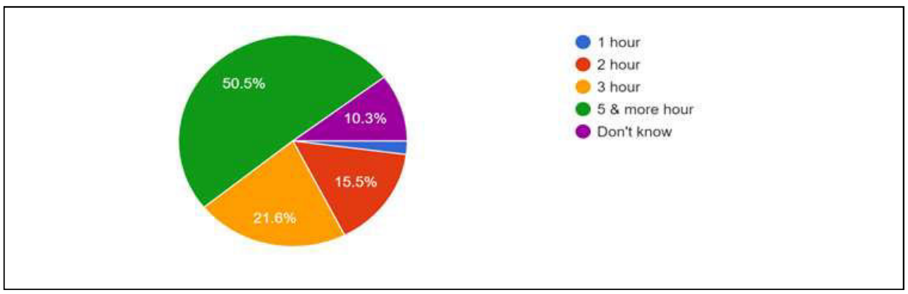

उपरोक्त चित्र के अनुसार 50.5 प्रतिशत उत्तरदाता 5 या उससे अधिक घंटे इंटरनेट का इस्तेमाल करते हैं। 21.6 प्रतिशत 3 घंटे , 15.5 प्रतिशत दो घंटे प्रयोग करते हैं। जबकि 10.3 प्रतिशत को नहीं पता वह कितनी देर इसका प्रयोग करते हैं।

जिस तीव्र गति से वर्तमान में साइबर अपराधों की संख्या में वृद्धि हो रही है, इससे बचाव के लिए विशेषज्ञ समय-समय पर अपनी कम्प्यूटर, मेल आदि के पासवर्ड को बदलने का सुझाव देते हैं। इसके अतिरिक्त किसी बाहरी व्यक्ति के डिवाइस में अपने पासवर्ड को सेव न करना, अपना पासवर्ड को किसी को ना बाँटना, इसको लेकर बात करते रहते हैं। अत: उत्तरदाताओं द्वारा इस तरह अपराध से बचने के लिए अपने पासवर्ड को किस आवृत्ति के साथ परिवर्तित किया जाता है, यह जानने का प्रयास किया गया है, जिसका वर्णन चित्र संख्या 02 में किया गया है।

चित्र संख्या – 02
इंटरनेट माध्यम से संचालित अकाउंट पासवर्ड बदलने संबंधी
अवधि पर उत्तरदाताओं के प्रत्युत्तर

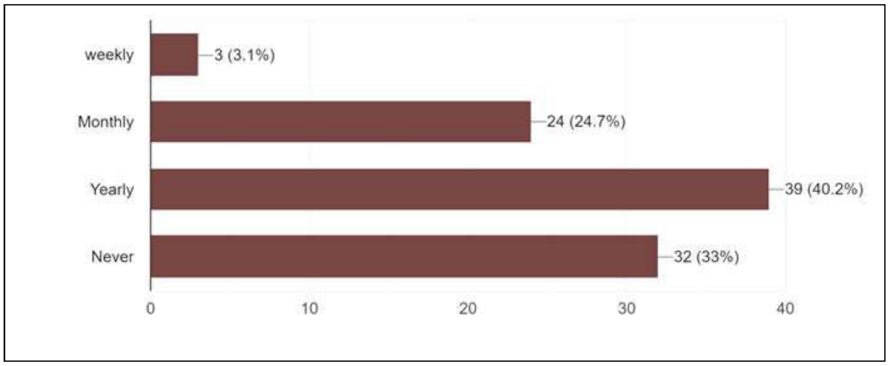

उपर्युक्त चित्र के अवलोकन से स्पष्ट है कि 40.2 प्रतिशत उत्तरदाता वार्षिक आधार पर 24.7 प्रतिशत मासिक व 3.17 साप्ताहिक जबकि 33 प्रतिशत द्वारा कभी भी परिवर्तन नहीं किया जाता ।

समाज में व्याप्त विभिन्न समस्या, ग्लानि आदि का समाधान शिक्षा में खोजा जाता है। विशेषज्ञों का मानना है कि साइबर अपराध से संम्बन्धित शिक्षा वर्तमान में लगभग सभी को दी जाना चाहिए क्योंकि लगभग सभी व्यक्तियों का किसी ना किसी माध्यम से विभिन्न तकनीकों से सामना हो जाता है। अतः इस प्रकार की गतिविधियों को नियंत्रित करने हेतु शिक्षा को एक महत्वपूर्ण उपकरण के रूप में प्रयोग करने के सन्दर्भ में उत्तरदाताओं के विचार को चित्र संख्या 3 में सुरक्षित किया जा रहा है जो कि निम्नलिखित है।

चित्र संख्या 03
साइबर अपराध पर नियंत्रण एवं इसके प्रति जागरूकता लाने में उत्तरदाताओं के
प्रत्युत्तर का चित्रमय प्रस्तुतीकरण

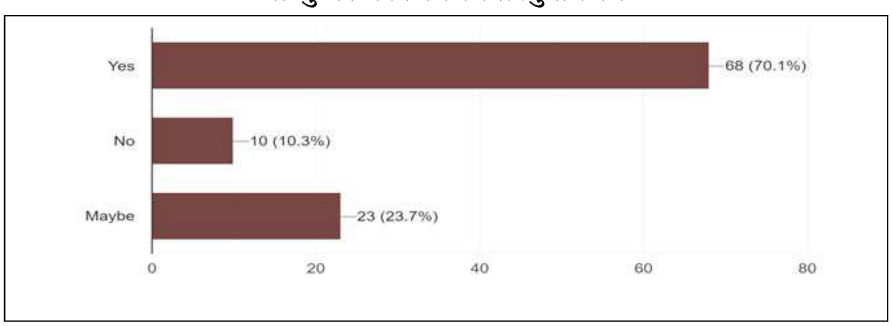

उपरोक्त चित्र के अनुसार 70.1 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि शिक्षा को एक बेहतर उपकरण के तौर पर प्रयोग किया जा सकता है जबकि 10.3 प्रतिशत इससे सहमत नहीं हैं और 23.7 प्रतिशत उत्तरदाता संशय की स्थिति में हैं।

भारतीय सूचना तकनीकी अधिनियम (आईटी एक्ट 2000) भारतीय संसद द्वारा पारित एक अधिनियम है जो 17 अक्टूबर 2000 को पारित हुआ व सन् 2009 में इसे संशोधित किया गया। इसमें 13 अध्यायों में विभक्त कुल 94 धारायें हैं। इस एक्ट की

प्रस्तावना में हर ऐसे लेनदेन को कानूनी मान्यता देने की बात उल्लिखित है, जो इलेक्ट्रोनिक कॉमर्स (वाणिज्य) के दायरे में आता है और जिसमें सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिए सूचना तकनीकी का इस्तेमाल हुआ है। यह साइबर अपराध गतिविधियों से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण अधिनियम है। इसलिए सभी उपयोगकर्ताओं को इसकी सामान्य जानकारी होना आवश्यक है। अतः उत्तरदाताओं की इस संबन्ध में जानकारी को चित्र संख्या 4 में दर्शाया गया है –

चित्र संख्या – 04

आई.टी. एक्ट 2000 के बारे में जानकारी रखने के संबंध में उत्तरदाताओं के विचार

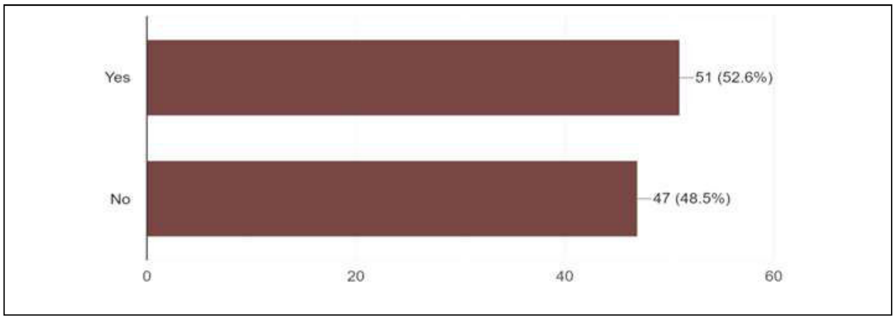

उपरोक्त चित्र के अनुसार 52.6 प्रतिशत उत्तरदाता (आईटी एक्ट) से अवगत हैं वहीं 48.5 प्रतिशत उत्तरदाता इसके विषय में नहीं जानते।

साइबर अपराध के अन्तर्गत विभिन्न गतिविधियों को शामिल किया गया है। जैसे साइबर जबरन वसूली, पहचान की चोरी, क्रेडिट कार्ड धोखाधड़ी , कम्प्यूटर से व्यक्तिगत डेटा हैक करना , फिशिंग, अवैध डाउनलोडिंग , साइबर स्टॉकिंग , वायरस प्रसार आदि। अतः चुने गये उत्तरदाताओं द्वारा यह जानने का प्रयास किया जा रहा है कि विभिन्न गतिविधियों में से किससे उनका सामना ज्यादा होता है व उनकी प्रतिक्रिया को निम्नलिखित चित्र नं 5 में सुरक्षित किया गया है।

चित्र संख्या – 5

सर्वाधिक बार प्रभावित करने वाले साइबर अपराध के प्रकार संबंधी उत्तरदाताओं के विचार

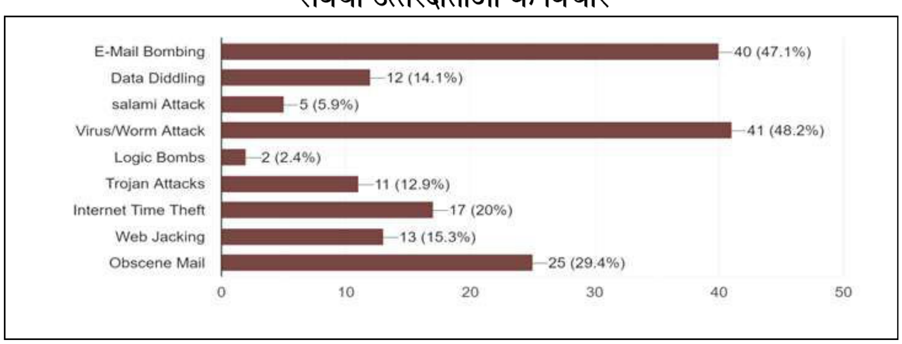

उपरोक्त चित्र के अनुसार 48.2 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने वायरस/ वार्म अटैक, 47.1 प्रतिशत ई-मेल बॉम्बिंग, 29.4 प्रतिशत अश्लील मेल , 20 प्रतिशत इंटरनेट टाइम थैफ्ट, 15.3 प्रतिशत वेब जैकिंग, 14.1 प्रतिशत डाटा डिडलिंग 12.9 प्रतिशत ट्रोजन अटैक,

5.9 प्रतिशत सलामी अटैक, 2.4 प्रतिशत लॉजिक बॉम्ब जैसी गतिविधियों का सामना किया।

साइबर अपराध की विभिन्न गतिविधियों का शिकार होने पर विभिन्न लोंगो के द्वारा किस प्रकार की गतिविधियां की जाती हैं, यह भी एक महत्वपूर्ण सवाल है। साइबर अपराध के मुद्दे से निपटने के लिए विभिन्न शहरों के आपराधिक जाँच विभाग ने साइबर क्राइम सेल खोले हैं। आई टी एक्ट स्पष्ट रूप से यह कहता है कि "जब साइबर अपराध किया जाता है, तो इसका एक वैश्विक अधिकार क्षेत्र है और इसलिए किसी भी साइबर सेल में इसको लेकर शिकायत दर्ज की जा सकती है। अतः इसके तहत यह जानने का प्रयास किया जा रहा है। ताकि चुने उत्तरदाता ऐसी परिस्थिति में कौन सा कदम उठाते हैं, का स्पष्ट पता चल सके। इस प्रकार संकलित इनके विचारों का प्रस्तुतीकरण चित्र संख्या 06 में किया गया है:-

चित्र संख्या 06

अपने कार्य के दौरान साइबर अपराध से प्रभावित होने की स्थिति में संभावित प्रतिक्रिया संबंधी मनोवृति

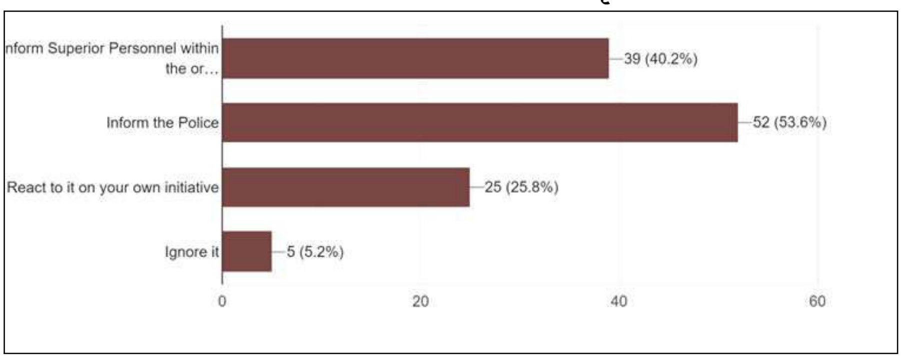

चित्र संख्या 06 से स्पष्ट है कि 53.6 प्रतिशत उत्तरदाता इस बात को स्वीकार करते है कि यदि उनके साथ इस प्रकार की घटना घटित हो तो वह सर्वप्रथम इस सूचना से पुलिस को अवगत कराएंगे।, 40.2 प्रतिशत संबंधित अधिकारी को सूचित करेंगे, 25.8 प्रतिशत का कहना है वह अपने स्तर से करेंगें व 5.2 प्रतिशत का कहना है वे ऐसी घटनाओं को अनदेखा करेंगे। साइबर खतरों की तीव्र गति को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने 2013 में राष्ट्रीय साइबर सुरक्षा नीति जारी की थी, जिसमें देश के साइबर सुरक्षा के बुनियादी ढांचे की रक्षा के लिए प्रमुख रणनीतियों को अपनाने की बात की गई थी।

साइबर अपराध की घटनायें दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इस अपराध में संलिप्त अपराधी मनोवृति वाले व्यक्ति के लिए महिला और बच्चे आसान शिकार नजर आते हैं। इन्हीं कारणों से आज साइबर अपराध के शिकार सबसे अधिक महिलाएं व बच्चे हो रहे हैं। अतः महिलाओं और बच्चों के लिए गृह मंत्रालय 'महिला व बच्चों के खिलाफ होने वाले साइबर अपराधों की रोकथाम' कार्यक्रम चला रहा है। इस संदर्भ में उत्तरदाताओं का क्या विचार है, को चित्र संख्या 07 में स्पष्ट किया गया है -

चित्र संख्या 7

महिलाएं और बच्चे के साइबर अपराधियों के आसान शिकार होते है संबंधी विचारों पर उत्तरदाता की मनोवृति

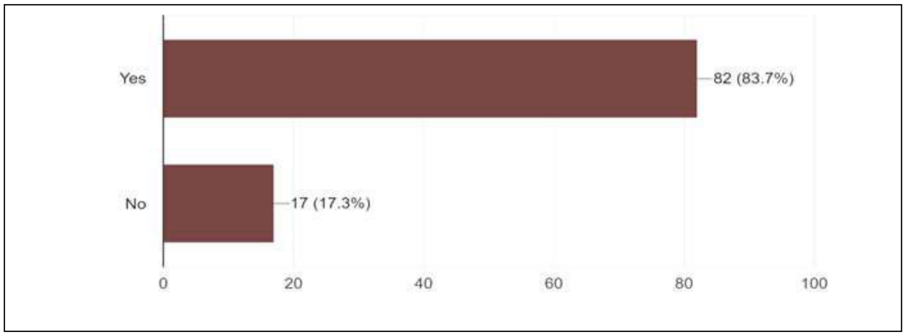

83.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं का कहना है कि महिला एवं बच्चे इस तरह की गतिविधियों का ज्यादा शिकार होते हैं, जबकि 17.3 प्रतिशत इसे अस्वीकार करते हैं।

अंत में बात की जाती है साइबर अपराध से होने वाले नुकसानों की। जिस प्रकार साइबर अपराधों को विभिन्न श्रेणी में रखा गया है, उसी प्रकार इससे होने वाले नुकसानों को भी विभिन्न श्रेणियों में रखा गया है। इससे होने वाले सामान्य नुकसानों के संम्बन्ध में उत्तरदाताओं से जानने का प्रयास किया गया जिसको चित्र संख्या 8 में दर्शाया गया है –

चित्र संख्या 8

साइबर अपराध से समाज को होने वाले सामान्य नुकसान की प्रकृति के संबंध में उत्तरदाताओं की मनोवृति

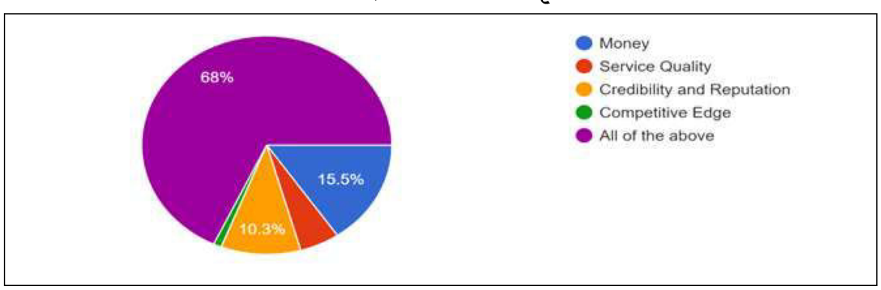

चित्र संख्या 08 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि 68 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि इस प्रकार की गतिविधि पैसा, सेवा की गुणवत्ता, विश्वसनीयता और प्रतिष्ठा सभी के लिए नुकसानदेह है, 15.5 प्रतिशत का मानना है कि सिर्फ पैसा जबकि 10.3 प्रतिशत का मानना है कि विश्वसनीयता और प्रतिष्ठा के लिए नुकसानदायक है।

निष्कर्ष – संचार क्रांति के विगत दो दशकों में कम्प्यूटर, स्मार्ट फोन, इंटरनेट आदि तकनीकी के विकास ने युवाओं को सर्वाधिक प्रभावित किया है। युवाओं की इंटरनेट व तकनीकी साधनों पर बढ़ती निर्भरता एक ओर जहां पर्वतीय क्षेत्र के युवाओं को विश्व जगत से रूबरू होने का अवसर प्रदान किया है वहीं आपराधिक मनोवृति के लोगों ने इसे असामाजिक कृत्यों की संरचना को जटिल बनाने में किया है। अध्ययन के दौरान चयनित उत्तरदाताओं से संकलित किए तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण किया है। अध्ययन में पाया गया कि ज्यादातर उत्तरदाता उस वर्ग में शामिल हैं जो कि पाँच व उससे अधिक घंटे

इंटरनेट का प्रयोग करते हैं। प्रतिदिन इतने घंटे इंटरनेट का प्रयोग करने वाले उपयोगकर्ताओं के लिए साइबर अपराध सम्बन्धी जानकारी का होना अतिआवश्यक है। साइबर अपराध के शिकार होने से बचने के लिए विशेषज्ञ विभिन्न सुझाव देते हैं जिनमें से एक समय-समय पर अपने सिस्टम,मेल में आदि का पासवर्ड बदलने की हिदायत दी जाती है , लेकिन अधिकतर उत्तरदाता वार्षिक तौर पर अपना पासवर्ड परिवर्तित करते हैं। जो कि साइबर अपराध से बचने का अच्छा संकेत नहीं है। साइबर अपराध के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण अधिनियत आई टी एक्ट के विषय में सिर्फ 52.6 प्रतिशत उत्तरदाता ही जानते हैं जबकि चयनित उत्तरदाता उच्च शिक्षा ग्रहण कर रहें हैं। अतः कहा जा सकता है कि साइबर अपराध के सम्बन्ध में विभिन्न एक्ट व जानकारियों को और अधिक सुगम बनाते हुए लोंगो तक पहुँचाना आवश्यक है। ज्यादातर उत्तरदाता इस बात को स्वीकारते हैं कि साइबर अपराध से बचने के लिए उससे सम्बन्धित शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

अध्ययन में यह भी पाया गया कि साइबर अपराध गतिविधियों मे वायरस व वार्म अटैक का सबसे अधिक सामना उत्तरदाताओं को करना पड़ता है , इसके पश्चात् ई-मेल बॉम्बिंग उसी क्रम में द्वितीय स्थान पर है। विभिन्न आपराधिक गतिविधियों का शिकार होने के पश्चात् उत्तरदाताओं द्वारा इस सन्दर्भ में पुलिस को सूचित करने की प्राथमिकता दी जाती है। जबकि इस सम्बन्ध में बहुत ही कम लोंगो के द्वारा इस तरह की घटनाओं को अनदेखा किया जाता है। इस प्रकार की आपराधिक घटनाओं में लिप्त लोग ज्यादातर महिलाओं व बच्चों को अपना निशाना बनाते हैं , इस बिन्दु को अधिकतर उत्तरदाताओं द्वारा स्वीकार किया गया है। यदि बात की जाय साइबर अपराध से होने वाले नुकसानों की तो ज्यादातर उत्तरदाता इस बात को स्वीकारते हैं कि इन गतिविधियों से पैसे के साथ-साथ सेवा की गुणवत्ता, विश्वसनीयता व प्रतिष्ठा पर भी इसका प्रभाव पड़ता है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि साइबर अपराध आधुनिक समाज की देन है। आज समाज की आवश्यकताएं जिस गति से बदल रही है, उसने साइबर अपराध के लिए जमीन तैयार करने का कार्य किया है। इसमें शिक्षा का अपना विशेष स्थान है। क्योंकि साइबर अपराध तकनीकी रूप से कुशल व्यक्तियों के द्वारा सम्पादित किया जाता है। इसलिए इसकी प्रकृति भी अत्यन्त जटिल होती है। आज जबकि विकास के नाम पर नगरों के साथ-साथ ग्रामीण एवं पर्वतीय क्षेत्रों तक नेटवर्क का जाल फैलाया जा रहा है, साइबर अपराधियों के लिए अवसर की संभावना बढ़ती जा रही है। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि संचार माध्यमों के अत्याधुनिक साधनों और खास कर इंटरनेट, स्मार्ट फोन, कम्प्यूटर आदि से जुड़ने वाले युवाओं के लिए साइबर अपराध की बारीकियों से अवगत होना आवश्यक है। इसके अभाव में इन माध्यमों का सुरक्षित उपयोग करना संभव प्रतीत नही होता है। साइबर अपराध के प्रति युवाओं में जागरूकता लाना न केवल उनकी सुरक्षा के दृष्टिकोण से आवश्यक है वरन् समय की मांग भी बन गयी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1 अखिलेश शुक्ल एवं संध्या शुक्ल, समकालीन भारतीय समाज में अपराध, गायत्री पब्लिकेशन, रीवा, 2015

2 राम आहूजा एवं मुकेश आहूजा, समाजशास्त्र, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2013

3 अनुपम शर्मा, साइबर क्राइम, बी. पी. आर. डी. नई दिल्ली, 2008

4 जी. एल. शर्मा, सामाजिक मुद्दे, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2015
5 Archana Ramasundaram, Crime in India 2014 Statistics, N.C.R.B. New Delhi, 2015
6 Satya N. Mohanty, Educational Statistics at a Glance, M.H.R.D. New Delhi, 2014
7 https://www.statista.com/statistics/255146/number-of-internet-users-in-india/
8 ncrb.nic.in
9 https://www.statista.com/topics/5054/cyber-crime-in-india/
10 https://researchjournal.in/full-widthss.php
11 https://hi.vikaspedia.in/e-governance/about-rti-act

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

अपराध नियंत्रण में शिक्षा का योगदान

• सीमा कुमारी
•• मोनी शुक्ला

सारांश – अपराध और कानून का शिक्षा से घनिष्ठ सम्बन्ध है। कानून का उलंघन करना अपराध होता है। शिक्षा एवं ज्ञान के अभाव में व्यक्तित्व का समुचित विकास नहीं हो पाता है। शिक्षित व्यक्ति सामान्यतया गलत कार्यों को नहीं करता है, क्योंकि उसे भविष्य में सजा भुगतने का डर सताता रहता है। इस प्रकार कानूनों को तोड़ना तथा संस्थापित रीति–रिवाजों का पालन नहीं करना भी अपराध कहलाता है। अपराधी द्वारा अपराध करने के प्रमुख कारण आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, मध्यपान इत्यादि है। दरिद्रता तथा बेरोजगारी अपराधी प्रवृतियों को बढ़ावा देती है। अनैतिक परिवार के वातावरण से प्रभावित होकर बच्चे अपराध करने लगते हैं। कुछ लोग समाचार पत्रों तथा चलचित्रों में प्रदर्शित अपराधी विधियों से प्रभावित होकर भी अपराध करते हैं। मद्यपान एवं नशीली वस्तुओं का सेवन से भी अपराध बढ़ता है। अपराध नियंत्रण में शिक्षा का योगदान महत्वपूर्ण होता है। शिक्षित व्यक्ति को अपने भविष्य की चिंता ज्यादा रहती है। अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा का ख्याल करते हुए शिक्षित व्यक्ति अशिक्षित की तुलना में गलत कार्य नहीं करता है। शिक्षा के माध्यम से अपराधियों की मानसिक दशा में सुधार लाया जा सकता है। बाल अपचारियों को सुधारने के लिए सुधारक विद्यालयों तथा वोर्स्टल विद्यालयों की स्थापना की गयी है, जिनमें बाल अपचारियों के रहने से उनकी आपराधिक प्रवृति में सुधार लाया जाता है। विद्यालयों में नैतिक तथा आध्यात्मिक शिक्षा प्रदान करके बाल अपचारियों की आपराधिक मनोवृति में सुधार किया जा सकता है। अपराध करने के बाद होने वाली परेशानियों की जानकारी हो जाने से अपराधी आदर्श नागरिक बनने का प्रयास करता है।

मुख्य शब्द – अपराध, बेरोजगारी, दुर्व्यवहार, वोर्स्टल विद्यालय, सुधारक विद्यालय

आधुनिक युग में अपराध और कानून का घनिष्ट सम्बन्ध है। कानून नियमों का वह समूह है, जो राज्य द्वारा लागू किया जाता है और जो सबके लिए समान होता है। कानून को तोड़ना अपराध है। अपराध का शिक्षा से भी संबंध है। नैतिक तथा सामाजिक शिक्षा व्यक्ति को सुसंस्कृत करने में सहायक होती है। शिक्षा एंव ज्ञान के अभाव में व्यक्तित्व का समुचित विकास नहीं हो पाता है। शिक्षा अपराध के नियंत्रण में भी सहायक होती है। विभिन्न विद्वानों ने अपराध को परिभाषित करते हुए लिखा है कि, "कानूनी दृष्टि से अपराध कानून का उल्लघन है।"[1] लैन्डिस और लैन्डिस के अनुसार, "अपराध वह कार्य है जिसे राज्य ने सामूहिक कल्याण के लिए हानिप्रद घोषित किया है और जिसे दण्ड देने के लिए राज्य शक्ति रखता है।"[2] हाल जिरोम के अनुसार "अपराध कानूनी तौर पर वर्णित और साभिप्राय कार्य है, जिसका सामाजिक हितों पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है, जिसका आपराधिक

• पूर्व शोध छात्रा, इतिहास विभाग ति.मा. भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर
•• शोध छात्रा ति.मा. भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

उद्देश्य है और जिसके लिए कानूनी तौर से दंड निर्धारित है।''

अपराध की उपर्युक्त परिभाषाओं का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होता है कि कानूनन जब कोई कार्य अनुचित घोषित कर दिया जाता है, तो वह कार्य अपराध बन जाता है। कुछ विद्वानों का मानना है कि अपराध सिर्फ कानून से ही सम्बन्धित नहीं होना चाहिए बल्कि समाज के संस्थापित रीति-रिवाजों या लोक मान्यताओं के विरूद्ध कार्यों को भी अपराध की श्रेणी में रखा जाना चाहिए। इस प्रकार कानून के साथ ही साथ संस्थापित रीति-रिवाजों, परम्पराओं तथा लोक मान्यताओं का उल्लघन भी अपराध कहा जाता है।

अपराध किसी एक कारण से नहीं होते हैं, बल्कि अपराध के अनेक कारण हैं जिनमें आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक, संचार के साधन इत्यादि प्रमुख हैं।[3] आर्थिक कारण, अपराध उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। दरिद्रता अपराधी प्रवृतियों को बढ़ावा देती है। धन की कमी के कारण लोगों की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो पाती है। फलतः लोगों का भुखमरी का शिकार होना पड़ता है। लोग बिना परिश्रम के धन प्राप्त करने की इच्छा रखने लगते हैं तथा अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार के अपराध जैसे चोरी, डकैती, रिश्वत-खोरी तथा भ्रष्टाचार में लिप्त हो जाते हैं।[4] अपराध का एक प्रमुख कारण बेरोजगारी का होना भी है। जब व्यक्ति के पास कोई कार्य नहीं रहता है तब वह गलत कार्यो में लीन हो जाता है और उसका मस्तिष्क विश्रृंखलित हो जाता है। बेरोजगार व्यक्ति में हीनता और निराशा की भावनाएँ घर कर लेती है, जिससे आपराधिक प्रवृति विकसित होती है। सामाजिक नियंत्रण के अभाव में भी अपराध होते हैं। समाज के बुजुर्गों का समुदाय निकटवर्ती अथवा पड़ोसियों के गलत कार्यो पर रोक लगाने का प्रयास करते हैं। ऐसे समुदाय के सदस्य अपराधी प्रवृति वाले लोगों पर नियंत्रण रखने में सफल हो जाते हैं।[5]

पारिवारिक वातावरण भी अपराधियों को अपराध करने के लिए प्रेरित करता है। बर्बाद परिवारों तथा अनैतिक परिवारों के बच्चों पर पारिवारिक वातावरण का प्रभाव पड़ता है। कहा जाता है कि "परिवार सामाजिक जीवन की सर्वोत्तम पाठशाला है।" जिस परिवार का वातावरण सुसंस्कृत रहता है वहाँ पर बच्चे गलत कार्य नहीं करते हैं। सौतेले माता - पिता द्वारा तिरस्कृत बच्चे, पारिवारिक कलह एवं दुर्व्यवहार के कारण अपराधी प्रवृतियों को अपनाते है। माता - पिता द्वारा अधिक लाड़ -प्यार पाने वाले बच्चे भी बिगड़ जाते हैं तथा अपराध के रास्ते को चुन लेते है।[6] अपराध के कुछ कारण सांस्कृतिक भी है। समाज के व्यक्तियों की सास्कृतिक भिन्नता आपसी संघर्ष को बढ़ावा देती है। धार्मिक कट्टरता, धार्मिक असहिष्णुता से प्रभावित होकर लोग अपराध करने लगते हैं। हिन्दू - मुसलमानों, शिया - सुन्नियों, ईसाइयों - यहूदियों, कैथोलिक - प्रोस्टेन्टों के झगड़े इसी कट्टर धार्मिक भावना के परिणाम हैं।

संचार के साधनों के फलस्वरूप अपराध उत्पन्न होते हैं। समाचार पत्रों में अपराध के समाचार बड़े ही रोचक भाषा में छापे जाते है, जिससे प्रभावित होकर बच्चे अपराध करने लगते हैं। चलचित्रों में अपराध करने की सम्पूर्ण विधियाँ प्रदर्शित की जाती है, जिससे व्यक्ति अपराध करने के तरीकों को जान जाते हैं तथा अपराध करने लगते हैं। कुछ अपराध मद्यपान

तथा बुरी – संगत के कारण भी होते हैं। नशे की अवस्था में व्यक्ति अपनी चेतना खो बैठता है। उसे उचित तथा अनुचित का ज्ञान समाप्त हो जाता है। यदि संगत खराब हुई तो व्यक्ति बुरी प्रवृतियों की और प्रवृत होकर गंभीर अपराध करने लगता है।[7]

कुछ अपराध मद्यपान या बुरी संगत के कारण भी होते हैं। नशे की अवस्था में व्यक्ति अपनी चेतना खो बैठता है और अपराध को ओर प्रेरित होता है। उसे उचित या अनुचित का ज्ञान नहीं हो पाता है। यदि संगत खराब हुई तो व्यक्ति बुरी प्रवृतियों की ओर अग्रसर होकर गलत कार्य करने लगता है। यदि पड़ोस का वातावरण खराब हो तो भी व्यक्ति उससे प्रभावित होकर गंभीर अपराध करने लगता है।[8]

अपराधों के नियंत्रण में शिक्षा का योगदान – विभिन्न प्रकार के अपराधों के नियंत्रण में शिक्षा का योगदान सराहनीय रहा है। यद्यपि शिक्षा द्वारा सम्पूर्ण अपराधों को पूर्णरूपेण समाप्त नहीं किया जा सकता है, लेकिन शिक्षा की मदद से अपराधों में कमी अवश्य की जा सकती है। एक शिक्षित व्यक्ति किसी भी प्रकार का अपराध करने से पहले कई बार सोचता है तथा उसके द्वारा अपराध हो जाने पर वह पश्चाताप करता है। शिक्षा के माध्यम से अपराधियों की अपराधिक प्रवृति पर अंकुश लगाया जा सकता है।[9] सरकारी तथा गैर सरकारी सेवाओं में कार्य करने वाला व्यक्ति अपने भविष्य को लेकर चिंतित रहता है। उसे इस बात का भय रहता है कि अपराध में लिप्त हो जाने पर उसकी नौकरी समाप्त हो जाएगी तथा उसके समक्ष पारिवारिक सदस्यों के भरण – पोषण की समस्या उपस्थित हो जाएगी। अत: अशिक्षित व्यक्ति की तुलना में शिक्षित व्यक्ति अपराध कम करता है।[10] अपराध नियंत्रण में शिक्षा का योगदान के सन्दर्भ में कहा जाता है कि उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति एक साक्षर व्यक्ति की तुलना में अपराध कम करता है क्योंकि ज्यादा शिक्षित व्यक्ति को नियमों अथवा कानूनों की जानकारी अधिक रहती है तथा उसे अपने पद एवं सामाजिक प्रतिष्ठा का ख्याल अधिक रहता है। यद्यपि यह सर्वमान्य नहीं है लेकिन अधिकांश उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों के साथ लागू होता है।[11]

शिक्षा के माध्यम से अपराधियों की मानशिक दशा में सुधार लाकर अपराध पर नियंत्रण किया जा सकता है। अपराधियों को परिवीक्षा पर रिहा करके परिवीक्षा अधिकारियों की देखरेख में रखा जाता है। अपराधियों की समस्या का समाधान कराकर उसे अच्छा नागरिक बनाने का प्रयास किया जाता है। अपराधियों की आयु, उसका व्यवहार, शारीरिक एंव मानसिक स्थिति का आँकलन करके ही उसे परिवीक्षा पर रखा जाता है। परिवीक्षा अधिकारियों द्वारा अपराधियों को समझाकर तथा चेतावनी देकर सुधारने का प्रयास किया जाता है।[12] किशोर अपराधियों को सुधारने के लिए सुधारक विद्यालयों की स्थापना की जाती हैं जिसमें बच्चों को कम से कम तीन वर्षों तक तथा अधिक से अधिक सात वर्षो तक रखा जाता है। सुधारक विद्यालयों में बच्चों को छोटी – छोटी सामग्रियों को बनाने का प्रशिक्षण दिया जाता है। बाल अपचारियों को शिक्षा प्रदान करके एक आदर्श नागरिक बनाने का प्रयास किया जाता है। बच्चों एवं वयस्क अपराधियों के लिए अलग – अलग सुधारक विद्यालयों की स्थापना की जाती है। वयस्क अपराधियों को अनुशासन, शारीरिक व्यायाम, धर्म, उच्च आचरण एवं नागरिकता की शिक्षा दी जाती है।[13] सुधारक विद्यालयों के अलावा वोर्स्टल

विद्यालयों की भी स्थापना की गयी है, जिनमें सोलह से इक्कीस वर्षों की आयु के अपराधियों को रखा जाता है। साधारण श्रेणी के अपराधियों को उसकी क्षमता के अनुसार प्रशिक्षण कार्यक्रम में शामिल किया जाता है। कुछ विद्यालयों में पंचायत व्यवस्था का आयोजन किया जाता है और बाल अपचारियों को विद्यालयों के प्रबन्ध से जोड़ दिया जाता है। अपेक्षित सुधार होने पर अपराध अवधि समाप्त होने से पहले भी कुछ अपराधियों को रिहा कर दिया जाता है।[14] बाल अपचारियों को नैतिक एवं सामाजिक शिक्षा प्रदान करके सुधारा जा सकता है। सामाजिक गोष्ठियों का आयोजन करके अनैतिक परिवारों के सदस्यों को परिवार में सुखद वातावरण कायम रखने के लिए समझाया जा सकता है ताकि उस वातावरण से प्रभावित होकर बच्चे सद्मार्ग पर चले और चरित्रवान बने। मादक पदार्थों के सेवन के हानिकारक प्रभावों के बारे में बच्चों को जानकारी प्रदान करके बाल अपचारियों के व्यवहार एवं कार्यशैली में प्रर्याप्त सुधार लाया जा सकता है।[15]

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि अपराध नियंत्रण में शिक्षा का योगदान महत्वपूर्ण होता है। किसी भी अपराधी को यदि सही ढंग से अपराध करने के बाद होने वाली परेशानियों से अवगत करा दिया जाय तथा उसे नियम और कानून की सही जानकारी प्रदान की जाय, तब अपराधी अवश्य अपराध कम करेगा तथा सही रास्ते को अपनाने का प्रयास करेगा। शिक्षा प्रदान करके पेशेवर अपराधियों को भी बहुत अंशों में सुधारा जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. बी.एस. हैकरवाल, इकोनोमिक एण्ड सोसल आस्पेक्ट्स ऑफ क्राइम इन इन्डिया, पृ.–17.
2. लैन्डिस एण्ड लैन्डिस, सोसल लिभींग, पृ.–146.
3. इलियट एण्ड मेरील, सोसल डीआर्गगनाइजेशन, पृ.–110.
4. बी.एस. हैकरवाल, पूर्वोधृत, पृ.–64.
5. आर.के. शर्मा, अरबन सोसियोलॉजी, नई दिल्ली, 2004, पृ.–194.
6. वही, पृ.–191.
7. ए. डब्ल्यू वोगर, क्रीमीनाल्टी एण्ड इकोनोमिक कन्डीसन्स, बोस्टन, 1916, पृ.–192.
8. एम. इलियट, क्राइम इन माडर्न सोसाइटी, न्यूयार्क, 1952.
9. अल्मा गोनजलर, एजुकेशनः दि सेक्रेट टू क्राइम रीडक्सन, पृ.–03.
10. स्टीफेन मचीन, दि क्राइम रिहूयूसींग इफेक्ट ऑफ एजूकेशन, 2011, पृ. –463–84.
11. के. हैनसेन, एजुकेशन एण्ड दि क्राइम, 2003, पृ.–141.
12. ई. एच. सदरलैंड, प्रींस्पुल्स ऑफ क्रिमीनोलॉजी, 1965, पृ.–76.
13. जी. बी. मोरगोल्ड, दि प्रोबलम ऑफ चाइल्ड वेलफेयर, पृ.–368.
14. एल. लोचर एण्ड इ. मेरेरी, दि इफेक्ट ऑफ एजुकेशन आन क्राइम, 2003, पृ.–70.
15. राम आहूजा, सामाजिक समस्याएँ, नई दिल्ली, 2000, पृ.–364.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

साम्प्रतिक सन्दर्भ में महिला सशक्तीकरण योजनाओं की चुनौतियाँ

'देहरादून नगर स्थित मलिन बस्ती के विशेष संदर्भ में'

● जयश्री थपलिया
●● भावना मिश्र

सारांश – समकालीन समाज में महिलाओं को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए नित्य नये प्रयास किये जा रहे हैं। राजनीतिक क्षेत्र में इनकी बढ़ती सहभागिता, घर की चारदिवारी के बाहर अपार संभावनाओं की दुनियां में बढ़ते कदम आदि उनके बदलते सामाजिक–आर्थिक प्रस्थिति के परिचायक है। लेकिन महिलाओं की यह स्थिति अधिकांश रूप से उन क्षेत्रों में देखने को मिलती है, जहां भौतिकवादी एवं उपभोक्तावादी संस्कृति अपनी पकड़ बनाने में सफल रही है। बात यदि हम ग्रामीण क्षेत्रों, दूर दराज के पर्वतीय क्षेत्रों या मलिन बस्तियों की करें तो तस्वीर कुछ और ही नजर आती है। भारत जैसे ग्राम प्रधान संघीय प्रदेश में, जहां की अधिकांश आबादी आज भी गांवों में निवास करती है, के लिए गंभीर और चुनौतीपूर्ण अध्ययन का विषय है। इन महिलाओं को समाज की मुख्य धारा में लाने के लिए महिला सशक्तीकरण योजनाओं के अंतर्गत अनेक प्रावधान किये गये हैं। बावजूद इनके सामाजिक–आर्थिक प्रस्थिति में व्यापक परिवर्तन परिलक्षित नहीं होता है। आज समाचार पत्रों एवं अन्य माध्यमों से यह पता चलता है कि इस क्षेत्र में निवासरत महिलाएं सर्वाधिक संक्रमण का सामना कर रही है। ऐसा इसलिए कहा जा रहा है क्योंकि इस क्षेत्र के निवासियों का दैनिक जीवन उन लोगों के बीच गुजरता है जो उपभोक्तावादी संस्कृति के वशीभूत अपना जीवन व्यतीत करते हैं। जबकि स्वयं के आप अपनी मौलिक आश्यकताओं की पूर्ति भी बमुश्किल ही हो पाती है। ऐसे में ये महिलाएं असामाजिक कृत्य में भी सम्मिलित हो जाती हैं। ऐसे में यह जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है कि जब सरकारी एवं गैर सरकारी स्तर पर इन महिलाओं के विकास के लिए अनेक योजनाएं संचालित है, बावजूद इसके इनकी स्थिति में अपेक्षित सुधार क्यों नहीं हो पा रहा है। इन्हीं प्रश्नों को केन्द्र में रखकर इनके अपेक्षित समाधान की चर्चा प्रस्तुत शोध पत्र में किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन मूल रूप से प्राथमिक तथ्यों पर आधारित है। इसके लिए वैज्ञानिक पद्धति के विविध चरणों का प्रयोग किया गया है।

मुख्य शब्द – मलिन बस्ती, प्रस्थिति, नैतिकता, चेरी, प्रवासित, सूचना सम्प्रेषण, औद्योगीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति, असामाजिक कार्य, उन्नयन

प्रस्तावना – महिला सशक्तीकरण राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं के सामाजिक–आर्थिक एवं शैक्षिक विकास के लिए चलाई जा रही योजनाएं है। इन योजनाओं का प्रचार–प्रसार न केवल नगरीय बल्कि नगरीय एवं उसके नजदीकी क्षेत्रों में बसी मलिन बस्तियों, ग्रामीण एवं दूर–दराज के क्षेत्रों में निवासरत् महिलाओं को विकास की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए भी व्यापक तौर पर किया जा रहा है। इन क्षेत्रों में मलिन बस्ती एक ऐसा क्षेत्र

● अतिथि प्रवक्ता (इतिहास विभाग) राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नई टिहरी
●● स्वतंत्र लेखिका एवं छात्रा एम.ए. (समाजशास्त्र विभाग) मध्य प्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय, भोपाल

है, जहां निवास करने वाली अधिकांश महिलाओं की आर्थिक स्थिति निम्न होती है तथा नगरीय क्षेत्रों में निवास करने वाली मध्यम एवं उच्च प्रस्थिति वाली महिलाओं के बीच अपना अधिकांश समय गुजारती है। इस परिस्थिति के कारण यहां की महिलाएं खुद को अधिक 'वंचित' महसूस करती है। इस क्षेत्र में रहने वाली महिलाएं परिवार समेत किसी दूरस्थ क्षेत्रों से प्रवासित होकर अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए काम की तलाश में आते हैं तथा कम आय के कारण मलिन बस्तियों में निवास करने को मजबूर होते है। मलिन बस्ती को स्पष्ट करते हुए बाल्कर ने 1938 में लिखा था कि, मलिन बस्ती वह स्थान है जो शहर के पिछवाड़े गन्दी तथा अव्यवस्थित सड़क के किनारे स्थित है और जहाँ मैले-कुचैले तथा दूराचारी प्रवृत्ति के लोग बसे हुए और जहाँ का पूरा पड़ोस निम्न कोटि के गन्दे लोगों का है। इसी संदर्भ में संयुक्त राष्ट्र की नगरीय भूमि सुधार नीति 1952 में मलिन बस्ती को स्पष्ट करते हुए लिखा गया है कि 'मलिन बस्ती' वह मकान अथवा मकानों के समूहों का बस्ती या क्षेत्र है जहाँ बहुत घनी आबादी हो, जहाँ जीवन संबंधी सुविधाओं का पूर्णत: अभाव हो तथा जहाँ के लोग स्वस्थ तथा नैतिक जीवन बिता पाने में असमर्थ हो। इन तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि मलिन बस्ती वह क्षेत्र है जहां नैतिकता का स्तर निम्न हो तथा घर अव्यवस्थित एवं अनियोजित तरीके से बनी हो।

वर्तमान समय में राष्ट्रीय स्तर पर फैले मलिन बस्तियों के जाल को अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग नामों से जाना जाता है। आज मलिन बस्ती के रूप में मुम्बई में चाल नामक बहुमंजिला इमारत भी देखने को मिलती है, जो कतारों में बनी होती है। इनमें शौचालयों, स्नानगृहों तथा पेयजल की सीमित व्यवस्था होती है। चेन्नई की मलिन बस्तियों को चेरी नाम से जाना जाता है। यहां अधिकांशत: झोपड़ियाँ और कच्चे मकान पाये जाते हैं। इन चेरियों के चारो ओर पानी और गन्दी नालियाँ थीं और अधिकांश झोपड़ियों में नाम मात्र के भी रोशनदान नहीं होते हैं। ये चेरियां इतनी नीची होती हैं कि बिना झुके हुए इसमें प्रवेश नहीं किया जा सकता है। समुचित सफाई के अभाव में जमीन पर गंदगी फैली रहती है जिससे वातावरण प्रदूषित रहता है। मलिन बस्तियों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। यह केवल महानगरीय क्षेत्रों में ही नहीं बल्कि सभी नगरीय एवं औद्योगिक क्षेत्रों के आस - पास स्थित है। ऐसे क्षेत्रों में निवास करने वाले परिवार की आय अत्यन्त निम्न होती है। इतना ही नहीं प्रवासित परिवार से होने के कारण ये अपनी रोजी-रोटी के लिए आय के स्रोत के रूप में दिहाड़ी या अन्य कम आय वाले काम में लिप्त होते हैं, इस कारण उसे न तो इतना समय मिलता है कि वो अपने लिए चल रहे योजनाओं की जानकारी प्राप्त कर सके और न ही उतनी जानकारी होती है कि वो अपने हक के लिए लड़ सके। बदलते समय के साथ सूचना सम्प्रेषण के बदलते माध्यम के कारण इस प्रकार की परिस्थिति में यूं तो परिवर्तन दिखाई देता है लेकिन नगरीय या ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा आज भी इसमें जागरूकता की दर निम्न है। यही कारण है कि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मलिन बस्तियां क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर विकास के लिए एक गंभीर समस्या बनती जा रही है। आज भारत के सभी राज्यों में नगरीय क्षेत्रों एवं औद्योगिक केन्द्रों के आस-पास मलिन बस्तियों की संख्या दिन-प्रतिदिन तीव्र गति से बढ़ती जा रही है। जिनका वर्गीकरण सारणी संख्या 01 में किया गया है।

सारणी संख्या 01

भारत के मलिन बस्ती में निवास करने वाले निवासियों की जनसंख्या का वर्षवार वर्गीकरण

(जनसंख्या वितरण मिलियन में)

सोर्स : रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन स्लम स्टेटिस्टिक्स इन इंडिया

राष्ट्र	जनसंख्या वर्ष							
	2001	2011	2012	2013	2014	2015	2016	2017
भारत	28.61	93.1	95.0	96.9	98.8	100.8	102.7	104.7

सारणी संख्या 01 से स्पष्ट है कि राष्ट्रीय स्तर पर मलिन बस्ती में रहने वाले निवासियों की संख्या में तीव्र वृद्धि हो रही है। यह किसी एक राज्य की समस्या नहीं है बल्कि सभी राज्यों में विचारणीय मुद्दा बन गया है। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन कार्य हेतु अध्ययन विषय के रूप में साम्प्रतिक सन्दर्भ में महिला सशक्तीकरण योजनाओं की चुनौतियाॅ 'देहरादून नगर स्थित मलिन बस्ती के विशेष संदर्भ में' शीर्षक का चयन किया गया है।

देश की अन्य नगरों एवं महानगरों के ही समान देहरादून में भी मलिन बस्तियों की बढ़ती संख्या विकास के लिए एक गंभीर चुनौती बन चुकी है। देहरादून उत्तराखण्ड की राजधानी है। यहां रोजगार के अवसर की संभावना तथा प्रदेश स्तर पर शिक्षा का केन्द्र बिन्दु होने के कारण उत्तराखण्ड ही नहीं बल्कि अन्य राज्यों से भी बड़ी मात्रा में लोग आकर इन क्षेत्रों में निवास कर रहे हैं। इन क्षेत्रों में 129 मलिन बस्तियां है। अन्य राज्यों के ही समान इस राज्य में भी महिला सशक्तीकरण से जुड़ी अनेक योजनाएं चलाई जा रही है जिनका अन्य क्षेत्रों के समान इन क्षेत्रों पर भी पड़ने वाले प्रभाव का आकलन करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। साथ ही यह जानना भी आज के परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण हो गया है कि इसके मार्ग की बाधाएं क्या हैं। यही कारण है कि प्रस्तुत अध्ययन कार्य हेतु अध्ययन समस्या के रूप में मलिन बस्ती में संचालित महिला सशक्तीकरण योजनाएं : अपेक्षाएं एवं चुनौतियाँ देहरादून के विशेष संदर्भ में विषय का चयन किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य – समकालीन समाज में महिलाओं को विकास की मुख्य धारा में लाने के लिए नगरीय एवं ग्रामीण स्तर पर अनेक योजनाएं चलायी जा रही है। इन योजनाओं में शैक्षिक, स्वास्थ्य एवं स्वरोजगार से जुड़ी योजनाओं का अपना विशेष महत्व रहा है। यह न केवल उसे अपने अधिकारों के प्रति सजग करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है बल्कि आर्थिक रूप से सशक्त बनाने के साथ-साथ उनकी पारिवारिक एवं सामाजिक स्थिति में भी सुधार लाती है। आज औद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया ने जिस समाज एवं परिस्थिति को जन्म दिया है उसमें गरीबी एवं अमीरी के बीच एक गहरी खाई बन गयी है। नगरों में निवास करने वाले लोगों को अधिकांश सुविधा उपलब्ध कराने वाला व्यक्ति नगरों में या उसके निकटवर्ती क्षेत्रों में अव्यवस्थित रूप से बसे झोपड़ों या घरों में नगरीय व्यवस्था से वंचित जीवन व्यतीत करने को मजबूर है। यही कारण है कि प्रस्तुत शोध पत्र में इस बात को प्रकाश में लाने का प्रयास किया गया है, कि महिलाओं को स्वाबलम्बी बनाने तथा अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करने के लिए जो योजनाएं संचालित हैं, उनके अपेक्षित परिणाम तक न पहुँच पाने के पीछे किन कारकों की भूमिका महत्वपूर्ण है। इस प्रकार प्रस्तुत शोध पत्र हेतु निर्धारित उद्देश्यों को निम्नलिखित बिन्दुओं के रूप में स्पष्ट कर सकते हैं।

1. महिला विकास से जुड़ी सरकारी योजनाओं के बारे में मलिन बस्ती के महिलाओं की जागरूकता स्तर का अध्ययन करना।
2. मलिन बस्ती में सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में आने वाली बाधाओं या चुनौतियों का अध्ययन करना।

साहित्य पुनरावलोकन- बदलते समय के साथ मलिन बस्तियों के रूप में समाज एवं राष्ट्र के समक्ष एक ऐसे क्षेत्र का विकास हुआ जो अनेक समस्याओं का केन्द्र बिन्दु बन गया। यह किसी एक प्रदेश या क्षेत्र की बात नहीं है बल्कि जिस क्षेत्र में रोजगार की संभावनाओं का विकास हुआ या औद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया ने रोजगार का सृजन किया उस क्षेत्र के आस-पास बहुत तीव्र गति से मलिन बस्तियों का भी विकास हुआ है। यही कारण है कि अलग-अलग समय में अलग-अलग क्षेत्रों का अध्ययन राष्ट्रीय एवं अंतर्राट्रीय स्तर पर किया जाता रहा है। इसी क्रम में प्रस्तुत अध्ययन कार्य भारत के पर्वतीय राज्य उत्तराखण्ड की राजधानी देहरादून के मलिन बस्तियों की महिलाओं के अध्ययन का प्रयास भी एक महत्वपूर्ण अध्ययन कार्य है। इस अध्ययन के लिए प्रयुक्त किये जाने वाले अध्ययन पद्धति पर चर्चा करने से पूर्व इससे संबंधित कुछ शोध कार्य एवं पुस्तकों में इसके बारे में दिये गये विचारों को जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है।

दया बृजवासी (2003), नगरीय मलिन बस्तियों के निवासी का अध्ययन हल्द्वानी शहर के विशेष संदर्भ में शीर्षक शोध कार्य सम्पन्न किया है। अपने इस अध्ययन कार्य में पाया कि ग्रामीण परिवेश से आर्थिक पक्ष को सुदृढ़ करने हेतु मानव के पलायन के फलस्वरूप नगरीय क्षेत्रों में निर्मित मलिन बस्तियों के निवासी अच्छे रहन-सहन खान-पान व शुद्ध वातावरण से विमुक्त है। इन बस्तियों के निवासियों के शैक्षिक, सामाजिक व आर्थिक स्तर में इनके स्वयं के प्रयासों व सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं के फलस्वरूप भी अपेक्षित सुधार नहीं हो पा रहा है। आर्थिक विपन्नता के कारण इन बस्तियों के निवासियों में विभिन्न सामाजिक कुरीतियां जन्म ले रही है। इनके चलते इनकी सांस्कृतिक विरासत में भी ह्यस होता आ रहा है। वर्तमान संदर्भ में इनके जीवन स्तर में सुधार अपेक्षित है।

इसी क्रम में आभा सक्सेना द्वारा लिखी पुस्तक मलिन बस्ती की महिलाएं, अपराध और पुलिस में लिखा है कि बदलते समय के साथ मलिन बस्ती महिला अपराध का केन्द्र बिन्दु बनता जा रहा है। मौलिक सुविधाओं के अभाव में तथा भौतिकवादी एवं उपभोक्तावादी चकाचौंध के वशीभूत होकर इन क्षेत्रों में रहने वाली महिलाएं अपने आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपराध का सहारा लेती है। इसका एक बड़ा कारण यह माना जाता है कि इन क्षेत्रों में निवास करने वाली महिलाएं अपने परिवार के साथ या अकेली काम की तलाश में अन्यत्र किसी स्थान से प्रवासित होकर आयी होती है। इस प्रकार की महिलाएं अकुशल एवं अप्रशिक्षित होने के कारण कम आय वाले रोजगार से जुड़ने को मजबूर होती है तथा कम आय के कारण बढ़ते आय के दबाव में अपराध की ओर प्रवृत्त हो जाती है। इस प्रकार की परिस्थिति से निपटने के लिए आज यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि इस प्रकार के क्षेत्रों में न केवल महिलाओं को प्रशिक्षित करने के लिए अलग-अलग कार्यक्रम चलाएं जाने की आवश्यकता है बल्कि उसमें बदलती परिस्थिति के साथ जागरूक किया जाना भी अत्यन्त आवश्यक हो गया है।

उपर्युक्त वर्णित तथ्यों के आधार पर ही प्रस्तुत अध्ययन कार्य को एक छोटे स्तर पर सम्पादित किया जाना प्रासंगिक प्रतीत होता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि प्रत्येक प्रदेश की भौगोलिक एवं सामाजिक परिस्थिति भिन्न होती है। किसी भी समस्या की वास्तविकता की तह तक जाने के लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है कि हम उस समस्या को उसके भौगोलिक एवं सांस्कृतिक परिवेश के साथ जोड़कर उसके समाधान की तलाश करें।

अध्ययन पद्धति – प्रस्तुत शोध पत्र का अलेखन एक समाजवैज्ञानिक अध्ययन के आधार पर किया गया है। इस अध्ययन के समकालीन महत्व को देखते हुए इसके सफल सम्पादन हेतु वैज्ञानिक पद्धति के विभिन्न चरणों का क्रमवद्ध प्रयोग किया गया है। इस क्रम में सर्वप्रथम चयनित समस्या की विशेषता के आधार पर वर्णनात्मक अध्ययन पद्धति का चयन किया गया है। क्योंकि अध्ययन कार्य मौलिक रूप से प्राथमिक तथ्यों पर आधारित है अत: प्राथमिक तथ्य संकलन के लिए प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है। साथ ही ऐसे तथ्य जिनका संकलन प्राथमिक तथ्यों के माध्यम से किया जाना संभव नहीं है के लिए द्वितीयक तथ्यों का प्रयोग किया गया है। क्योंकि शोध पत्र प्राथमिक तथ्यों पर आधारित है , इसके लिए अध्ययन समग्र के रूप में देहरादून नगर स्थित रिस्पना नगर का चयन किया गया है, जहां के निवासरत 150 परिवार इस अध्ययन के समग्र हैं। तत्पश्चात इस चयनित अध्ययन समग्र में से सोद्देश्य निदर्शन पद्धति द्वारा 50 प्रतिशत परिवारों का चयन निदर्श इकाई के रूप में किया गया है। इन परिवारों में से एक-एक महिला सदस्यों का चयन उत्तरदाता के रूप में किया गया है। इस प्रकार प्रस्तुत अध्ययन हेतु कुल 75 महिलाओं का चयन उत्तरदाता के रूप में किया गया है। इन चयनित उत्तदाताओं से विषय संबंधित प्रश्नों से संबंधित सूचनाओं का संकलन किया है। इस प्रकार से संकलित तथ्यों का वर्गीकरण उसके प्रकृति के आधार पर करने के पश्चात उसका विश्लेषण किया गया है। इस प्रकार विश्लेषित तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष का आलेखन किया गया है।

तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण – मलिन बस्ती में निवासरत अधिकांश व्यक्ति किसी न किसी अन्य क्षेत्र से प्रवासित होकर रोजगार की तलाश में औद्योगिक एवं नगरीय क्षेत्र में आते हैं। इनमें अधिकांश वे व्यक्ति होते हैं जो ग्रामीण या विकास से दूर पर्वतीय या दुर्गम क्षेत्रों में प्रवासित होते हैं। इनके पास अपने मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति की लिए धन की कमी होती है। ऐसे में ये शहरी क्षेत्रों में कुछ भी कार्य करने को मजबूर होते हैं। लेकिन इन क्षेत्रों में निवास करने वाले कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं, जो नगरीय जीवन की चकाचौध से प्रभावित होकर आते हैं। नगर या शहर की प्रतिस्पर्धी जीवन में खुद को स्थापित न कर पाने के कारण वे या तो असामाजिक कार्यों में संलिप्त हो जाते हैं या फिर अपनी मजबूरी से समझौता कर लेते हैं। इस क्षेत्र में निवारत महिलाओं के जीवन स्तर में सुधार के लिए सरकार निरंतर प्रयासरत है। इन क्षेत्रों में सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा महिलाओं को स्वरोजगार से जोड़ने, बेहतर शिक्षा उपलब्ध कराने, उचित स्वास्थ्य व्यवस्था का प्रावधान करने आदि विविध योजनाओं का प्रावधान महिला सशक्तीकरण योजनाओं के अंतर्गत किया गया है। बावजूद इसके आज भी इस क्षेत्र में निवास करने वाली महिलाओं की स्थिति में अपेक्षित परिवर्तन परिलक्षित नहीं होता है। ऐसे में उन तथ्यों की खोज करना अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है कि ऐसे कौन से आधारभूत कारक हैं, जो इनके मार्ग में

महत्वपूर्ण बाधक साबित हो रहे हैं। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए मलिन बस्ती में रहने वाले कुछ महिलाओं से सम्पर्क कर कुछ महत्वपूर्ण विषयों पर उनके विचारों का संकलन किया गया तथा उनका वर्गीकरण एवं विश्लेषण कर उसके आधार निष्कर्ष का अलेखन किया गया।

आयु का व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। बदलते उम्र के साथ न केवल व्यक्ति में परिपक्वता एवं अनुशासनपूर्ण सामाजिक व्यवहार की बात की जाती है, वरन उनके उत्तरदायित्व का निर्धारण भी बढ़ते उम्र के साथ बढ़ता जाता है। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन कार्य हेतु अलग-अलग आयु वर्ग की महिलाओं का चयन किया गया है, जिसका वर्गीकरण सारणी संख्या 02 में किया गया है।

सारणी संख्या 02

उत्तरदाताओं की संख्या	उत्तरदाताओं की आयु का वर्गीकरण						
	20 से कम	21-30	31-40	41-50	51-60	60 से अधिक	योग
आवृति	03	23	25	14	09	01	75
प्रतिशत	04.00	30.67	33.33	18.67	12.00	01.33	100.00

उत्तरदाताओं का आयुवार वर्गीकरण

उपर्युक्त वर्गीकृत सारणी संख्या 02 के अवलोकन से स्पष्ट है कि प्रस्तुत अध्ययन के दौरान हर आयु वर्ग उत्तरदाताओं को सम्मिलित किया गया है। चयनित उत्तरदाताओं में सर्वाधिक 21 से 40 आयु वर्ग की है। ऐसा इसलिए किया गया है क्योंकि यह वर्ग न केवल उपभोक्तावादी संस्कृति से सर्वाधिक प्रभावित होते हैं। इस आयु वर्ग के व्यक्ति अपने भविष्य के लिए सर्वाधिक सजग एवं प्रतिबद्ध होते हैं।

शिक्षा समाज का आईना है। यह न केवल बदलते सामाजिक परिवेश में व्यक्ति को अनूकूलन स्थापित करने की क्षमता प्रदान करते हैं बल्कि उनमें कार्यकुशलता का भी विकास करता है। इसके अभाव न केवल आज के दौर में इनके लिए अच्छे कार्य मिलना मुश्किल होता है बल्कि वे अपने अधिकारों के प्रति भी सजग नहीं रह पाते हैं। आज जबकि संचार क्रांति ने व्यक्ति की सोच बदलने का कार्य किया है। शिक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गया है। आज औद्योगीकरण के क्षेत्र में तकनीकी को बढ़ावा दिया जा रहा है, जिसके कारण व्यवसायिक शिक्षा एवं तकनीकी शिक्षा का महत्व बढ़ता जा रहा है। यही कारण है कि आज एक ओर जहां सामान्य शिक्षा प्राप्त शिक्षित बेरोजगारों की एक लम्बी कतार है, वहीं तकनीकी रूप से कामगारों का अभाव है। जिसके कारण न केवल विकास की गति प्रभावित हो रही है बल्कि कम आय पर व्यक्ति गुजारा करने को भी मजबूर है। ऐसे में महिलाओं की शिक्षा उसकी जागरूकता के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है। इन्हीं तथ्यों को आधार मानकर उत्तरदाताओं के शैक्षिक स्तर से संबंधित तथ्यों का संकलन किया गया है, जिनका वर्गीकरण सारणी संख्या 03 में किया है -

सारणी संख्या 03

उत्तरदाताओं के शैक्षिक स्तर	आवृति	प्रतिशत
उच्च प्राथमिक	07	09.33
मध्यमिक	11	14.67
उच्च माध्यमिक	17	22.67
स्नातक	20	26.66
स्नातकोत्तर	09	12.00
व्यवसायिक	05	06.67
अन्य	06	08.00
योग	75	100.00

उत्तरदाताओं के शैक्षिक स्तर का वर्गीकरण

उपर्युक्त वर्गीकृत सारणी संख्या 03 से स्पष्ट है कि चयनित उत्तरदाताओं में महज 06 प्रतिशत ऐसे हैं, जिनकी शैक्षिक योग्यता व्यावसायिक है। ऐसे में यह 38 प्रतिशत उत्तरदाता उच्च शिक्षा रखने के बाद भी अपनी मजबूरी के कारण मलिन बस्ती में रखने को मजबूर हैं। जिससे यह भी पता चलता है कि इस क्षेत्र में निवासरत महिलाएं आज शिक्षित हैं लेकिन समय की मांग के अनुरूप शिक्षित नहीं होने के कारण अच्छे नौकरी या आमदनी के उपयुक्त स्रोत से वंचित हैं जिसके कारण वे अपने व अपने परिवार के गुजारा के लिए मलिन बस्ती में रहने को मजबूर हैं।

महिला सशक्तीकरण योजनाओं का संचालन महिलाओं को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के उद्देश्य से किया जा रहा है। इस प्रकार के कार्यों का मुख्य लक्ष्य महिलाओं को आर्थिक रूप से सक्षम बनाना है। मलिन बस्ती में निवासरत अधिकांश परिवार किसी न किसी अन्य जगह से प्रवासित होते हैं, जिनके आय का मुख्य स्रोत किसी न किसी आर्थिक क्रियाकलापों पर निर्भर करता है। इस क्षेत्र में रहने वाली अधिकांश महिलाएं समकालीन समय में बदलते कार्य की प्रकृति से अनभिज्ञ होते हैं। वे आज के प्रतिस्पर्धी दौर में खुद को साबित नहीं कर पा रहे हैं। यही कारण है कि वे अपने न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दिहाड़ी मजदूरी या किसी के घर में काम कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति को मजबूर होती हैं। इस परिस्थिति में अक्सर उनके पास इतना समय नही होता है कि वे अपना एक काम छोड़कर दूसरे काम की खोज कर सके। यही कारण है कि अक्सर इस क्षेत्र में कार्य करने वाली महिलाएं अपने कम आय के साथ समझौता करते हुए जीवन यापन करते हैं। मलिन बस्ती में रहने वाले महिलाओं के इन्हीं मजबूरियों के कारण प्रस्तुत अध्ययन हेतु संकलित सूचनाओं में उनके मासिक आय को भी सम्मिलित किया गया है। इससे संबंधित संकलित तथ्यों का वर्गीकरण सारणी संख्या 04 में किया गया है।

सारणी संख्या 04

उत्तरदाताओं का मासिक आय	आवृति	प्रतिशत
2000 रूपये से कम	03	04.00
2000 -4000 रूपये	07	09.33
4001 -6000 रूपये	11	14.67
6001 -8000 रूपये	27	36.00
8001 -10000 रूपये	18	24.00
10000 रूपये से अधिक	09	12.00
योग	75	100.00

उत्तरदाताओं के मासिक आय का वर्गीकरण

सारणी संख्या 04 के वर्गीकरण से स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में निवासरत महिलाओं की मासिक आय बहुत निम्न है। अध्ययन में पाया गया कि महज 12 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता हैं जिनकी मासिक आय 10000 से अधिक है। जिसके कारण आज के दौर में उनके लिए भोजन एवं वस्त्र की व्यवस्था करना ही मुश्किल होता है ऐसे में नगरीय क्षेत्र में अच्छे आवास में रहना उनके लिए सपने के समान होता है।

मलिन बस्ती में संचालित महिला सशक्तीकरण की चुनौतियों को जानने के लिए यह आवश्यक होता है कि सर्वपव्रथम उनके लाभार्थियों से सम्पर्क किया जाए। क्योंकि उन्हें इस समस्या का भलीभांति ज्ञान होता है कि ऐसी कौन सी बाधा है जिसके कारण अधिकांश निर्धन इससे वंचित रह जाते हैं। प्रस्तुत अध्ययन हेतु तथ्य संकलन के दौरान इस बात को जानने का भी प्रयास किया गया कि चयनित उत्तरदाताओं में ऐसे उत्तरदाताओं की संख्या कितनी है, जिन्हें महिला सशक्तीकरण योजना का लाभ किसी न किसी रूप में प्राप्त हुआ है। इस सूचनाओं का वर्गीकरण सारणी संख्या 05 में किया गया है।

सारणी संख्या 05 क्या आपको महिला सशक्तीकरण योजनाओं का लाभ मिला है।

उत्तरदाताओं की संख्या	हाँ	नहीं	योग
आवृति	43	32	75
प्रतिशत	57.33	42.67	100.00

वर्गीकृत सारणी संख्या 05 से स्पष्ट है कि 57 प्रतिशत उत्तरदाता किसी न किसी रूप में महिला सशक्तीकरण योजना से लाभान्वित हुए हैं। वे इस योजनाओं को गरीब निर्धन महिलाओं के लिए बहुत महत्वपूर्ण एवं उपयोगी मानते हैं।

महिला सशक्तीकरण योजना महिलाओं के उन्नयन के लिए संचालित एक बहुपयोगी योजना है। इसके अंतर्गत न केवल महिलाओं के आर्थिक उन्नयन को केन्द्र में रखा जाता है, वरन उसके स्वास्थ्य सहित उनके सर्वांगीन विकास के लिए अनेक योजनाएं संचालित किए जा रहे हैं। बावजूद इसके आज भी महिलाओं की स्थिति में कोई खास परिवर्तन दिखाई नहीं देता है। प्राथमिक तथ्य संकलन के दौरान उन महिलाओं से जिन्होने इस योजनाओं का लाभ किसी न किसी रूप में प्राप्त किया है या उसके संबंध में जानकारी रखता है, से इसके अपेक्षित परिणाम से वंचित रहने के कारणों के संबंध में जानने का प्रयास किया है। इस प्रकार संकलित उनके विचारों का वर्गीकरण सारणी संख्या 06 में किया गया है।

सारणी संख्या 06
महिला सशक्तीकरण योजनाओं की चुनौतियों के संबंध में वरीयता के आधार पर तीन कारकों का वर्गीकरण

मनोवृति	प्रथम वरीयता		द्वितीय वरीयता		तृतीय वरीयता	
	आवृति	प्रतिशत	आवृति	प्रतिशत	आवृति	प्रतिशत
अशिक्षा	47	62.67	21	28.00	05	06.67
उदासीनता	13	17.33	11	14.67	31	41.33
भ्रष्टाचार	11	14.67	09	12.00	17	22.67
जानकारी का अभाव	04	05.33	27	36.00	02	02.67
जटिल प्रक्रिया	00	00.00	07	09.33	13	17.33
आवश्यक पेपर का अभाव	00	00.00	00	00.00	07	09.33
योग	75	100.00	75	100.00	75	100.00

उपर्युक्त वर्गीकृत सारणी संख्या 06 से स्पष्ट है कि अधिकांश उत्तरदाता इस बात को स्वीकार करते हैं कि जिन कारकों के कारण महिला सशक्तीकरण अपेक्षित परिणाम तक नहीं पहुँच पा रहे उनमें अशिक्षा का अपना विशेष महत्व है। महिला सशक्तीकरण की मुख्य चुनौतियों के रूप में जानकारी का अभाव तथा भ्रष्टाचार को भी मुख्य कारक के रूप में स्वीकार किया है। कुछ लोगों का मानना था कि अपने दैनिक जीवन की व्यस्तता और जीवन से निराश होकर व्यक्ति स्वयं से या व्यवस्था से उदासीन हो जाते हैं और वो अपने जिन्दगी के दुखों से समझौता कर लेते हैं। ऐसी स्थिति में व्यक्ति सरकार द्वारा संचालित योजनाओं के प्रति उदासीन हो जाते हैं, जो महिला सशक्तीकरण की विफलता या एसके अपेक्षित रूप में सफल न होने का प्रमुख कारण साबित होता है।

निष्कर्ष– वर्तमान समय में जबकि राष्ट्रीय विकास का आधार औद्योगिक विकास की दर पर आश्रित हो चुका है तथा इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप मलिन बस्तियों की संख्या में दिन–प्रतिदिन तीव्र वृद्धि दर्ज की जा रही है। ये वो क्षेत्र होते हैं, जिसमें रहने वाले व्यक्ति आम तौर पर ग्रामीण एवं दूर दराज के क्षेत्रों से रोजगार की तलाश में आते हैं तथा शहर के मध्य या उसके सटे क्षेत्रों में झुग्गी–झोपड़ी बनाकर उसमें निवास करते हैं। इस क्षेत्र में निवास करने वाले आम तौर पर वो व्यक्ति होते हैं जो शहरों में असंगठित क्षेत्रों में अन्य कम आय वाले रोजगार से जुड़े होते हैं। ऐसे में इस क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों को और विशेष रूप से इस क्षेत्र की महिलाओं को यदि सशक्त किया जाए तो वो न केवल अपने परिवार का बल्कि भावी पीढ़ी को भी सशक्त बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी। इन्हीं तथ्यों को स्वीकार करते हुए सरकारी एवं गैर सरकारी स्तर पर अनेक योजनाओं का संचालन किया जा रहा है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण है महिला सशक्तीकरण योजना। अध्ययन में पाया गया कि आज भी महिला सशक्तीकरण योजना अपने अपेक्षाओं पर खड़ा उतरने में वंचित रह जा रहे हैं, जिनका प्रमुख कारण अशिक्षा, उदासीनता, जानकारी का अभाव एवं भ्रष्टाचार है। इसलिए आज इन योजनाओं की सफलता के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह है कि समाज में न केवल रोजगारपरक शिक्षा का प्रचार–प्रसार किया जाए वरन् इसके लिए यह भी महत्वपूर्ण हो जाता है कि लोगों को इस योजना के प्रति सजग किया जाए। इसके अभाव में महिलाओं के उन्नयन का सपना कभी साकार रूप नहीं ले सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. डबराल, शिव प्रसाद, उत्तराखण्ड का इतिहास, वीर गाथा प्रकाशन, दोगडडा, गढ़वाल 1976
2. थपलियाल, प्रकाश, हिमालय गजेटियर, उत्तराखण्ड प्रकाशन चमोली, 1973
3. रतूड़ी हरिकृष्ण, गढ़वाल का इतिहास, 1988
4. बिष्ट, बी.एस., उत्तरांचल ग्रामीण समुदाय, पिछड़ी जाति एवं जनजाति परिदृश्य, अल्मोड़ा 1997
5. सक्सेना, आभा, मलिन बस्ती की महिलाएं, अपराध और पुलिस, 2009
6. सिंह, बी.एन., आधुनिकता एवं नारी सशक्तीकरण, रावत प्रकाशन, जयपुर 2010
7. यंग, पी. वी., सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च, एशिया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई, 1960
8. रिपोर्ट ऑफ द कमेटी ऑन स्लम स्टेटिस्टिक्स इन इंडिया
9. पत्रिकाएं – पर्वतजन
   पहाड़
   गुरूकुल
10. वेबसाइट – www.uk.gov.in
    dehradun.nic.in

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

स्वच्छता अभियान में नागरिकों की जागरुकता तथा सामाजिक संगठनों की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन
(रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)

• अखिलेश शुक्ल
•• शिवबिहारी कुशवाहा

सारांश – स्वच्छता और स्वास्थ्य किसी समाज में सामाजिक तथा आर्थिक विकास के संकेतक माने जाते है। किसी देश के स्वच्छता तथा स्वास्थ्य से स्तर का राष्ट्र के आर्थिक विकास और कार्य निष्पादन पर जोरदार असर पड़ता है। प्रस्तुत शोध पत्र में रीवा जिले में स्वच्छता अभियान में सामाजिक संगठनों की क्या भूमिका है? इसका अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। 73.33 प्रतिशत उत्तरदाता स्वच्छता से संतुष्ट है। 72 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि रीवा जिले में शासन द्वारा साफ-सफाई पर जोर दिया जा रहा है। 80 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि रीवा जिले में लॉकडाउन प्रभावी ढंग से लागू हुआ है। 65.34 प्रतिशत उत्तरदाता का मानना है कि लॉकडाउन के दौरान जरूरी सामान, सेवाओं की अपूर्ति व्यवस्था सही ढंग से हुई है। 67.33 प्रतिशत नागरिकों का मानना है कि लॉकडाउन का पालन नहीं होता तो कोरोना से स्थिति ज्यादा बिगड़ जाती। 83.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि जरूरत पड़ी तो भविष्य में भी सख्त लॉकडाउन किया जाना चाहिए। कोरोना के कारण प्रभावित हुआ जीवन सामान्य हो जाएगा। इसके बारे में यह नही कहा जा सकता कि कब तक कारोना के कारण प्रभावित जीवन सामान्य होगा।

मुख्य शब्द – स्वच्छता, संगठन, समाज, कन्टेनमेन्ट, कोरेनटीन, सेनेटाइज, मास्क, सोशल डिस्टेंसिंग

प्रस्तावना – भारत में ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम, भारत सरकार की प्रथम पंचवर्षीय योजना के रूप में 1954 में शुरू किया गया था। 1981 की जनगणना से पता चला कि ग्रामीण स्वच्छता कवरेज मात्र 01 प्रतिशत था।[1] वर्ष 1981-90 के दौरान पेयजल एवं स्वच्छता के लिए अन्तर्राष्ट्रीय दशक में ग्रामीण स्वच्छता पर जोर देना शुरू किया गया। भारत सरकार ने वर्ष 1986 में केन्द्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम शुरू किया जिसका उद्देश्य प्राथमिक रूप से ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाना तथा महिलाओं को सम्मान प्रदान करना था।[2] 1999 से ''सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान'' के अन्तर्गत ''मांग जनित'' दृष्टिकोण ने ग्रामीण लोगों के बीच जागरूकता तथा स्वच्छता सुविधाओं के लिए मांग सृजन में वृद्धि करने के लिए सूचना, शिक्षा और सम्प्रेषण, मानव संसाधन विकास, क्षमता विकास गतिविधियों पर अधिक जोर दिया। इससे लोगों की आर्थिक स्थिति के अनुसार, वैकल्पिक सुपुर्दगी तंत्रों के जरिए समुचित विकल्पों का चयन करने हेतु उनकी क्षमता में बढ़ोत्तरी करना है।[3] गरीबी रेखा से नीचे (बीपीएल) के परिवारों को उनकी उपलब्धियों को मान्यता प्रदान करते हुए वैयक्तिक

• प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
•• शोध छात्र, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (म.प्र)

पारिवारिक शौचालयों के निर्माण तथा उपयोग पर वित्तीय प्रोत्साहन प्रदान किए गए। वर्तमान परिदृश्य में कोरोना संकट ने एक नई स्थिति पैदा कर दी है।[4] लाखों लोग अपने गांव जाना चाहते है। उन्हें शहरों में रोककर रखने की भरसक कोशिश की गई। अंतत: उन्हें अपने-अपने गांव भेजने के लिए सरकार को विशेष रेलगाड़ियाँ चलानी पड़ी। इस अनोखे परिदृश्य के साथ न्याय करने के लिए गांव की उपेक्षा और शहरीकरण को प्रोत्साहन का इतिहास काफी लंबा है, पर इस इतिहास में 1990 के दशक में नई सघनता आई। वैश्वीकरण और बाजारीकरण के संदर्भ में शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे बुनियादी महत्व के सामाजिक क्षेत्रों से राज्य पीछे हटने लगा।[5] इन क्षेत्रों को निजी पूंजी के निवेश और व्यापार के लिए खोल दिया। एक जमाने में यह वाद विवाद का विषय था कि, जिनमें एक पक्ष कहता था कि गांव अपने आप में सुन्दर हैं और दूसरे पक्ष का दावा था कि गांव एक अवरूद्ध और क्षय होते ढ़ाचे हैं। ऐसी बहसें अब प्रासंगिक नहीं रहीं। इसी तरह यह अकादमिक या प्रशासनिक उलझन, कि गांव कि परिभाषा या पहचान किस तरह की जाए, अब बेमानी लगती है। गांव लौटने पर आमादा श्रमिकों ने सिद्ध कर दिया है कि गांव आज भी एक जीती जागती इकाई हैं।[6]

अपने अस्तित्व का इजहार करते गांवों का यथार्थ कोरोना संकट से नही बदलेगा, बल्कि भीड़ और घनी होगी। वह घटेगी तभी, जब गांव को अपने मिजाज के अनुसार अपना भविष्य तय करने के साधन मिलेंगे। यह साधन आर्थिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक दृष्टि में परिवर्तन के बगैर विकसित नहीं किए जा सकते। शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्रों में गांव किसी सुदूर केन्द्र की परिधि न होकर आपनी बौद्धिक और शारीरिक ऊर्जा का लाभ उठा सके, तभी मानव संसाधन का निर्यात रूकेगा।[7] जहां तक आर्थिक क्षेत्र का प्रश्न है, छोटे और मझले स्तर के उद्योगों में से लगभग आधे आज गांवों में ही चल रहे हैं। इनकी प्रगति कानूनी सुरक्षा और पूंजी के निवेश से संभव है। सबसे बड़ा सवाल कृषि को महत्व और किसानों को गरिमा देने का है। इन प्रश्नों से जुड़ें सैकड़ों संघर्ष दशकों से चलते रहे है, पर गांव का गांवत्व लगातार महानगरीय सोच और सपनों में घिरता चला गया है।

शोध का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र के निम्नलिखित उद्देश्य है –

1. स्वच्छता, साफ-सफाई और खुले में शौच प्रथा समाप्त करने को बढ़ावा देकर ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों के सामान्य जीवन स्तर में सुधार लाना।
2. स्वच्छ रीवा का विजन प्राप्त करने हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता कवरेज की गति तेज करना।
3. जागरूकता सृजन और स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से स्थायी स्वच्छता और आदतें अपनाकर समुदायों और पंचायती राज संस्थाओं को प्रेरित करना।
4. पारिस्थितिकीय रूप से सुरक्षित एवं स्थायी स्वच्छता के लिए लागत प्रभावी और संगत प्रौद्योगिकियों को बढ़ावा देना।
5. जहां भी आवश्यक हो, ग्रामीण क्षेत्रों में सम्पूर्ण साफ-सफाई के लिए वैज्ञानिक ठोस एवं तरल अपशिष्ट प्रबंधन प्रणालियों पर ध्यान संकेन्द्रित करते हुए समुदाय प्रबंधित स्वच्छता प्रणालियों का विकास करना।
6. कोरोना महामारी से सम्बन्धित स्वच्छता पर बढ़ावा देना।
7. कोरोना महामारी को कम करने के लिए जन-जागरूकता तथा स्वच्छता पर पर जोर

दिया गया है।

अध्ययन पद्धति – प्रस्तुत अध्ययन को स्वरूप देने के लिए उद्देश्यपरक निर्देशन के अन्तर्गत रीवा जिले का चयन किया गया। रीवा जिले के शहरी एवं ग्रामीण इलाकों में रह रहे लोगों का चयन निदर्शन के माध्यम से किया गया है। समाज में स्वच्छता अभियान की स्थिति, इसकी लोकप्रियता और कार्य पद्धति को केन्द्र में रखकर यह शोध कार्य किया गया है। तथ्यों और आंकड़ों को प्रश्नावली, अनूसूची के माध्यम से एकत्रित कर उनका विश्लेषण किया गया है। शोध अध्ययन रीवा शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले नागरिकों पर विशेष रूप से केन्द्रित है। अध्ययन में महिला एवं पुरूष नागरिकों को शामिल किया गया है, जिनमें विषय से संबंधित जानकारी प्राप्त की गई है। तथ्य संकलन हेतु अनुसूची को भरवाया गया है। तथ्य विश्लेषण में सौ प्रतिभागियों के मतों को शामिल किया गया है। तथ्य संकलन का कार्य मई 2020 में किया गया है।

शोध उपकरण: प्रश्नावली – अध्ययन को स्वरूप प्रदान करने के लिए रीवा के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में निवास कर रहे लोगों से प्रश्नावली के माध्यम से उनकी राय और विचारों को जानने के प्रयास किया गया है। तथ्य संकलन के लिए प्रश्नावली का उपयोग किया गया है। जिसके माध्यम से प्रतिभागियों के विचारों को भी शोध में शामिल किया गया है।

अनुसूची – कुछ प्रतिभागियों को प्रश्नावली समझने में समस्या होने के कारण, उनसे राय और विचार जानने के लिए प्रश्नावली का उपयोग यहाँ अनुसूची के रूप में भी किया गया है।

तथ्यों का सारणीयन एवं विश्लेषण– साक्षात्कार अनुसूची में कुल 07 प्रश्नों को शामिल किया गया है। साक्षात्कार अनुसूची में बहुविकल्पीय प्रश्नों के माध्यम से प्राप्त तथ्यों को अध्ययन हेतु केन्द्र में रखा गया है। साक्षात्कार अनुसूची में विकल्प के रूप मे हॉ, नही और पता नही को तथ्य संकलन हेतु आधार बनाया गया है। जो इस प्रकार है –

तालिका क्रमांक 01

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शो की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	हॉ	150	110	73.33
2	नही	150	30	20
3	पता नही	150	10	6.67
योग –		150	150	100

क्या आप अपने जिले के स्वच्छता से संतुष्ट है?

शहर में हो रही स्वच्छता के संबंध में जब उत्तरदाताओं से प्रश्न किया गया तो न्यादर्शो की कुल संख्या 150 में 110 (73.33) प्रतिशत नागरिकों ने कहा स्वच्छता से सतुष्ट है। 30 (20 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा संतुष्ट नहीं है। 10 (6.67) प्रतिशत नगरिकों ने कहा पता नहीं है। उपरोक्त आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि रीवा जिले के नागरिकों संबंधित संस्थाओं द्वारा कराई जा रही स्वच्छता से संतुष्ट हैं।

तालिका क्रमांक 02

क्या आपके जिले में शासन द्वारा साफ-सफाई पर ध्यान दिया जा रहा है?

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शो की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	हॉ	150	108	72
2	नही	150	33	22
3	पता नही	150	09	6
योग –		150	100	100

उत्तरदाताओं से जब यह प्रश्न किया गया कि आपके जिले में शासन द्वारा स्वच्छता के संबंध में प्रभावी कदम उठाए जा रहे हैं तो न्यादर्शो की कुल संख्या 150 में से 108 (72 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा साफ-सफाई पर ध्यान दिया जा रहा है, 33 (22 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा साफ-सफाई पर जोर नहीं दिया जा रहा है। 09 (6 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा ज्ञात नही है। उक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि रीवा जिले के नागरिकों ने कहा स्वच्छता पर शासन द्वारा विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

तालिका क्रमांक 03

क्या आपके जिले में लॉकडाउन प्रभावी ढंग से लागू हुआ?

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शो की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	पूरी तरह	150	136	90.67
2	पूरी तरह नही	150	10	6.66
3	पता नही	150	04	2.67
योग –		150	150	100

उत्तरदाताओं से जब यह जानने का प्रयास किया गया कि आपके जिले में लॉकडाउन प्रभावशाली रूप से लागू हुआ या नहीं तो न्यादर्शो की कुल संख्या 150 में से 136 (90.67 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा रीवा जिले में लॉकडाउन प्रभावी ढंग से लागू हुआ है। 10 (6.66 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा रीवा जिले में लॉकडाउन प्रभावी ढंग से लागू नही हुआ है। 04 (2.67 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा पता नही। इससे यह स्पष्ट होता है कि रीवा जिले में लॉकडाउन प्रभावी ढंग से लागू हुआ है।

तालिका क्रमांक 04

लॉकडाउन के दौरान जरूरी सामान/सेवाओं की आपूर्ति व्यवस्था सही ढंग से हुई

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शो की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	हॉ पूरी तरह से	150	90	60
2	विल्कुल नही हुई	150	41	27.33
3	पूरी तरह से नही	150	11	7.33
योग –		150	150	100

उक्त सारणी क्रमांक 04 से स्पष्ट होता है कि लॉकडाउन के दौरान जरूरी सामान/सेवाओं की आपूर्ति व्यवस्था सही ढंग से हुई में कुल न्यादर्शो की संख्या 150 में से 90 (60 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा लॉकडाउन के दौरान जरूरी सामान/सेवाओं की आपूर्ति व्यवस्था सही ढंग से हुई है। 41(27.33 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा लॉकडाउन के दौरान जरूरी सामान/सेवाओं की आपूर्ति व्यवस्था सही ढंग से नही हुई है। 11(7.33 प्रतिशत)

नागरिकों ने कहा ज्ञात नही है।

तालिका क्रमांक 05

क्या लॉकडाउन का पालन नहीं होता तो कोरोना से स्थिति ज्यादा बिगड़ जाती?

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शो की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	हॉ पूरी तरह से	150	116	77.33
2	विल्कुल नही हुई	150	26	17.33
3	पूरी तरह से नही	150	08	5.33
योग –		150	150	100

सारणी क्रमांक 05 से स्पष्ट होता है कि लॉकडाउन का पालन नहीं होता तो कोरोना से स्थिति ज्यादा बिगड़ जाती में कुल न्यादर्शो की संख्या 150 में से 116 (77.66) प्रतिशत नागरिकों ने कहा लॉकडाउन का पालन नहीं होता तो कोरोना से स्थिति ज्यादा बिगड़ जाती। 26 (17.33 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा लॉकडाउन का पालन नहीं होता तो कोरोना से स्थिति ज्यादा नही बिगड़ती। 08 (5.33 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा ज्ञात नही है। इससे स्पष्ट होता है कि रीवा जिले में लॉकडाउन का पालन नहीं होता तो कोरोना से स्थिति ज्यादा बिगड़ जाती।

तालिका क्रमांक 06

यदि जरूरत पड़ी तो क्या भविष्य में भी लॉकडाउन के साथ-साथ आर्थिक स्थिति को बहाल करते हुए अर्थव्यवस्था को मजबूत किया जाना चाहिए?

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शो की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	हॉ पूरी तरह से	150	113	75.33
2	विल्कुल नही	150	29	19.33
3	लॉकडाउन हो पर जरूरी काम के लिए छूट मिले	150	08	5.33
योग –		150	150	100

सारणी क्रमांक 06 से स्पष्ट होता है कि यदि जरूरत पड़ी तो क्या भविष्य में भी सख्त लॉकडाउन किया जाना चाहिए में कुल न्यादर्शो की संख्या 150 में से 113 (75.33 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा यदि जरूरत पड़ी तो भविष्य में भी सख्त लॉकडाउन किया जाना चाहिए। 29 (19.33 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा जरूरत पड़ी तो भविष्य में भी सख्त लॉकडाउन नही किया जाना चाहिए। 08 (5.33) नागरिकों ने कहा ज्ञात नही है। इससे स्पष्ट होता है कि रीवा जिले में यदि जरूरत पड़ी तो क्या भविष्य में भी सख्त लॉकडाउन किया जाना चाहिए।

तालिका क्रमांक 07.

क्या कोरोना के कारण प्रभावित हुआ जीवन सामान्य हो जाएगा?

क्रमांक	नागरिक	न्यादर्शो की संख्या	संख्या	प्रतिशत
1	तीन महीने में	150	28	18.67
2	6 महीने में	150	62	41.33
3	कहा नही जा सकता	150	60	40
योग –		150	150	100

सारणी क्रमांक 07 से स्पष्ट होता है कि कोरोना के कारण प्रभावित हुआ जीवन सामान्य हो जाएगा में कुल न्यादर्शो की संख्या 150 में से 28 (18.67) नागरिकों ने कहा तीन महीने में कोरोना के कारण प्रभावित हुआ जीवन सामान्य हो जाएगा। 62 (41.33 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा कोरोना के कारण प्रभावित हुआ जीवन 6 महीने में सामान्य हो जाएगा। 60 (40 प्रतिशत) नागरिकों ने कहा, नही कहा जा सकता है। इससे स्पष्ट होता है कि कोरोना के कारण प्रभावित हुआ जीवन सामान्य होने में समय लगेगा।

निष्कर्ष – 73.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि रीवा जिले में स्वच्छता से नागरिक संतुष्ट है। 72 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि रीवा जिले में शासन द्वारा साफ–सफाई पर जोर दिया जा रहा है। 80 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि रीवा जिले में लॉकडाउन प्रभावी ढंग से लागू हुआ है। 65.34 प्रतिशत उत्तरदाता का मानना है कि लॉकडाउन के दौरान जरूरी सामान,सेवाओं की अपूर्ति व्यवस्था सही ढंग से हुई है। 67.33 प्रतिशत नागरिकों का मानना है कि लॉकडाउन का पालन नहीं होता तो कोरोना से स्थिति ज्यादा बिगड़ जाती। 83.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि जरूरत पड़ी तो भविष्य में भी सख्त लॉकडाउन किया जाना चाहिए। कोरोना के कारण प्रभावित हुआ जीवन सामान्य हो जाएगा। इसके बारे में यह नही कहा जा सकता कि कब तक कोरोना के कारण प्रभावित जीवन सामान्य होगा।

सुझाव –

1. स्वच्छता अभियान के माध्यम से लोगो को हर एक व्यक्ति को अपनी सफाई का काम खुद करने के प्रति जागरूकता होनी चाहिए।
2. कोरोना महामारी से बचाव के लिए सोशल डिस्टेसिंग का पालन करना अनिवार्य है।
3. स्वच्छता हेतु स्वच्छ तरीके से कचरे के प्रबधंन के लिए नष्ट होने योग्य कचरा निपटान थैले का इस्तेमाल किया जाना आवश्यक है।
4. सफाई कार्यो के लिए पर्यावरण के अनुकूल रसायनों का उपयोग करना अति आवश्यक है।
5. साफ–सफाई और ठोस व तरल कचरा प्रबंधन पर जोर दिया जाना आवश्यक है।
6. स्वच्छता अभियान में जागरूकता फैलाने के लिए शार्ट फिल्म, पोस्टर, वैनर, चित्र आदि दिखाकर स्वच्छ रखने का सन्देश देने की आवश्यकता है।
7. सफाई–कार्यो में मशीनरी का ज्यादा से ज्यादा इस्तेमाल करने से संक्रमण से बचा जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. योजना अक्टूबर 2017
2. कुरुक्षेत्र जनवरी 2020
3. दैनिक पत्रिका रीवा माह मार्च 19.04.2020 से 01जून 2020
4. दैनिक भास्कर रीवा माह मार्च 27.03.2020 से 01 जून 2020
5. दैनिक जागरण रीवा माह मार्च 25.03.2020 से 03 जून 2020
6. स्टार समाचार रीवा माह अप्रैल 05.04.2020 से 03 जून 2020.06.05
7. माया पत्रिका माह मार्च 2020

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

ग्रामीण से नगरीय प्रवास को नियंत्रित करने में ग्रामीण सेवा केन्द्रों की भूमिकाः पटना जिला के बहरामपुर गाँव का एक सूक्ष्मस्तरीय अध्ययन

• विवेक कुमार

"ग्रामीण सेवा केन्द्र" की अवधारणा "केन्द्रीय स्थल सिद्धांत" से लिया गया है। यह एक "विकास केन्द्र" होता है, जो अपनी जनसंख्या के साथ-साथ आस-पास के लोगों को भी विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ एवं सेवाएँ उपलब्ध कराती है। संबंधित क्षेत्रों के सतत् एवं संतुलित सामाजिक-आर्थिक विकास में ग्रामीण सेवा केन्द्रों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इस प्रकार ग्रामीण से शहरी प्रवास को नियंत्रित करने का यह एक महत्वपूर्ण युक्ति है, क्योंकि ग्रामीण से शहरी प्रवास मुख्यतः बेरोजगारी, गरीबी, अपर्याप्त शैक्षनिक एवं चिकित्सा व्यवस्था तथा अलाभकारी कृषिकार्य आदि से प्रेरित होती है। प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य है, ग्रामीण से शहरी प्रवास को नियंत्रित करने में ग्रामीण सेवा केन्द्रों की भूमिका का सूक्ष्मस्तरीय अध्ययन करना। यह अध्ययन कार्य प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के आँकड़ों पर आधारित है - प्राथमिक आँकड़ों का संग्रह, स्वावलोकन एवं ग्रामीणों का साक्षात्कार के माध्यम से किया गया है, जबकि द्वितीयक आँकड़ों का संग्रह जनगणना कार्यालय, शोध-पत्रिकाएँ, इन्टरनेट, अप्रकाशित शोध-प्रबंध, समाचार पत्रों एवं अन्य माध्यमों से किया गया है। अध्ययन कार्य के लिए चयनित सूक्ष्मस्तरीय अध्ययन क्षेत्र पटना जिला का "बहरामपुर गाँव" है, जो धनरूआ प्रखण्ड में कररूआ नदी के मैदानी भाग मे स्थित है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार बहरामपुर गाँव की कुल जनसंख्या 2115 थी, जिसमें से 807 कार्यकारी जनसंख्या थी, जिसमें से 132 लोग (16.35 प्रतिशत) गैर-कृषि कार्यो में संलग्न थे, जिसमें से लगभग 55 व्यक्ति (41 प्रतिशत) प्रवासित थे। वर्ष 2019 में स्वावलोकन में यह पाया गया है कि कुल जनसंख्या 2405 है, जिसमें से 215 व्यक्ति (23.24 प्रतिशत) गैर कृषि कार्य में संलग्न है, जिसमें से 77 व्यक्ति (36 प्रतिशत) प्रवासित है। अर्थात् अध्ययन क्षेत्र के आस-पास ग्रामीण सेवा केन्द्रों का विकास होने से ग्रामीण से शहरी प्रवास की दर में आशाजनक कमी आयी है, क्योंकि ग्रामीण सेवा केन्द्रों के विकास होने से लोगों को घर के पास में हीं रोजगार के अवसर प्राप्त हुए है एवं विभिन्न प्रकार की शहरी सुविधाएँ भी लोगों को अब पास में ही उपलब्ध हो गया है। इस प्रकार ग्रामीण से शहरी प्रवास नियंत्रित होने के साथ-साथ लोगों में सम्पन्नता भी आयी है।

मुख्य शब्द - ग्रामीण से नगरीय प्रवास, ग्रामीण सेवा केन्द्र, ग्रामीण विकास।

परिचय - प्रवास का सामान्य अर्थ है, व्यक्तियों का एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाकर बसना। इसके कई प्रकार हो सकते है, लेकिन किसी दूसरे स्थान पर आकर बसने की प्रकृति, खासकर समय के आधार पर प्रवास को स्थायी एवं अस्थायी प्रवास में वर्गीकृत किया जा सकता है। स्थायी प्रवास में आये हुए व्यक्ति बसावट के बाद वापस अपने मूल स्थान पर नही जाते हैं, जबकि अस्थायी प्रवास के अन्तर्गत वे लोग आते हैं जो कुछ समय बाद अपने मूल निवास स्थान को लौट जाते है। ये अस्थायी प्रवास मौसमी एवं दैनिक दोनों प्रकार के हो सकते है। प्रस्तुत अध्ययन में "ग्रामीण से नगरीय प्रवास" का अध्ययन किया गया है,

• अतिथि शिक्षक, भूगोल विभाग, बी. आर. बी. कालेज, समस्तीपुर, एल. एन. एम. यू. दरभंगा

जिसके अंतर्गत स्थायी एवं अस्थायी दोनों प्रकार के प्रवास की प्रवृतियों को देखा गया है। "ग्रामीण से नगरीय प्रवास" का मुख्य कारण होता है, रोजगार की तलाश एवं नौकरी-पेशा वालों का स्थानांतरण। ऐसी स्थिति में ग्रामीण सेवा केन्द्रों का विकास होने से लोगों को अब गाँव के आस-पास में सामान्य स्तर के विभिन्न शहरी सुविधाएँ एवं रोजगार के अवसर उपलब्ध हो रहे है, जिसके कारण अब ग्रामीण लोग गाँव में ही रहकर जीविकोपार्जन करने की भरसक कोशिश करते है। वर्तमान में ग्रामीणों की इस प्रवृति को अध्ययन क्षेत्र बहरामपुर गाँव में बाखुवी देखा जा सकता है।

अध्ययन का उद्देश्य - प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य है, ग्रामीण से शहरी प्रवास को नियंत्रित करने में ग्रामीण सेवा केन्द्रों की भूमिका का सूक्ष्मस्तरीय अध्ययन करना।

शोध-अध्ययन विधि - शोध-अध्ययन के अंतर्गत निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु मुख्यतः प्राथमिक आँकड़ों का सहारा लिया गया है तथा कुछ द्वितीयक आँकड़ों का भी उपयोग किया गया है। प्राथमिक आँकड़ों का संग्रहण स्वावलोकन एवं ग्रामीण लोगों से साक्षात्कार के माध्यम से किया गया है जबकि द्वितीयक आँकड़ों का संकलन जनगणना कार्यालय, पटना; प्रखण्ड कार्यालय, धनरूआ, शोध पत्रिकाएँ एवं इन्टरनेट आदि के माध्यम से किया गया है, जिसे उपयुक्त सारणीी की सहायता से तथ्यों को प्रदर्शित करने का प्रयास किया गया है। नोट - शादी-विवाह के कारण होने वाले प्रवास को इस अध्ययन में शामिल नहीं किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र - चयनित सूक्ष्मस्तरीय अध्ययन क्षेत्र "बहरामपुर गाँव" बिहार के पटना जिला के धनरूआ प्रखण्ड में कररूआ नदी के पूरब मे अवस्थित है, जिसका अक्षांसीय विस्तार $25^{0}18'46''$N से $25^{0}19'20''$N अक्षांस एवं देशान्तरीय विस्तार $85^{0}8'0''$E से $85^{0}9'13''$E देशान्तर तथा समुद्रतल से औसत ऊँचाई लगभग 58 मीटर है। इसका कुल क्षेत्रफल 177 हेक्टेयर (1.77 Square KM.0) है। 2011 की जनगणना के अनुसार बहरामपुर गाँव की कुल जनसंख्या 2115 है एवं यहाँ की जनसंख्या घनत्व 1195 व्यक्ति/km^2 है। यह बिहार की राजधानी पटना (जीरो माईल) से लगभग 35 km दक्षिण मे स्थित है। इसके उत्तर में ओलीपुर गाँव दक्षिण मे छोटकीमठ गाँव, पूरब में पिपरावाँ गाँव स्थित है एवं पश्चिम मे कररूआ नदी बहती है।

ग्रामीण सेवा केन्द्र - किसी भी भौगोलिक क्षेत्र में मानव एवं प्राकृतिक संसाधनों के क्षेत्रीय वितरण में सकेन्द्रण की प्रवृति पायी जाती है, जिसके अन्तर्क्रियात्मक कारणों से मानव अधिवासों का विकास भी प्रेरित होता है। फलस्वरूप कुछ अधिवासों की अवस्थिति केन्द्रीय हो जाती है। सामान्यतः इस प्रकार के अधिवासों का वितरण कुछ निश्चित दूरी अंतराल पर मिलता है, जो मानव के विभिन्न प्रकार के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं को पूरा करता है। अर्थात् ग्रामीण क्षेत्रों में ये केन्द्रीय अधिवास, "विकास केन्द्र" का कार्य करता है, जिसे ग्रामीण सेवा केन्द्र कहा जाता है। अर्थात्, "ग्रामीण सेवा केन्द्र" से तात्पार्य वैसे ग्रामीण केन्द्र से है, जो अपने क्षेत्र के साथ-साथ अपने आस-पास के क्षेत्रों को भी विभिन्न प्रकार की सेवाएँ प्रदान करता है। ये सेवाएँ विभिन्न प्रकार (जैसे प्रशासनिक, स्वास्थ्य, शैक्षणिक, परिवहन, वाणिज्यिक आदि) एवं विभिन्न स्तर (सामान्य एवं विशेष) के हो सकते हैं।

Table - 1. ECONOMIC & CULTURAL STATUS OF BAHRAMPUR AND ITS SURROUNDING RURAL SERVICE CENTRES																					
Serial No.	Name of village	Location code No.	Area (in hectare)	Population of village	Middle school	Secondary school	S. Secondary school	Degree college	Post office	Cyber café	Bus stand	Banking facility	Regular market	Health centre	Total worker (in %)	Percentage of Non Agricultural main worker of total worker	Literacy rate	Public Library	Sports Field	News paper supply	Community centre
	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22
1	Dhanarua	245963	193	2938	1	2	0	0	Y	Y	Y	Y	Y	Y	48	22	57	N	N	Y	Y
2	Sain	245986	210	3407	1	1	1	1	Y	Y	Y	Y	N	N	30	14	55	Y	Y	Y	Y
3	Badiha	246034	331	3513	2	1	0		N	Y	Y	Y	Y	Y	44	4	52	Y	N	Y	Y
4	Moriawan	245988	379	3458	4	3	0	0	N	Y	Y	Y	N	Y	32	8	48	Y	N	Y	Y
5	Bhergawan	245989	183	1709	2	5	2	1	Y	Y	N	Y	N	Y	28	15	53	N	N	Y	N
6	Chhotky math / Dewra math	260358	46	1073	0	0	0	0	N	Y	Y	Y	y	y	24	7	47	N	Y	Y	Y
7	Panditganj	246028	45	833	1	1	1	0	Y	Y	N	N	Y	N	40	13	35	N	Y	Y	N
8	Bahrampur	246038	160	2115	1	1	0	0	Y	Y	N	N	Y	Y	38	12	52	N	Y	Y	N
9	Pabheri	245955	158	1699	1	4	0	0	N	Y	Y	Y	Y	Y	32	12	43	Y	N	Y	Y

Source: Census of India 2011 And self observation of Researcher in 2019.

अध्ययन क्षेत्र के रूप में चयनित बहरामपुर गाँव एक ग्रामीण सेवा केन्द्र के रूप में कार्य कर रहा है, जिसके आस-पास छोटकीमठ, धनरूआ, पभेरी, साइ, मोरीयावा, पंडितगंज, ओकरी बडीहा आदि ग्रामीण सेवा केन्द्र अवस्थित है, जो अपने लोगों के साथ-साथ आस-पास के क्षेत्रों को भी विभिन्न प्रकार की सेवाएँ एवं रोजगार को अवसर प्रदान कर रहा है, जिसके कारण अब लोगों को किसी विशेष परिस्थिति में ही पटना, गया जैसे नगरीय केन्द्रों में जाना पड़ता है।

प्रवास – मानव प्रवास का सामान्य अर्थ होता है, मनुष्यों को बसने के उद्देश्य से एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित होना। यह जनसंख्या परिवर्तन का एक जटिल एवं महत्वपूर्ण तत्व है, जो विचारों एवं सूचनाओं के प्रसार के लिए एक तंत्र का कार्य करता है तथा यह किसी स्थान के लिए सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक,राजनैतिक तथा पर्यावरणीय स्थिति का संकेतक का कार्य भी करता है। मानव प्रवास स्थायी या अस्थायी भी हो सकता है, यह प्रवास करने वालों की आवश्यकता एवं इच्छा पर निर्भर करता है।

प्रवास के प्रकार –

अ. अन्तर्राष्ट्रीय प्रवास – इसके अन्तर्गत वैसे मानव प्रवास को रखा जाता है, जिसमें प्रवासी राष्ट्रीय सीमा को पार करते हैं।

ब. आन्तरिक/राष्ट्रीय प्रवास – जब कोई व्यक्ति राष्ट्रीय सीमा के अंदर एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रवासित होता है तो ऐसे मानव प्रवास को आन्तरिक प्रवास के अन्तर्गत रखा जाता हैं।

आन्तरिक प्रवास को निम्नांकित वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

- ग्रामीण से नगरीय प्रवास, ग्रामीण से ग्रामीण प्रवास, ग्रामीण से ग्रामीण प्रवास

Table - 2. RURAL - URBAN POPULATION: BIHAR (in Lakh)					
Year	**Total population**	**Rutal population**	**Urban population**	**Rural population (in %)**	**Urban population (in%)**
1951	294	275	19	93.53	6.46
1961	348	323	26	92.81	7.46
1971	421	388	33	90.5	9.5
1981	523	472	51	90.25	7.75
1991	645	556	90	86.2	13.95
2001	830	743	87	89.52	10.48
2011	1038	921	117	88.7	11.3

Source: Census of India 2011.

ग्रामीण से नगरीय प्रवास – "ग्रामीण से नगरीय प्रवास" आन्तरिक प्रवास का ही एक रूप है, जिसमें मानव राष्ट्रीय सीमा के अंदर ही किसी ग्रामीण अधिवास से प्रवासित होकर नगरीय केन्द्रों में बसते हैं। इस प्रकार का अधिवासीय परिवर्तन मुख्य रूप से मजदूरों का प्रवास से संबंधित होता है जो प्राथमिक आर्थिक क्रियाकलाप से द्वितीयक या तृतीयक आर्थिक क्रियाकलाप की ओर उन्मुख होते हैं। इसके अलावे रोजगार की तलाश मे या स्वास्थ्य सेवाएँ, शैक्षणिक सुविधाएँ एवं अन्य सुविधाओं की प्राप्ति के लिए भी लोग ग्रामीण क्षेत्रों से उठकर नगरीय केन्द्रों में बसते हैं। किसी भी राष्ट्र की आर्थिक-सामाजिक उत्थान के लिए ग्रामीण से नगरीय प्रवास एक आवश्यक घटक है बशर्ते कि ये प्रवास स्वेच्छापूर्ण एवं संतुलित रूप में होना चाहिए अन्यथा क्षेत्रीय असंतुलन एवं ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूरों की कमी जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है, जिससे कृषि कार्य प्रभावित होता हैं।

भारत में वर्ष 1951 में केवल 17.29 प्रतिशत जनसंख्या ही नगरीय क्षेत्रों में निवास करते थे जो वर्ष 2025 तक अनुमानतः लगभग 42.5 प्रतिशत तक हो जाएगा, जिसका मुख्य कारण यह है कि अधिकांश प्रवासी जीवन निर्वाह के लिए गाँव छोड़ने को मजबूर हैं तो कुछ लोग बेहतर रोजगार की तलाश में या शैक्षिक एवं स्वास्थ्य तथा सामाजिक सुविधाओं की प्राप्ति के लिए भी नगरीय केन्द्रों की ओर अग्रसर हो रहे हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 31.16 प्रतिशत एवं बिहार की कुल जनसंख्या का लगभग 11.30 प्रतिशत लोग नगरों में निवास करते हैं। अध्ययन क्षेत्र बहरामपुर गाँव की बात करें तो यहाँ के लगभग 50-55 व्यक्ति (2.6 प्रतिशत) रोजगार की तलाश में गाँव से बाहर रहते थे जो गैर कृषि कार्य में संलग्न कुल 132 व्यक्ति (6.24 प्रतिशत) का लगभग (41 प्रतिशत) है, जबकि वर्तमान वर्ष 2019 में लगभग 210-215 व्यक्ति (8.52 प्रतिशत) गैर-कृषि कार्य में संलग्न है जिसका लगभग 36 प्रतिशत (77 व्यक्ति) रोजगार की तलाश में देश के विभिन्न शहरों में रहते हैं। जो वर्ष 2011 की तुलना मे कम है। लेकिन रोजगार की तलाश के अलावे अन्य कारणों से गाँव से प्रवासितों की संख्या में वृद्धि हुई है, जिसका मुख्य कारण है, ग्रामीणों की सम्पन्नता एवं बेहतर शिक्षा सुविधा की चाहत।

ग्रामीण से नगरीय प्रवास के कारण – ग्रामीण से नगरीय प्रवास के कई कारण है, जिसमें से कुछ निम्नांकित है –

- ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार की कमी।
- मजदूरों को ग्रामीण क्षेत्रों में कम मजदूरी मिलना।
- आवासीय संतुष्टि की कमी।
- गुणवतापूर्ण शिक्षा या उच्च शिक्षा की चाहत।
- दोस्त एवं परिवार का प्रभाव।
- आय में वृद्धि के लिए।
- सरकारी नौकरी वालों को शहरों में स्थानांतरण।
- प्राकृतिक संसाधनों पर जनसंख्या दबाव।
- सामाजिक झगड़ें।

इत्यादि।

Table - 3. PERCENTAGE OF MIGRANTS INVOLVED IN DIFFERENT OCCUPATIONS: BAHRAMPUR VILLAGE

Occupation	No. of Migrants		No. of Migrants in %	
	2011	2019	2011	2019
Unskilled labour	26	31	22.61	21.98
Private service	15	16	13.91	11.34
Govt. service	8	15	13.04	10.64
Business	6	10	5.21	7.09
Education purpose	15	21	13.04	14.89
For residential satisfaction	45	48	39.13	34.04
Total	**115**	**141**	**100**	**100**

Source: Data collected by Author in 2019.

ग्रामीण से नगरीय प्रवास को नियंत्रित करने में ग्रामीण सेवा केन्द्रों का योगदान - ग्रामीण सेवा केन्द्रों का विकास होने से गाँव में या गाँव के आस-पास में ही विभिन्न प्रकार की नगरीय सुविधाएँ उपलब्ध होने के साथ-साथ विभिन्न प्रकार की व्यवसायों, जैसे-किराना दुकान, होटल, सैलून, टी-स्टॉल, फास्ट-फूड, सिनेटरी दुकान, स्टेशनरी दुकान, कीटनाशक एवं बीज भंडार, हार्डवेयर, मशीनरी कार्य, फर्नीचर, परिवहन कार्य, फल एवं सब्जी दुकान, मेडिकल हॉल, स्वास्थ्य केन्द्र, शैक्षणिक कार्य आदि में रोजगार के अवसर प्राप्त होने के कारण पूर्व के वर्षों की तुलना में वर्तमान में ग्रामीण से नगरीय प्रवास की दर में कमी आयी है, जिसे निम्नांकित शीर्षकों के माध्यम से विस्तृत रूप में समझा जा सकता है।

नगरीय सुविधाओं की उपलब्धता - ग्रामीण सेवा केन्द्रों का विकास होने से ग्रामीण लोगों को अपने गाँव में ही विभिन्न प्रकार की नगरीय सुविधाएँ, जैसे-स्वच्छ पेय नल-जल, सतत् निजली आपूर्ति, परिवहन सुविधा, बाजार, शैक्षणिक केन्द्र, स्वास्थ्य केन्द्र आदि उपलब्ध होने के कारण लोग आवासीय सुविधाओं से सतुष्ट हैं, और अब लोग केवल आवासीय संतुष्टि के लिए गाँव नहीं छोड़ना चाहते हैं तथा वर्तमान में च्न्त। एवं बिहार सरकार की महत्वाकांक्षी "सात निश्चम योजना" का भी ग्रामीण से नगरीय प्रवास नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका देखी जा रही है। क्योंकि "Table-3" से यह स्पष्ट होता है, कि अध्ययन क्षेत्र में वर्ष 2011 की तुलना में वर्ष 2019 में कुल ग्रामीण नगरीय प्रवास में लगभग 23 प्रतिशत की वृद्धि होने बावजुद आवासीय संतुष्टि के लिए हुए ग्रामीण नगरीय प्रवास में केवल लगभग 7 प्रतिशत की ही वृद्धि हुई है।

बाजार की उपलब्धता एवं स्वरोजगार के अवसर - अध्ययन क्षेत्र के आस-पास के क्षेत्रों में यह पाया गया है कि लगभग हर 5-7 Km के दायरे में कम से कम एक ग्रामीण सेवा केन्द्र विभिन्न प्रकार की शहरी सेवाएँ एवं सुविधाएँ सुगमता पूर्वक उपलब्ध करा रही है। ऐसे में संबंधित क्षेत्र के ग्रामीणों को विभिन्न व्यवसायीक कार्यों, जैसे-संचार एवं परिवहन कार्य, अध्यापन कार्य, होटल, हार्डवेयर, स्टेश्नरी, किराना, इलेक्ट्रीक एवं इलेक्ट्रोनिक्स, कपड़ा आदि कई तरह के दुकानों के संचालन में अपने गाँव के पास ही रोजगार के अवसर प्राप्त हुए हैं तथा जो कृषक पहले अपने कृषि उत्पादों, खासकर फल एवं शब्जियों को औने-पौने दाम पर बेचने को मजबूर थे फलतः वे कृषि कार्य छोड़कर महानगरों में पलायन करने को मजबुर थे, उन्हें अब ग्रामीण सेवा केन्द्रों में अपने कृषि उत्पादों का उचित कीमत मिल रहा है। इस प्रकार प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से ग्रामीण सेवा केन्द्र ग्रामीण से नगरीय प्रवास को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। यह इस बात से भी

स्पष्ट होता है कि वर्तमान (वर्ष 2019) में बहरामपुर गाँव के गैर-कृषि कार्य में संलग्न कुल 210-215 व्यक्ति (8.52 प्रतिशत) का केवल 36 प्रतिशत (77 व्यक्ति) हीं रोजगार के उद्देश्य से प्रवासित हैं, जो वर्ष 2011 में गैर-कृषि कार्य में संलग्न कुल 132 व्यक्ति (6.24 प्रतिशत) का लगभग 41 प्रतिशत (50-55 व्यक्ति) रोजगार के नगरीय केन्द्रों में रह रहे थे।

संचार एवं परिवहन सुविधाएँ - सरकार की विभिन्न विकास योजनाओं के सहयोग से लगभग प्रत्येक गाँव पक्की सड़कों के माध्यम से मुख्य सड़कों से जुड़ गया है, जिससे ग्रामीण सेवा केन्द्रों का तेजी से विकास हुआ है। इन ग्रामीण सेवा केन्द्रों से नगरीय केन्द्रों के लिए प्रत्येक दिन सुबह लगभग 7 बजे से शाम 7 बजे तक सुगम, सतत् एवं नियमित परिवहन सुविधाएँ ग्रामीणों के द्वारा ही उपलब्ध कराया जा रहा है, जिससे परिवहन कार्य में ग्रामीणों को रोजगार भी मिल रहा है तथा ग्रामीणों को आपने कृषि उत्पादों को नगरीय केन्द्रों तक पहूँचाना आसान हो गया है एवं कई ऐसे भी लोग हैं, जिन्हें अपने रोजगार के लिए या शैक्षणिक उद्देश्यों से मजबूरन नगरीय केन्द्रों में रहना पड़ रहा था वे लोग अब अपने गाँव में ही रहने लगे है। अर्थात् सुबह मे नगरीय केन्द्र जाकर अपने कार्यों (अध्ययन-अध्यापन कार्य एवं अन्य गैर-कृषि कार्य) को सम्पादन कर शाम को पुनः घर वापस लौट जाते हैं। अध्ययन क्षेत्र बहरामपुर गाँव में ऐसे सैकड़ों व्यक्ति है, जो रोजाना नगरीय केन्द्रों से आना-जाना करते हैं। इस प्रकार ग्रामीण सेवा केन्द्रों का विकास होने से अनावश्यक ग्रामीण से नगरीय प्रवास में कमी आयी है।

गुणवतापूर्ण शिक्षा - लगभग सभी बड़े ग्रामीण सेवा केन्द्रों में सरकारी शैक्षणिक संस्थान के साथ-साथ प्राईवेट शैक्षणिक संस्थान भी उपलब्ध है जो नर्सरी कक्षा से लेकर प्रतियोगीता परीक्षाओं तक की शैक्षणिक सुविधाएँ मुहैया करा रही है। इसके साथ-साथ पक्की सड़कों की उपलब्धता के कारण नगरीय केन्द्र में स्थित बड़े प्राईवेट शैक्षणिक संस्थान भी ग्रामीण सेवा केन्द्रों तक बच्चों को परीवहन सेवाएँ प्रदान करा रही है तथा दर्जनों ऐसे विद्यार्थी भी हैं, जो उच्च शिक्षा की प्राप्ति के लिए नगरों में रहने के बजाय अपने गाँव से रोजाना आना-जाना करते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है ग्रामीण से नगरीय प्रवास को नियंत्रित करने में ग्रामीण सेवा केन्द्रों की महती भूमिका है।

सम्मानजनक दैनिक मजदूरी - ग्रामीण क्षेत्रों में भी खासकर गैर-कृषि कार्यों, जैसे-फर्नीचर एवं लोहा से संबंधित निर्माण कार्य, भवन निर्माण कार्य, रंगाई-पोताई का कार्य आदि में सम्मानजनक दैनिक मजदूरी दिया जा रहा, वही महिलाएँ को भी कृषि मजदूर के रूप में जीवन-निर्वाह भर मजदूरी प्राप्त हो जाता है। इसके साथ-साथ सरकारी योजनाओं के तहत सस्ती दरों पर अनाज मिल जाता है एवं अधिकांश मजदूरों को MGNREGA के तहत 100 दिनों का रोजगार मिल जाता हे। इन सब कारणों से ग्रामीण मजदूर वर्ष के अधिकांश महिना अपने गाँव में ही रहते हैं, हालांकि गाँव में वर्ष भर नियमित रोजगार नहीं मिलने के कारण वे अपनी मौसमी बेरोजगारी को दूर करने के लिए नगरीय केन्द्रों में प्रवासित हो जाते हैं, तथा काम के दिनों में पुनः गाँव लौट आते हैं। रोजगार की खोज में नगरों में प्रवास करने वाले 80 प्रतिशत से अधिक लोग 18-50 वर्ष आयु समूह के पुरूष होते हैं।

घर की उपलब्धता - अध्ययन क्षेत्र में ऐसा देखा गया है जिस परिवारों का अपना पक्का घर नहीं था वे लोग रोजगार की तलाश में सपरिवार नगरों में प्रवास कर जाते थे और पर्व-त्योहार में ही अपने गाँव आते थे, लेकिन सरकारी आवास योजनाओं के तहत पक्का

घर बन जाने के बाद ऐसे अधिकांश परिवारों का केवल जवान पुरूष सदस्य ही रोजगार की तलाश में नगरीय केन्द्रों में प्रवास करते हैं, एवं बाकि सदस्य (बूढ़े, बच्चे एवं महिलाएँ) अपने गाँव में ही खेतिहर मजदूर के रूप में जीवन-यापन करते हैं।

कृषि कार्य - अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण से नगरीय प्रवास को नियंत्रित करने में कृषि का योगदान कोई खास नहीं है, जिसका मुख्य कारण है अनियमित एवं अपर्याप्त वर्षा तथा नदियों में पानी का अभाव, अर्थात् सिंचाई के लिए केवल निजी नलकूपों पर निर्भरता। हालांकि ग्रामीण सेवा केन्द्रों का विकास तथा सरकार द्वारा सस्ती एवं सतत् बिजली आपूर्ति के कारण वैसे ग्रामीण जिनके पास पर्याप्त कृषि योग्य जमीन है, वे लोग नगरीय केन्द्रों में प्रवास करने के बजाय गाँव में रहकर ही खेती-बारी एवं पशुपालन करके गुजर-बसर कर रहे हैं। इसके साथ-साथ समय-समय पर सरकार द्वारा दिया जाने वाला कृषि एवं पशुपालन संबंधित अनुदान किसानों के लिए संजीवनी का काम करता है, जिससे किसान अपने खेती से जुड़े हुए हैं। ग्रामीण सेवा केन्द्रों का विकास होने से किसानों का कृषि कार्य के लिए आवश्यक चीजों को खरीदना एवं कृषि उत्पादों को बाजारों तक पहुँचाना तथा बेचना आसान हो गया है, जिसके कारण अब छोटे किसान भी अपने गाँव में ही रहना बेहतर समझते है। हालांकि भूमिहीन ग्रामीण (खासकर पुरूष लोग) दशकों पहले गाँव में ही कृषि मजदूर के रूप में काम करते थे, अब वे नगरीय केन्द्रों में मौसमी प्रवासी के रूप में कार्य करते हैं या ग्रामीण सेवा केन्द्रों में अन्य गैर-कृषि कार्यो में संलग्न है।

इस प्रकार उपरोक्त तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान मे ंकृषि कार्य कम लाभकारी होने के बावजूद सेवा केन्द्रों का विकास होने से ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की नगरीय सुविधाओं की उपलब्धता एवं रोजगार के अवसर की उपलब्धता के कारण ग्रामीण से नगरीय प्रवास बहुत हद तक नियंत्रण में है।

सुझाव - सरकारी एव गैर सरकारी नौकरी करने वालो के अलावा अधिकांश ग्रामीण (सामान्यतः भूमिहीन) लोग मुख्यतः जीवन निर्वाह के उद्देश्य से एवं कुछ विद्यार्थी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की प्राप्ति के उद्देश्य से नगरीय केन्द्रों में प्रवास करते हैं तथा कुछ लोग अन्य कारणों से कम समय के लिए शहरों में प्रवास करते हैं, जिसे नियंत्रित करने के लिए निम्नांकित कदम उठाया जाना चाहिए -

- ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाओं का प्रबंध कराना (PURA) - PURA के अंतर्गत यदि विभिन्न प्रकार के शहरी सुविधाओं जैसे-स्वच्छ पेय जल, सफाई व्यवस्था, पक्की नाली-गली, सिवेरेज एवं कचरा प्रबंधन, पक्की सड़क, सतत् बिजली आपूर्ति, बाजार, शैक्षणिक केन्द्र, संचार एंव परिवहन के साधन आदि का प्रबंध यदि ग्रामीण क्षेत्रों में कर दी जाये तो इससे ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के नगरीय सुविधाएँ सुगमता से प्राप्त होगें तथा प्रवास नियंत्रित होगा।
- रोजगार सृजन - ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों को कम से कम जीवन निर्वाह करने भर सम्मानजनक मजदूरी के साथ रोजगार का अवसर उपलब्ध कराया जाना चाहिए। इस दिशा में का MGNREGA का महत्वपूर्ण योगदान है।
- कृषि कार्य को लाभकारी बनाना - ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन-यापन के लिए कृषि प्रमुख आर्थिक क्रियाकलाप होता है, लेकिन वर्तमान में मानसून की अनिश्चितता एवं बढ़ते उत्पादन लागत के कारण कृषि कार्य फायदेमंद आर्थिक क्रियाकलाप

नहीं रह गया है। अतः सिंचाई के साधनो का विकास करने के साथ-साथ आधुनिक तकनीकों की सहायता से कृषि कार्य को फायदेमंद बनाने की जरूरत है।

- ग्रामीण सेवा केन्द्रों को आधुनिक सुविधाओं, सेवाओं एवं तकनीकों के साथ विकास किया जाना चाहिए।

इत्यादि।

निष्कर्ष - उपर्युक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण सेवा केन्द्रों का विकास होने के कारण अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण से नगरीय प्रवास वर्तमान में बढ़ने के बावजूद बहुत हद् तक नियंत्रण में हैं, अन्यथा नगरीय प्रवास की संख्या बहुत अधिक हो जाती। अर्थात् निष्कर्ष के तौर पर यह स्पष्ट रूप में कहा जा सकता है, कि ग्रामीण से नगरीय प्रवास को नियंत्रिण करने में ग्रामीण सेवा केन्द्रों का महत्वपूर्ण योगदान है।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

- कुमार, विवेक (2019): बिहार के जहानाबाद जिला में ग्रामीण सेवा केन्द्रों का क्षेत्रीय प्रतिरूप, अप्रकाशित शोध-प्रंबध, पटना विश्वविद्यालय।
- तिवारी, के.एन. (2019): ग्रामीण कृषितर क्षेत्र को बढ़ावा, कुरूक्षेत्र, वर्ष-65, अंक-9, जुलाई 2019, पृष्ठ सं.-09-13
- विवेक कुमार (2018): ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में ग्रामीण सेवा केन्द्रों का योगदानः पटना जिला के धनरूआ प्रखण्ड का एक भौगोलिक अध्ययन, Research Journal of Social & Life Sciences, Vol.-XXVI-I, Dec-2018 Page- 92-101
- Vivek Kumar (2018): Trends of Rural-Urban migration and it's impact on Urban system in North- Bihar, PARISHEELAN, Vol:-XVIII, Dec. 2018, Page No. 85-93.
- Shamshad (2012): Rural to Urban migration: Remedies to control, Golden Research Thoughts, Vol.-2, Issue-4, Oct. 2012, Page No. 01-05.
- Sharma, Arpita (2015): PURA: Rural-Urban Linkage in India, Kurukshetra, Vol. 63, No.4, Feb.2015, page-24-27.
- Vivek Kumar (2018): Changing Scenario of Agricultural development in Bihar: A micro level study of Bahrampur Village of Patna district, International Journal of research (IJR), Vol.-05, Issue-12, April 2018, pp. 806-813
- Lalan Kumar Mahto (2015): Rural-Urban linkage: Empowering Rural Community, Kurukshetra, vol. 63, No.-4, Feb.- 2015, Page.-40-43.

- Barna Ganguli (2014): Rural Employment- A challenging task, Kurukshetra, Vol-62, No-12, Oct. 2014, Page-32-35
- Mohapatra, A. Kumar (2014): Rural-Urban migration in India-A Critical Review, Kurukshetra, Vol-62, 6No.-14, Sept. 2014, Page- 18-21.
- Sinha, V.N.P., Nazim M., Ahmad, P.F. (2013) Bihar: Land people & Economy, Rajesh Publication, New Delhi Gosal, G.S. (1961): Internal migration in India- A Regional analysis, The India Geographical Journal, 36(2): 106.
- District census hand book, Patna- part A& B, 2011.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

जीवन बीमा नियमन ,नियंत्रण कानून एवं शिकायत निवारण

• महेश शर्मा
•• मोनिका सिंघल
••• डी.के सिंघल

सारांश – हमारे देश में जीवन बीमा व्यवसाय के नियमन एवं नियमण करने हेतु कई अधिनियमों को लागू किया गया ताकि बीमा व्यवसाय को सफलता पूर्वक किया जा सके। क्योकि बीमा जोकि व्यावसायिक हानि एवं संभावित व्यक्तिगत हानि से सुरक्षा प्राप्त करने हेतु आवश्यक है अत: बीमा क्षेत्रों से संबधित प्रमुख अधिनियम इस प्रकार है। भारत में जीवन बीमा व्यवसाय का श्रीगणेश वर्ष 1818 से माना जाता है। भारत में वर्ष 1912 में सर्वप्रथम बीमा अधिनियम पारित किया गया। मल्होत्रा समिति के सुधार के लिए सुझावों के आधार पर सम्पूर्ण बीमा क्षेत्र के नियमन व नियन्त्रण हेतु संवैधानिक संस्थान का बीमा नियमन एवं विकास अधिनियम गठन 1999 में किया गया। बीमा व्यवसाय पर अनेक प्रकार के अधिनियम लागू होते है। बीमा संबधित शिकायतों के निवारण हेतु बीमा नियमन एवं विकास प्राधिकरण में एक शिकायत निवारण कक्ष बनाया गया है।

मुख्य शब्द – हानि , जोखिम, नियम , शिकायत , कर

हमारे देश में जीवन बीमा व्यवसाय के नियमन एवं नियमण करने हेतु कई अधिनियमों को लागू किया गया ताकि बीमा व्यवसाय को सफलता पूर्वक किया जा सके। क्योकि बीमा जो कि व्यवसायिक हानि एवं संभावित व्यक्तिगत हानि से सुरक्षा प्राप्त करने हेतु आवश्यक है अत:बीमा क्षेत्रों से संबधित प्रमुख अधिनियम इस प्रकार है।

भारत में जीवन बीमा व्यवसाय का श्री गणेश वर्ष 1818 से माना जाता है, जब इस वर्ष में अंग्रेजो द्वारा कलकत्ता में ओरियण्टल लाइफ इंस्योरेन्स कम्पनी की स्थापना के माध्यम से सर्वप्रथम जीवन बीमा कारोबार की शुरुआत की गई, इसके बाद वर्ष 1823 में बम्बई में बॉम्बे लाइफ इंस्योरेन्स कम्पनी तथा वर्ष 1829 में मद्रास इक्विटेबुल लाइफ इश्ंयोरेन्स सोसायटी की गई तब से लगातार वर्ष 1870 छोटी–बड़ी कम्पनियॉ की स्थापना हुई। 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशक में दो अन्य भारतीय कम्पनियॉ भारत (1896)और एम्पायर (1897) भी की गई। भारत में वर्ष 1912 में सर्वप्रथम बीमा अधिनियम पारित किया गया।

बीमा क्षेत्र से संबधित प्रमुख अधिनियम एवं संस्थाऐं

बीमा अधिनियम 1938 – बीमा अधिनियम 1938 भारत में विविध प्रकार की बीमा संस्थाओं के कार्यकलाप को विनियमित और नियंत्रित करने के उद्देश्य से पारित किया गया, एक महत्वपूर्ण अधिनियम माना जाता हैं। इस अधिनियम के पारित होने के पहले भारत में बीमा व्यवसाय को शासित करने के लिये कोई उपयुक्त कानून नहीं था। सन् 1912

• प्राध्यापक वाणिज्य शासकीय कालीदास कन्या महाविद्यालय उज्जैन
•• शोघार्थी विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन
••• प्राध्यापक. वाणिज्य शासकीय कालीदास कन्या महाविद्यालय उज्जैन

क्रमांक	अधिनियम	वर्ष	प्रमुख उद्देश्य
1.	भारतीय जीवन बीमा अधिनियम	1912	भारत में जीवन बीमा के नियमन हेतु कानूनी व्यवस्थाएं सूनिश्चित करना
2.	बीमा अधिनियम	1938	भारत में बीमा व्यवसाय से संबंधित कानूनी प्रावधानों का निर्धारण करना
.3	भारतीय जीवन बीमा निगम अधिनियम	1956	भारत में जीवन बीमा व्यवसाय का राष्ट्रीयकरण किये जाने हेतु कानुन को पास करना
4	जीवन बीमा व्यवसाय का राष्ट्रीयकरण	1956	जीवन बीमा व्यवसाय को केवल सरकारी क्षेत्र में रखे जाने के प्रावधान सूनिषचित करना सारांश
5	भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड का गठन	1988	प्रतिभूतियों तथा बीमा आदि क्षेत्रों के निवेषकों के हितो की रक्षा करने हेतु संवैधानिक संस्था की व्यवस्था करना
6	आर.एन.मल्होत्रा समिति का गठन	1993	अप्रैल 1993 में गठित इस समिति द्वारा 7 जून. ,1994 को बीमा आदि क्षेत्रों में सुधार के लिए सुझाव प्रस्तुत किए गए
7	बीमा नियमन एवं विकास अधिनियम	1999	मल्होत्रा समिति के सुधार के लिए सुझावों के आधार पर सम्पूर्ण बीमा क्षेत्र के नियमन व नियन्त्रण हेतु संवैधानिक संस्थान का गठन करना

में दो अधिनियम बनाए गये थे –

(1) प्रावीडेन्ट इन्स्योरेन्स सोसायटी अधिनियम 1912

(2) इण्डियन लाइफ इन्स्योरेन्स कम्पनीज अधिनियम 1912

किन्तु ये दोनों ही अधिनियम लोगों का विश्वास अर्जित करने के लिए बीमा व्यवसाय से संबंधित कानूनी खामियों को दूर नहीं कर सके। यद्यपि उक्तकथित 1912 के अधिनियम को पुनः सन् 1928 में भारतीय जीवन बीमा अधिनियम 1928 द्वारा संशोधित किया गया और तत्पश्चात् सन् 1928 में बीमा अधिनियम पारित हुआ, किन्तु वह भी प्रयोगात्मक ही था। जनता यह चाहती थी कि बीमा व्यवसाय पर राज्य का नियंत्रण स्थापित किया जाय। अस्तु तीव्र जनान्दोलन को देखते हुये तत्कालीन भारत सरकार ने बीमा अधिनियम 1938 पारित किया। इसलिए सन् 1938 में पारित बीमा अधिनियम को ही बीमा व्यवसाय संबंधी प्रभावशाली विधान कहा जाता है। इस अधिनियम में सन् 1950 और 1968 में महत्वपूर्ण संशोधन किए गए जिनके फलस्वरूप केन्द्रीय सरकार को जीवन बीमा कम्पनियों के ऊपर अनेक नियंत्रण संबंधी अधिकार प्राप्त हुए।

किन्तु सन् 1956 में जीवन बीमा का राष्ट्रीयकरण हुआ और जीवन बीमा निगम अधिनियम, 1956 लागू हुआ, अतएव बीमा अधिनियम के कतिपय नियमों को छोड़कर शेष नियम जो जीवन बीमा करोबार से संबंधित थे, प्रभावहीन हो गए।

बीमा अधिनियम में सन् 1968 में पुनः महत्वपूर्ण संशोधन करके साधारण बीमा के कारोबार पर सामाजिक नियंत्रण स्थापित करने की व्यवस्था हुई। इसके पश्चात् सन् 1972 में साधारण बीमा का संपूर्ण कारोबार भारतीय साधारण बीमा निगम और उसकी चार सहायक कम्पनियों के अधिकार में आ गया। साधारण बीमा के कारोबार में संलग्न इन सभी कम्पनियों को बीमा अधिनियम 1938 के अनेक नियमों का पालन करना अनिवार्य है।

सन् 1956 में जीवन बीमा व्यवसाय का राष्ट्रीयकरण हुआ और इस क्षेत्र में इस व्यवसाय को करने का एकाधिकार भारतीय जीवन बीमा निगम को प्राप्त था परन्तु विगत दशक में वित्त व्यवस्था में उदारीकरण की नीति अपनाई गई और बीमा व्यवसाय में प्राइवेट सेक्टर का प्रवेश आवश्यक पाया गया। अतः जीवन बीमा व्यवसाय में भारतीय जीवन बीमा

निगम को प्राप्त यह एकाधिकार अप्रैल 2000 में समाप्त हो गया।

"बीमा नियामक और विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1999" के बन जाने के बाद बीमा अधिनियम, 1938 में काफी संशोधन किये गये हैं जिनके द्वारा कुछ उपबन्धों को अंतर्विष्ट, प्रतिस्थापित तथा लोप कर दिया गया है। देश के बीमा उपभोक्ताओं के हित में बीमा सेवाओं की मात्रा तथा गुणवत्ता में वृद्धि के दृष्टिकोण से भारत सरकार ने बीमा व्यवसाय का उदारीकरण का फैसला किया जिसके आधार पर बीमा नियामक और विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1999 बनाया गया है। इस अधिनियम के बनने से जीवन बीमा निगम तथा साधारण बीमा निगम का बीमा क्षेत्र से एकाधिकार समाप्त हो गया है। बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1999 का वर्णन करने से पहले यह जानना आवश्यक कि इस अधिनियम के बनने के पीछे क्या परिस्थितियां थी और इसके बनने का क्या औचित्य था।

बीमा व्यवसाय का निजीकरण करने के संबंध में राय जानने के लिये भारत सरकार द्वारा अप्रैल 1993 में रिजर्व बैंक के पूर्व गर्वनर आर.एन.मल्होत्रा की अध्यक्षता में एक कमेटी गठित की गयी थी उसकी संस्तुतियां मुख्यत: देश के बीमा उपभोक्ताओं के हित में बीमा सेवाओं की मात्रा तथा गुणवत्ता में वृद्धि के दृष्टिकोण से प्रस्तुत की गयी थी। समिति का मानना था, कि यद्यपि राष्ट्रीयकरण के बाद से बीमा क्षेत्र का काफी विकास हुआ है परन्तु कई कारणों से बीमा उद्योग को निजी कम्पनियों के लिये खोला जाना ही उचित समझा गया। "मल्होत्रा कमेटी" की संस्तुतियों के आधार पर "बीमा नियामक और विकास प्राधिकरण अधिनियम, 1999" बनाया गया। इस अधिनियम के अंतर्गत एक बीमा नियामक प्राधिकरण की स्थापना की गयी, जिसका मुख्य कार्य बीमाधारक के हित की सुरक्षा करना, बीमा कारोबार को विनियमित करना, प्रोन्नत करना और उसकी सुव्यवस्थित वृद्धि करना और उससे सम्बंधित या अनुषांगिक मामलों को देखना हैं। इसके अतिरिक्त बीमा अधिनियम 1938 जीवन बीमा निगम अधिनियम, 1956 और साधारण बीमा व्यवसाय (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम 1972 में संशोधन किए गए हैं। यह अधिनियम अप्रैल 2000 से प्रभावी हो गया हैं।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 – आज उपभोक्ता सावधान के स्थान पर उपभोक्ता के प्रभुत्व ने स्थान ले लिया हैं परंतु व्यवहार में देखे तो उपभोक्ता आज भी उत्पादकों के शोषण का शिकार हैं। आज भी उपभोक्ता मिलावट कम मापतौल, घटिया वस्तु, भ्रामक विज्ञापन आदि का शिकार हैं। अत: आवश्यकता हैं कि उपभोक्ताओं को इन शोषणों से बचाया जाये। इसके लिए सरकार व सामाजिक संठनों का उत्तरदायित्व सर्वाधिक है। सरकार एवं संगठनो द्वारा उपभोक्ता को इन बुराईयों या शोषणों से बचाने के जो वैधानिक व सामाजिक उपाय किये गये है, वास्तव में वह उपभोक्ता संरक्षण कहा जा सकता है। आज मांग में तेजी से वृद्धि, एकाधिकारी प्रवृत्तियों का विकास, विज्ञापन आदि के कारण बाजार में जो कुछ भी पेश किया जा रहा है उसे हम स्वीकार करने के लिए बाध्य है अत: आवश्यकता है कि व्यवसाय को अधिक उत्तरदायी बनाया जाये तथा उपभोक्ता के अधिकारों की सुरक्षा की जाये। यह अधिनियम जम्मू एवं कश्मीर को छोड़कर संपूर्ण भारत में सभी वस्तुओं तथा सेवाओं पर लागू होता हैं। इस अधिनियम को राष्ट्रपति की स्वीकृति 24 दिसम्बर 1986 को दी गई लेकिन अधिनियम 15.04.1987 को लागू हुआ। यद्यपि उपभोक्ता निदान संस्थाओं का

विषय 01.07.1987 को ही लागू हो पाया। इस मामले में एक प्रश्न उठा कि क्या मृतक पॉलिसी धारक की विधवा को इस अधिनियम के अंतर्गत उपभोक्ता माना जाए। आन्ध्रप्रदेश राज्य आयोग ने उसे उपभोक्ता माना क्योंकि उपभोक्ता शब्द में शामिल हैं उस व्यक्ति के अतिरिक्त सेवा का कोई उपयोगकर्ता जिसने प्रतिफल के लिए उस सेवा को किराये पर लिया हैं और इस प्रकार विधवा सेवा की उपयोगकर्ता होने के कारण 'उपभोक्ता' हैं जो एल. आई.सी. की भूल के कारण उसको हुई हानि के लिए क्षतिपूर्ति पाने की पूरी अधिकारी है।

सेवा– अधिनियम की धारा 2(1)(ओ) के अनुसार सेवा का अर्थ है, किसी विवरण की सेवा जो सम्भावित उपयोगकर्ताओं को उपलब्ध की जाती हैं सेवा के अंतर्गत बैंकिग, वित्त प्रबंधन, बीमा, परिवहन विद्युत या अन्य ऊर्जा की सप्लाई खाना अथवा ठहरना या दोनों, आवास निर्माण, मनोंरजन आदि शामिल है। उस मामले में अनेक विवाद न्यायालयों के समक्ष आये हैं तथा निरन्तर आते रहते हैं जिनमें कुछ निम्नानुसार हैं –

जीवन बीमा निगम द्वारा बार–बार मांगे जाने पर भी पॉलिसी धारक को बोनस, समर्पण मूल्य तथा विशेष समर्पण मूल्य आदि की सूचनाएँ न देना Deficieny in Service मानी जाएगी। (चेयरमैन जीवन बीमा निगम बनाम अखिल भारतीय ग्राहक पंचायत I.F. A.No. 41/1990 निर्मित 09.10.1990)

डिविजनल मैनेजर, भारतीय जीवन बीमा निगम बनाम भावनाम श्रीनिवास रेड्डी (F.A. No 79/1990 निर्णय 5-06-1991) के मामले में राष्ट्रीय आयोग ने पाया कि किसी बीमा दावे के निपटान के बारे में भूल अथवा लापरवाही (महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाने का आरोप लगाकर) बीमा कम्पनी की आरे से deficiency in service हैं तथा पीड़ित पक्षकार को न्याय का द्वारा खटखटाने का पूरा अधिकार हैं। बीमा नियमन एवं विकास अधिनियम (Insurance Regulatory & Devlopment Act&IRDA) एवं उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 तथा अन्य अधिनियमों के नियम के परिपालन करने पर निम्नानुसार शिकायतें विभिन्न जीवन बीमा कम्पनियों को प्राप्त हुई एवं उनका निराकरण हेतु कार्यवाही की गई।बीमा संबधित शिकायतों के निवारण हेतु बीमा नियमन एवं विकास प्राधिकरण में एक शिकायत निवारण कक्ष बनाया गया है, जो उपभोक्ता से प्राप्त शिकायतों /परिवादों की जॉच करता है । यह कक्ष निवारण के लिए संबधित बीमाकर्ताओं के साथ शिकायतों को उठाता है ।

आयकर अधिनियम – 1857 की क्रांति के परिणाम स्वरुप घाटे की पूर्ति के लिए अंग्रेज सरकार द्वारा दण्डात्मक रुप से लगाया गया आयकर आज भारतीय राजस्व का एक अनिवार्य एवं सर्वाधिक, महत्वपूर्ण अंग बन गया है। आयकर अधिनियम 1961 संपूर्ण भारत (जम्मू कश्मीर सहित) में 1 अप्रैल 1962 से लागू हुआ। सिक्किम में यह 1.4.1990 से लागू हुआ। आयकर अधिनियम में बीमा संबंधी प्रावधान निम्नानुसार है –

जीवन बीमा प्रीमियम के भुगतान के लिए आय से कटौती (धारा 80 सी) – अपने अथवा अपने जीवन साथी अथवा अपने बच्चों (वयस्क या अवयस्क, आश्रित या अनाश्रित, विवाहित या अविवाहित) के जीवन पर कराए गए बीमें का प्रीमियम। हिन्दू अविभाजित परिवार की दशा में सदस्यों की जीवन बीमा प्रीमियम। यदि पॉलिसी 1 अप्रैल 2012 पूर्व ली गयी हो तो पॉलिसी की राशि के 20 प्रतिशत से अधिक प्रीमियम कटौती योग्य नही होगी। वर्ष

2019-20 में ली गयी पॉलिसी की दशा में बीमित राशि के 10 प्रतिशत राशि ही कटौती योग्य होगी। यदि पॉलिसी 1 अप्रैल 2019 के पश्चात् जारी की गई हो, तथा ऐसे व्यक्ति के जीवन पर जारी की गई हो जो –

1) धारा 80 U में वर्णित अपंग या गंभीर अपंगता से पीड़ित हो।

2) धारा 80 DDB के अंतर्गत बनाए नियमों में निर्दिष्ट बीमारी या रोग से पीड़ित हो, इस धारा में मान्य कटौती वास्तविक पूंजीगत बीमा राशि के 15 प्रतिशत तक की सीमा तक ही है।

जीवन बीमाकर्ताओं के साथ शिकायतों की स्थिति (2017-18 एवं 2018-19)

Insurer	2017.18			2018.19		
	वर्ष के प्राराम्भ में	वर्ष के दौरान प्रात्त	वर्ष के दौरान हल की गई	वर्ष के प्राराम्भ में	वर्ष के दौरान प्रात्त	वर्ष के दौरान हल की गई
बिरला सन लाइफ क.	10	6793	6786	17	2963	2978
एजोन रैलीगेयर लाइफ इंश्योरेन्स	0	1764	1764	0	1049	1049
एविवा लाइफ इंश्योरेन्स कम्पनी	0	2282	2282	0	2076	2076
बजाज एलाइन्ज	0	3439	3421	18	2269	2285
भारती ए,एक्स,ए,	8	4148	4156	0	6360	6360
केनरा एच.एस.बी.सी	0	665	663	2	717	716
डी.एल.एफ.प्रमेरिका	1	1592	1589	4	972	976
एडेलवेसिस टोकियो	0	329	329	0	441	441
एक्साइड लाइफ	0	4201	4201	0	3470	3470
फ्यूचर जेनेरली इन्डिया	15	4447	4462	0	4132	4132
एच.डी.एफ.सी.स्टेन्डर्ड	10	7257	7256	11	6026	6035
आई.सी. आई.सी. आई.प्रोडेंशल	3	7700	7701	2	6393	6393
आई.डी बी आई फेडरल	0	742	742	0	788	788
इंडिया फर्स्ट	19	3219	3201	37	3080	3097
कोटक महिन्द्रा ओल्ड म्यूच. लाइफ	105	3400	3480	25	926	940
मेक्स न्युयार्क लाइफ	0	5544	5544	0	4038	4038
पी.एन.बी.मेट	70	4228	4226	72	3558	3591
रिलायन्स लाइफ	0	1615	1614	1	2052	2053
सहारा इण्डिया लाइफ	3	82	74	11	110	120
एस.बी.आई लाइफ	2	7640	7642	0	4649	4649
श्री राम लाइफ इंश्योरेन्स क.	1	406	406	1	577	576
स्टार यूनियन लाइफ	0	2556	2556	0	2045	2045
टाटा ए.आई.जी इंश्योरेन्स	0	3134	3134	0	2446	2446
निजी कम्पनी की षिकायतोंका योग	247	77183	77229	201	61137	61254
लाइफ इंश्योरेन्स कार्पोरेशन	0	77184	77184	0	102127	102127
महायोग	247	154367	154413	201	163264	163381

स्त्रोत – बीमा नियमन एवं विकास अभिकरण वार्षिक रिपोर्ट 2018-19

जीवन बीमा निगम आदि के पेंशन फण्ड में अंशदान के संबंध में कटौती (धारा 80 CCC) – जब कोई व्यक्ति करदाता भारतीय जीवन बीमा निगम या अन्य मान्य बीमाकर्त्ता की वार्षिकी योजना में पेन्शन प्राप्त करने के लिए कोई अंशदान देता है, तो उसे सकल कुल आय में से ऐसे अंशदान की कटौती निम्न शर्तो के अधीन प्राप्त होगी–

1) अंशदान की राशि या अधिकतम 1,00,000 रु प्रतिवर्ष, जो कम हो उसकी कटौती प्राप्त होगी। जीवन एवं चिकित्सा बीमा पॉलिसी में चुकायी प्रीमियम पर धारा 80 सी एवं धारा 80 डी की छूट मिलती है।

माल एवं सेवा कर अधिनियम– 01 जुलाई 2017 को "एक देश , एक कर, एक बाजार" की धारणा के साथ सम्पूर्ण देश में माल एवं सेवा कर अमल में आया। इसमें सेवाओं की पूर्ति पर कर लगाया गया। इसमें सेवा की परिभाषा माल एवं सेवा कर की धारा 2 (102) में इस प्रकार दी है–" सेवाओं से आण्य माल,मुद्रा और प्रतिभूतियों से भिन्न कोई वस्तु से है

जिसके लिए पृथक प्रतिफल प्रभारित किया गया है। इसमें धन का उपयोग या नकद या किसी अन्य रीति से एक करेंसी या अंकित मूल्य का किसी अन्य रुप,करेंसी या अंकित मूल्य में उसका ऐसा परिवर्तन जिसके लिए पृथक,प्रभारित हो सम्मिलित से सम्बन्धित क्रिया कलाप हैं।" माल एवं सेवा कर जीवन बीमा पर 25 प्रतिशत लागू किया गया है। पारंपरिक एंडोमेंट इन्स्यारेंस पर प्रथम वर्ष 25 प्रतिशत एवं अगले वर्ष से कर 12.5 प्रतिशत कर लगाया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. बीमा विनियामक एवं विकास प्राधिकरण की वार्षिक रिपोर्ट वर्ष 2018.–19
2. बीमा के मूलतत्व–डॉ.आर.एल.नौलखा ,रमेश बुक डिपो जयपुर
3. आयकर डॉ.एच.सी मेहरोत्रा साहित्य भवन आगरा
4. माल एवं सेवा कर डॉ.श्रीपाल सकलेचा सतीश प्रिंटर्स इन्दौर
5. प्रतियोगिता दर्पण
6. A Narasamma Vs LIC of India
7. The Financial Express Tuesday Dec 14, 2010
8. Economic Times, Sept. 21, 2008.
9. Financial Chronicle, 20-Aug-2009
10. The Hindu Business line. Hopes on hike in FDI Dec,2008
11. Business line The Hindu group of publications Saturday
12. life insurance Websites
13. Report of Census 2011

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

आत्मनिर्भर भारत अभियान में एम.एस.एम.ई. का योगदान

● कुमुद श्रीवास्तव

सारांश – कोविड-19 से उपजे आर्थिक संकट से उबारने के लिए आत्म निर्भर भारत अभियान की घोषणा की गई, अभियान के चार पिलर इकोनॉमी, अधोसंरचना, सिस्टम, डेमोक्रेसी एवं डिमांड पर बल दिया गया है। आत्म निर्भर भारत अभियान में उद्योगों, किसानों, निजी क्षेत्र के लिए कोयला खनिज और अंतरिक्ष क्षेत्र को खोलने हेतु पैकेज की घोषणा की गई। एम.एस.एम.ई. क्षेत्र में कर्ज के लिए क्रेडिट गारंटी फंड एवं नकदी सहयोग के लिए महाकोष गठित किया गया।

मुख्य शब्द – आर्थिक संकट, अधोसंरचना, निजी क्षेत्र

प्रस्तावना – विश्व में कोरोना की वजह से उपजी जीवन रक्षा की समस्या के बीच, विश्व स्वास्थ्य के साथ-साथ आर्थिक, सामाजिक विभिन्न प्रकार की समस्याओं से लड़ रहा है। ऐसी स्थिति में भारत जैसे विकासशील देशों के सामने कई चुनौती आकर खड़ी है। भारत में कोविड-19 के कारण 24 मार्च 2020 से संपूर्ण प्रथम लॉकडाउन की घोषणा भारत के प्रधानमंत्री के द्वारा की गई। जिसे परिस्थिति के अनुसार आगे भी बढ़ाया गया। यह लॉक डाउन कुछ छूटों के साथ 31 मई 2020 तक क्रियाशील रहा। कोविड 19 के कारण लॉकडाऊन की अवधि अति आवश्यक सेवाओं के अतिरिक्त सभी उत्पादन कार्य एवं व्यापार बंद होने के कारण देश के सूक्ष्म,लघु और मध्यम उपक्रम(MSME SECTOR) पर बहुत खराब प्रभाव पड़ा। इन उपक्रमों के काम करने वालों के रोजगार प्रभावित हुए।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध लेख में शोध का अध्ययन क्षेत्र भारत वर्ष को बनाया गया है तथा प्रस्तुत शोध की समयावधि कोराना काल लिया गया है। शोध लेख हेतु द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन का मुख्य उद्देश्य – इस शोध पत्र के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार है :-

- सरकार के द्वारा मुख्य रूप से कौन-कौन सी घोषणाएँ की गई है।
- सरकार के द्वारा एम.एस.एम.ई के लिए क्या पैकेज प्रदान किया गया है।
- देश के अंदर जब पहले से इक्विटी/ वेन्चर है तो अतिरिक्त फण्ड की आवश्यकता क्यों पड़ी है।
- इन उपायों से कितने उद्यमों को लाभ होगा तथा ये किस सीमा में संचालित होंगे।
- इस फण्ड के संबंध में पूर्व के अनुभव क्या है।
- पूर्व के अनुभव के आधार पर कमियों को दूर करने के क्या उपाय हैं।

शासन द्वारा की गई घोषणाएँ– लॉकडाउन के बीच में 12 मई 2020 से कोरोना से उपजे आर्थिक संकट से देश को उबारने के लिए आत्मनिर्भर भारत अभियान के अंतर्गत 20 लाख लाख करोड़ के पैकेज की घोषणा की, जिसका विस्तृत ब्यौरा देश की वित्त मंत्री द्वारा प्रस्तुत

● प्राध्यापक, अर्थशास्त्र , शासकीय तिलक महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)

किया गया। आत्मनिर्भर भारत के प्रधानमंत्री ने पाँच पिलर्स बताये -

01. ऐसी इकोनॉमी जो इन्क्रीमेन्अल चेंज नहीं, बल्कि क्वांटम जम्प जाए।
02. अधोसंरचना, ऐसी संरचना जो आधुनिक भारत की पहचान बने।
03. सिस्टम, ऐसा सिस्टम जो 21 शताब्दी की टेक्नोलॉजी ड्रिवन व्यवस्था पर हो।
04. डेमोग्राफी,हमारी डेमोग्राफी आत्मनिर्भर भारत के लिए हमारी उर्जा का स्त्रोत है।
05. डिमांड, इस चक्र और इसकी ताकत का इस्तेमाल किये जाने की आवश्यकता है।

आत्मनिर्भर भारत अभियान के तहत इस पैकेज में भूमि, श्रमिक, तरलता (नगद) और कानून सभी पर बल दिया गया। प्रस्तुत शोध में आत्म निर्भर भारत अभियान के विभिन्न चरणों में से एक चरण का विश्लेषण प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत लेख में सूचनाएँ, आंकड़े, द्वितीयक समंक का उपयोग किया है। प्रधानमंत्री मोदी की प्रमुख घोषणा के बाद वित्र मंत्री के द्वारा 04 चरणों में पैकेज का विवरण प्रस्तुत किया -

प्रथम चरण - छोटे उद्योगों के लिए पैकेज
द्वितीय चरण - किसानों के लिए आपात फंड
तृतीय चरण - दूसरे राज्यों में भी जाकर फसल बेच सकेंगे
चतुर्थ चरण - निजी क्षेत्र के लिए खोला कोयला, खनिज और अंतरिक्ष क्षेत्र

एम.एस.एम.ई. क्षेत्र में की गई घोषणाएँ - उपरोक्त चरणों में से मैंने प्रथम चरण के अंतर्गत हमारे सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग, एम.एस.एम.ई. के लिए घोषित पैकेज का विश्लेषण प्रस्तुत किया है। प्रथम चरण अर्थात एम.एस.एम.ई. क्षेत्र का विश्लेषण चार बिंदुओं के द्वारा प्रस्तुत कर रही हूं।

(1) एम.एस.एम.ई. क्षेत्र में दुबारा जान फूंकने के लिये किये गये उपाय।
(2) पैकेज की प्रमुख बातें जिसमें लोगों को मदद मिलेगी।
(3) एम.एस.एम.ई. क्षेत्र में किये गये पूर्व कार्य का विश्लेषण।
(4) एम.एस.एम.ई. को शीघ्र सफल बनाने हेतु उपाय।

भारत की केन्द्रीय मंत्री निर्मला सीतारमण ने पिछले दिनों एम.एस.एम.ई. क्षेत्र में दुबारा जान फूंकने के लिए उपायों की घोषणा की है। उनके दो उपाय मुख्य हैं -

- प्रथम कर्ज के लिए बनाया जाने वाला 'क्रेडिट गारंटी फंड'
- द्वितीय नकदी सहयोग के लिए बनाया जाने वाला 'फंडों का फंड' अर्थात महाकोष

घोषणा में यह बताया गया है कि 10,000 करोड़ रूपये का महाकोष गठित किया जायेगा। एम.एस.एम.ई. का 50,000 करोड़ का नकद पूंजी सृजित करने में काम आयेगा। महाकोष के माध्यम से एम.एस.एम.ई. क्षेत्र 50,000करोड़ का नकदीकरण एक फण्ड (कोष) और कुछ अनुषंगी (फंड्स) कोषों के माध्यम से परिचालित किया जायेगा। इससे एम.एस.एम.ई. क्षेत्र के आकार व क्षमता बढ़ाने में मदद मिलेगी। इस महाकोष की क्या बातें है जिससे लोगों को मदद मिलेगी।

अतिरिक्त फण्ड की आवश्यकता क्यों पड़ी - देश के भीतर जब पहले से इक्विटी/ वेन्चर फण्ड मौजूद है तो इसके अतिरिक्त फण्ड (कोष) की आवश्यकता क्यों पड़ी। पूर्व से उपस्थित इक्विटी/वेन्चर फण्ड पाने के लिए बहुत सारी छानबीन के कारण प्राप्त करने में समस्या होती है। साधारणत: ये फण्ड कुछ ही नवाचार प्रौद्योगिकी केन्दित व उच्च वृद्धि की संभावना वाले उद्यमों को ही पैसा देते हैं। अधिकांश एम.एस.एम.ई. इस श्रेणी में नहीं आते।

इसलिए एक नये महाकोष की आवश्यकता पड़ी जो उद्यमों का आकार विस्तृत कर अधिकांश उद्योगों को लाभ पहुँचा सके।[2]

10,000 करोड़ रूपये गुणात्मक रूप से बढ़कर 50,000 करोड़ रूपये कैसे हो जायेगा। इस फण्ड से जो दूसरे फण्ड निकलेंगे, उनमें भारी संख्या में फण्ड निजी इक्विटी वेन्चर, बीमा और अन्य किस्म के फण्ड हस्सेदारी करेंगे। कुल मिलाकर यह सब 50,000 करोड़ रूपये का होगा। 10,000 करोड़ रूपयों की प्रारंभिक राशि मुख्य फण्ड या कोष में जमा कर दी जायेगी। जिसका प्रबंधन किसी वित्तीय संस्थान के पास होगा। यह संस्थान अन्य फण्ड्स की पहचान कर उनके साथ गठजोड़ करेगा। फिर छोटी-छोटी किस्तें मुख्यकोष और अन्य फण्ड्स से जारी की जायेगी। इसी तरह के कई अनुषंगी कोषों में मुख्य फण्ड और अन्य बेन्चर फण्ड्स से आने वाला एक योगदान एक चौथाई के अनुपात में होगा। जिससे सम्मिलित फण्ड्स मिलकर 50,000 करोड़ का हो जाये। जैसे यदि 500 करोड़ रूपये का एक अनुषंगी फण्ड बनाना है तो उसमें 100 करोड़ मूल मुख्य कोष से आयेगा, बाकी 400 करोड़ उसमें शामिल अन्य निजी वेन्चर फण्डों से। इस प्रकार जो पूंजी बनेगी, उससे एम.एस.एम.ई. को नकद राशि मिलेगी। छोटे-छोटे अनुषंगी फण्ड्स की संख्या कई होगी। जिसका सम्मिलित आकार भी अलग होगा तथा यह 50,000 करोड़ की पूंजी का सृजन करेगा। यही नकद एम.एस.एम.ई. के काम आयेगा। अनुषंगी फण्ड्स का प्रबंधन इसमें योगदान देने वाली इकाईयां करेगी।

फण्ड किस सीमा में क्रियाशील एवं कितने उद्योगों को लाभ होगा – यह फण्ड किस समय सीमा में संचालित होगा। यह समय सीमा सरकार के साथ-साथ अन्य हितधारकों के काम करने की गति एवं गंभीरता पर निर्भर करेगा। वर्तमान में आवश्यकता इस बात की है कि ऐसी संस्था को अंतिम रूप दिया जाये, जो 10,000 रूपये के सम्मिलित फण्ड का प्रबंधन करेगी। प्रबंधन हेतु एक समर्पित टीम लगानी होगी जो निजी फंड्स के साथ बिना देरी किये काम शुरू करे। निजी फंड्स के साथ पैसा एकत्र करना व शर्तें तय करना एक जटिल व समय लेने वाली प्रक्रिया है। इन उपायों से कितने उद्यमों को लाभ मिलेगा। सम्मिलित फंड मानको नकदी पूंजी लाभ के लिए योग्य उद्यमों की संख्या पर निर्भर करता है। एम.एस.एम.ई. मंत्रालय ने 25 लाख उद्यमों का अनुमान लगाया है।

एम.एस.एम.ई. के पूर्व अनुभव – पूर्व के अनुभव कैसे थे, पूर्व अनुभव के अनुसार यह फण्ड घोषित उद्देशय से पीछे रह गया है। एम.एस.एम.ई. के संबंध में वर्तमान सरकार द्वारा किये गये कार्य को यदि देखा जाय तो यह स्पष्ट है कि जुलाई 2014 में स्टार्ट अप उद्यमों के लिए एक समान फण्ड की घोषणा की गई थी, जिसमें एम.एस.एम.ई. क्षेत्र में उद्यमी पूंजी के लिए एक अनुकूल परिस्थिति तैयार करने के लिए 10,000 करोड़ का फण्ड की स्थापना का प्रावधान है। जो स्टार्ट अप कंपनियों का कम शर्त वाले कर्ज, नकदी और अन्य जोखिम पूंजी सरकार करवा के निजी पूंजी को आकर्षित करने में उत्प्रेरक का काम करेगा। साथ ही यह भी आशा की गई थी कि इस फण्ड के उपयोग से 60000 करोड़ रूपये का नकद निवेश व इसका दोगुना ऋण निवेश सृजित किया जा सकेगा। इस दस हजार करोड़ को सिडबी में जमा करवाया गया और इसके प्रबंधन की जिम्मेदारी भी सिडबी को दे दी गई। लेकिन सिडबी के कार्यो के प्रति निजी वेन्चर फण्डों की प्रतिक्रिया उत्साहवर्धक नहीं थी। जिसके कारण निजी योगदान कमजोर पड़ गया। अनुमान यह था कि फंड्स के फंड के अंतर्गत वैकल्पिक निवेश

फंड कम से कम दो गुना योगदान देंगे। 31 मार्च 2020 तक इस फण्ड में कुल 3798 करोड़ की राशि 53 वैकल्पिक निवेश फंड्स द्वारा आई। जिसमें से 3582 करोड़ रूपये की राशि 338 स्टार्टअप में लगाये गये। इस तरह यह फण्ड अपने घोषित उद्देश्यों से काफी पीछे रह गया। पूर्व अनुभव के आधार पर वर्तमान में घोषित पैकेज की सफलता हेतु उपाय–

1. केन्द्र सरकार को यह सुनिश्चित करना होगा कि कम से कम समय में 50000 करोड़ रूपये से ज्यादा की राशि का सृजन हो सके।
2. वित्तीय रूप से मजबूत एवं पेशेवर रूप से संचालित संस्थान को इस कार्य में लगाना होगा।
3. एस.बी.आई. तुलनात्मक रूप से सरकारी क्षेत्र में सार्वजनिक पेशेवर बैंक है तथा इसकी भारत में पहुँच ज्यादा है।
4. एस.बी.आई. अपने संसाधनों से नकदी का एक हिस्सा निवेश कर सकता है।
5. एस.बी.आई. के स्वयं के इक्विटी फण्ड योजना और म्यूचअल फंड चलाने का अनुभव भी है।

भारत सरकार के द्वारा देशवासियों को कोविड–19 के कारण हो रही समस्याओं को दूर करने के लिए पहले से ही गरीब कल्याण, जन–धन योजना, किसान सम्मान योजना के द्वारा सहायता प्रदान की जा रही है। उसके साथ साथ एम.एस.एम.ई. क्षेत्र के लिए पैकेज की घोषणा करके सरकार ने इस बात का परिचय दिया कि देश के अंदर ही किस प्रकार से वर्तमान से भविष्य की ओर बढ़ा जाय जिससे इस क्षेत्र में रोजगार बढ़ाकर लोगों की मांग बढ़ाकर आत्मनिर्भर भारत का निर्माण किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1.Govt. of India launch of the initiative, Aatmanirbhar Bharat Abhiyan, New Delhi,12 may 2020

2- Ministry of Finance economic survey 2016-17.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना का ग्रामीण विकास में योगदान

• सिद्धार्थ मिश्र
•• विनोद शंकर सिंह

सारांश –सड़कें किसी भी विकास योजना का महत्वपूर्ण अंग है ग्रामीण सड़कें कुल सड़क सम्पर्क में तृतीयक सड़क प्रणाली है जो कुल ग्रामीण जनसंख्या को बाजार और अन्य सुविधा केन्द्रो से जोड़ती है। भारत में ग्रामीण सड़कों को समस्त ग्रामीण विकास के पक्ष में योजनाबद्ध और क्रमादेशित किया जा रहा है और कुछ उपलब्धियों के साथ सभी मौसम संयोजकता प्रदान करने का प्रयास किया गया है सड़कों के विकास के लिए निधियों का निवेश ग्रामीण सड़कों के लिए नीतिगत दिशा–निर्देश और प्राथमिकताऐं प्रदान करता है साथ ही साथ भारत सरकार ने 'मेरी सड़क' नामक एक ''सरकारी एप'' भी बनाया है इस ऐप के द्वारा सीधे प्रधानमंत्री से गॉवों में सड़क नबनाये जाने या फिर किसी कारण खराब हुई सड़क की मरम्मत की शिकायत की जा सकती है।

मुख्य शब्द - **तृतीयक, क्रमादेशित, मौसम संयोजकता, सरकारी ऐप**

ग्रामीण सड़क संपर्क,आर्थिक और सामाजिक सेवाओं तक जन सामान्य की पहुँच का संवर्धन करते हुए भारत में कृषि आय और उत्पादक रोजगाार अवसरों का अधिक मात्रा में सृजन करते हुए ग्रामीण विकास का न केवल एक मुख्य घटक है वरन स्थाई रूप से गरीबी निवारण कार्यक्रम का भी एक मुख्य भाग हैं। स्वतन्त्रता के बाद विभिन्न कार्यक्रमों के जरिए राज्य और केन्द्र स्तरों पर किए गए प्रयासों के बावजूद देश में अभी भी अधिकांश बसावटें (बस्तियाँ) बारहमासी सड़कों से नहीं जुड़ पाई हैं। साथ ही यह सर्वविदित हैं कि जहाँ पर सड़क संपर्क मुहैया भी कराया गया है वहाँ भी निर्मित सड़कों की हालत (खराब निर्माण अथवा रखरखाव की वजह से) ऐसी नहीं हैं कि उन्हें बारहभासी सड़कों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकें।[1] शत प्रतिशत केन्द्र द्वारा प्रायोजित प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना 25 दिसम्बर 2000 को शुरू की गई। इस योजना का प्रमुख उद्द्देश्य ग्रामीण इलाकों में 500 या इससे अधिक आबादी वाले (पहाड़ी और रेगिस्तानी क्षेत्रों में 250 लोगों की आबादी वाले गॉव) सड़क संपर्क से वंचित गांवों को बारहमासी सड़कों से जोड़ना है।[2]

निम्न स्तर की ग्रामीण जीवन दशा के लिए खराब सड़कें और यातायात नेटवर्क भी एक बड़ी वजह है अच्छे सड़क नेटवर्क और आर्थिक विकास के बीच गहरा नाता है। प्रभावी यातायात लोगो की आय और कल्याण स्तर में कई तरीके से इजाफा करता है– कृषि उत्पादो की मार्केटिंग और वितरण, लोगो और संसाधनों के सुचारु आवागमन में इनका महती योगदान तो होता ही है, साथ ही साथ शिक्षा, स्वास्थ्य एवं वित्तीय सेवाओ की पहॅुच को भी

● शोध छात्र (समाजकार्य), मानविकी एवं सामाजिक विज्ञाान विभाग,म.गॉ.चि.ग्रा.वि.वि. चित्रकूट सतना (म.प्र.)
●● एसोसिएट प्रोफेसर (समाजकार्य), मानविकी एवं सामाजिक विज्ञाान विभाग, म.गॉ.चि.ग्रा.वि.वि. चित्रकूट, सतना (म.प्र.)

सुलभ बनाते है, ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक रुप से आधार भूत संरचना निर्माण कार्यो में भी रोजगार के नये अवसर सृजित हुए है। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, जलापूर्ति, विद्युतीकरण, दूरसंचार क्षेत्रों में कार्यो के बढ़ने से रोजगार आय में बढ़ोत्तरी देखी जा सकती है।[3]

ग्रामीण सड़कें ग्रामीण विकास के क्षेत्रों में सयोजकता प्रदान करती है। ग्रामीण सड़के न केवल ग्रामीण और सम्बन्धित उत्पादों के ग्रामीण क्षेत्रों में ले जाने के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यस्था में समावेशी विकास के लिए भी महत्वपूर्ण है, इस योजना के सड़को के निर्माण के बाद रोजगार की स्थिति में और अधिक रोजगार के अवसर, स्वास्थ्य रोग की रोकथाम में वृद्धि के सम्बन्ध में, शिक्षा सुविधाऐं तथा ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न सरकारी योजनाऐं और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए सरकारी अधिकारियों द्वारा बार-बार आने वाली यात्राओं की संख्या में वृद्धि हुई है।[4]

सड़कें किसी भी विकास योजना का प्रमुख अंग होती है प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना 2000 में अपनी शुरुआत के बाद से 152124 बस्तियों को सड़क सम्पर्क उपलब्ध कराने में सफल रही है, जो इस योजना के तहत् पात्र कुल 178184 बस्तियों का 85.37 प्रतिशत है। राष्ट्रीय विकास में ग्रामीण सड़को के महत्व और तत्काल इनके निर्माण की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए पीएमजीएसवाई के प्रथम चरण को पूरा करने की तारीख 2022 के स्थान पर 2019 कर दी गई। इस त्वरित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए 178184 पात्र बस्तियों में से 166012 बस्तियॉ (93 प्रतिशत) को सड़कों से जोड़ने की स्वीकृति दे दी गयी है। 2017-18 में 11499 पात्र बसावटो को जोड़ने के लिए कुल 48751 कि.मी. सड़के बनायी गयी और इनकी औसत रफ्तार 134 कि.मी. प्रतिदिन रही है।[5]

पीएमजीएसवाई-II के अर्न्तगत 31 दिसम्बर, 2019 तक 28 राज्यों में 49843 कि. मी. सड़क लम्बाई की स्वीकृति हो चुकी है। इस स्वीकृति के आधार पर 31474 कि.मी. सड़क लम्बाई का कार्य पूरा कर लिया गया है।[6]

ग्रामीण सड़क कनेक्टिविटी को और मजबूत बनाने के लिए प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के तीसरे चरण को 2018-19 के बजट भाषण में घोषणा की थी, जिसमें देश भर सड़को का नेटवर्क स्थापित कर रिहायशी क्षेत्रो को ग्रामीण कृषि बाजारों, उच्च माध्यमिक विद्यालयों तथा अस्पतालों को ग्रामीण क्षेत्रों की प्रमुख सम्पर्क सड़को से जोड़ा जायेगा। इसके अर्न्तगत 125000 कि.मी. लम्बी सड़के बनाने की योजना है, जिसकी अनुमानित लागत लगभग 80250करोड़ रुपये है।[7]

केन्द्र द्वारा प्रायोजित यह कार्यक्रम राज्य सरकारों की साझेदारी से लागू किया जाता है। पिछले पॉच वर्षो में इसकी रफ्तार और गुणवत्ता पर ध्यान दिया गया है जिससे इनमें लगातार सुधार हुआ है।

वर्ष	सड़को से जोड़ी गयी बसावटे	पूरी की गई ल0 (किमी0)	व्यय (रु0 करोड़ में)
2015-16	372	2689.57	1715.92
2016-17	364	5490.87	1244.89
2017-18	483	4687.00	1594.00
2018-19	1899	7678.00	4448.35
2019-20	334	1283.65	2710.57

भारत सरकार ने 'मेरी सड़क' नामक एक सरकारी ऐप भी बनाया है इस ऐप के द्वारा

सीधे तौर पर प्रधानमंत्री से गॉवों में सड़क न बनाये जाने या फिर किसी कारण खराब हुई सड़क की मरम्मत की शिकायत भी की जा सकती है। लेकिन ध्यान देने की जरुरत है कि वही सड़कें ठीक की जायेगी, जिनका निर्माण कार्य प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के द्वारा किया गया है।[8]

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के तहत जलवायु से प्रभावित न होने वाली सड़कों के निर्माण के लिए गैर-परंपरागत, स्थानीय रुप से उपलब्ध निर्माण सामग्री (प्लास्टिक, अपसिस्ट, कोल्डमिक्स, फ्लाईएस, पटसन और नारियल रेशे,लोहे और तांबे के अपशिस्ट,प्रकोष्ठ में भरी सीमेंट,सीमेंट व कंक्रीट के पैनल आदि) और ग्रीन टेक्नोलॉजी के उपयोग को बढ़ावा दिया गया है। इस टेक्नोलॉजी को व्यापक तौर पर स्वीकार किया जा रहा है। मंत्रालय ने सड़कों के रखरखाव में स्वयं सहायता समूहों को शामिल करने के लिए एक परीक्षण परियोजना प्रारम्भ की। उत्तराखंड ग्रामीण सड़क विकास एजेन्सी ने राष्ट्रीय ग्रामीण सड़क विकास एजेन्सी के दिशा-निर्देशन में ग्रामीण सड़कों की मरम्मत के लिए सामुदायिक ठेकेदारी की शुरूआत सभी पंजीकृत महिला मंगल दल से की। विभिन्न एडवोकेसी वर्कशॉप आदि के जरिये 23 राज्यों की ग्रामीण सड़कों के रखरखाव की नीतियाँ बनाई गई है। इस सड़कों की रखरखाव प्रणाली को चुस्त दुरूस्त करने के लिए मध्य प्रदेश में उपयोग में लाये जा रहे हैं।[9]

इस योजना के मुख्य कार्यकारी उद्देश्यों में ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों से न जुड़ी हुई बस्तियों को बारहमासी सड़कों से जोड़ना है जिसमें आवश्यकतानुसार आवश्यक पुलियों एवं क्रास ड्रेनेज का निर्माण किया जाना है। इस योजना के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों को बारहमासी सड़कों से जोड़ने का मुख्य कारण यह है कि जिससे ग्रामीण बस्तियों को शिक्षा,स्वास्थ्य,रोजगार,विपणन एवं परिवहन जैसी मूलभूत सुविधाओं का लाभ दिया जा सकें। पी.एम.जी.एस.वाई कार्यक्रम के लिए इकाई राजस्व ग्राम अथवा पंचायत न होकर एक बसावट (बस्ती) होती है। इस कार्यक्रम में केवल एकल सड़क सम्पर्कता की व्यवस्था है। यदि कोई बस्ती पहले ही बारहमासी सड़कों के माध्यम से किसी अन्य सड़क से जुड़ी या बसावट से जुड़ी हुई हैं तो उस बसावट में इस योजना के अन्तर्गत कोई अन्य कार्य शुरू नहीं किया जा सकता है।[10]

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हैं कि प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना का कार्य क्षेत्र एवं लाभ क्षेत्र ग्रामीण बस्तियाँ है। सड़कें भारत ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में विकास की गति की मापक है। भारत का हर एक गॉव, बस्ती विकास की मुख्य धारा से तब तक नहीं जुड़ सकता है, जब तक वह विकास की धारा में अग्रवर्ती क्षेत्रों अथवा शहरों से स्वयं को जोड़ नहीं लेता। सड़कें ही वह माध्यम हैं जिसके द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार,परिवहन,विद्युत,संचार व्यवस्था को गति दी जा सकती हैं। इसके अभाव में व्यक्ति गरीबी के दुश्चक्र में जकड़ा रहता है और फलस्वरूप विभिन्न क्षेत्रों में आर्थिक एवं सामाजिक विभेद बढ़ता जाता है।

अतः ग्रामीण क्षेत्रों में प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना द्वारा निर्मित सड़कों को उन क्षेत्रों के विकास का मुख्य आधार स्वीकार किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना,दिशा–निर्देश,मई 2011,पृ.–1
2. ग्रामीण विकास मंत्रालय,भारत सरकार,वार्शिक रिपोर्ट 2019–20,पृ.–89
3. कुरूक्षेत्र,सितम्बर 2016,पृ.–11
4. Preeti Jain 'Pradhan Mantri Gram Sadak Yojana: A Path to Inclusive Growth MP
5. कुरूक्षेत्र,अगस्त 2018,पृ.–58
6. ग्रामीण विकास मंत्रालय,भारत सरकार,वार्षिक रिपोर्ट, 2019–2020,पृ.–93
7. www.drishtiias.com
8. नवभारत टाइम्स. कॉम, 29नवम्बर, 2018
9. कुरूक्षेत्र,अगस्त 2018,पृ.–59
10. प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना,दिशा–निर्देश,मई 2011,पृ. –2,4

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

बिहार में महिला सशक्तिकरण के प्रयास

• उपेन्द्र प्रसाद

सारांश - महिला सशक्तिकरण का अर्थ है कि हीनता के ढ़ाचों, कानूनों सम्पति के अधिकारों, स्वामित्व के ढ़ाचों और अन्य संस्थाओं, जो कि पुरुष प्रभुत्व को बनाये रखनें या बढ़ाने में सहायक है, में आमूल परिर्वतन किये जायें। महिला सशक्तिकरण की दिशा में सकारात्मक पहल की शुरुआत 19 वीं सदी में इंग्लैण्ड में मताधिकार की मांग के साथ हीं सम्भव हो सका। प्राचीन भारत भी महिला सशक्तिकरण के महत्व को समझता था, लेकिन प्राचीन काल से आज तक महिलाओं की राजनैतिक व सामाजिक स्थिति में काफी उतार-चढ़ाव आये हैं। 19 वीं सदी के उत्तरार्द्ध में सारी दुनिया में सुधारवादी आन्दोलन का जोर था, उस दौर में सुधारवादी आन्दोलनों नें भारतीय समाज की संरचना को गहरे तक प्रभावित किया। इस सामाजिक चेतना की बदौलत महिलायें बड़े पैमानें पर राष्ट्रीय आन्दोलन में सम्मिलित हुई। गांधी जी नें महिलाओं को एक वस्तु के नजरिये से नहीं देखा कि उनका सुधार किया जाये या उनके साथ ज्यादा मानवीय व्यवहार किया जाये बल्कि उन्हें एक जागरुक नागरिक और अपने भाग्य विधाता के रूप में देखा। यहां हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1950 का उल्लेख किया जा सकता है, इसमें माता-पिता की सम्पति में पुत्रियों को पुत्रों के समान ही सम्पति का अधिकार दिया गया था। उस समय यह अधिनियम लागू नहीं हो सकता था सन् 2005 में केन्द्र सरकार ने यह महत्वपूर्ण कानून सारे भारत में लागू कर दिया है। इसके बाद भारतीय संसद नें भारतीय साक्ष्य अधिनियम, भारतीय दण्ड संहिता अपराध प्रक्रिया संहिता आदि में व्यापक संशोधन किये, ताकि महिला उत्पीड़न के मामले को रोका जा सके। महिला के खरीद-फरोख्त तथा वेश्यावृति को गैर-कानूनी घोषित किया गया। दहेज निरोधक कानून के द्वारा दहेज लेने व देने को अपराध मानते हुए कड़ी सजा का प्रावधान किया गया। बुनियादी स्तर पर महिलाओं को ज्यादा अधिकार देने के लिए सबसे पहले पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने कदम उठाया था और संविधान में 73 वें संशोधन करके महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण संभव किया था। बिहार, उतराखण्ड, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश में पंचायती राज व्यवस्था एवं नगर निकाय में 50 फिसदी आरक्षण है। प्रदेश की कमान संभालते ही नीतीश कुमार ने वर्ष 2007-08 में मुख्यमंत्री नारी शक्ति योजना लागू की थी। इसका मकसद आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सशक्तिकरण के रुप में बिहार की महिलाओं की पहचान दिलाना है। बिहार में लड़कियों को जन्म से स्नातक तक सरकार 54 हजार रुपये की सहायता देती है। 2007 में मुख्यमंत्री कन्या सुरक्षा योजना की शुरुआत गई थी इस योजना को शुरु करने का उद्धेश्य बेटियों की जन्म दर को बढ़ावा देना, समाज में लिंग भेद की समस्या दूर करना, कन्या भ्रूण हत्या को रोकना, लिंगानुपात को बढ़ावा और जन्म निबंधन को बढ़ावा देना था। बिहार की मुख्यमंत्री कन्या विवाह योजना यह योजना करीब एक दशक से राज्य में चल रही है। इसका पहला उद्वेश्य, नाबालिक लड़कियों की शादी पर रोक लगाना, दूसरा समाज में दहेज प्रथा को खत्म करना है। गंभीरता से विचार किया जाये तो आजादी के बाद शुरु हुआ महिला सशक्तिकरण का आन्दोलन आज भी जारी है। इस दौरान इसे कुछ असफलताएँ मिली तो इसके खाते में बहुत सी सफलताएँ भी दर्ज हैं। लेकिन बिहार सरकार की पहल महिला सशक्तिकरण के लिए सराहनीय है।

मुख्य शब्द - महिला सशक्तिकरण, जनप्रतिनिधित्व, भ्रूण हत्या

• असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग,बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार।

प्रस्तावना – बिहार मे महिला सशक्तिकरण के प्रयास– महिला सशक्तिकरण का अर्थ है कि हीनता के ढ़ाचों, कानूनों सम्पति के अधिकारों, स्वामित्व के ढ़ाचों और अन्य संस्थाओं, जो कि पुरुष प्रभुत्व को बनाये रखनें या बढ़ाने में सहायक है, में आमूल परिर्वतन किये जायें। दूसरे शब्दों में महिला सशक्तिकरण से निहितार्थ महिलाओं को वे सारे उपकरण उपलब्ध करवाना है जिसकी सहायता से ''आधी दुनिया'' उन्नति कर सकती है और आगे बढ़ सकती है। इस प्रकार सशक्तिकरण महिलाओं को हस्तक्षेप करने, रणनीति निर्धारित करने और कदम उठाने के लिए समर्थ बना देता है। यहीं महिला सशक्तिकरण की असली पहचान है। महिला सशक्तिकरण की दिशा में सकारात्मक पहल की शुरुआत 19 वीं सदी में इंग्लैण्ड में मताधिकार की मांग के साथ हीं सम्भव हो सका। उस दौर में सारी दुनिया में सुधारवादी आन्दोलन का जोर था, तो भारतीय समाज भी भला इससे कैसे बचा रह सकता था।

सवाल है कि महिला सशक्तिकरण के मामले में हम कितना सफल हुये हैं ? क्या हम महिला सशक्तिकरण के अर्थ को समझ पाये हैं ? महिला सशक्तिकरण के प्रतिमान क्या हैं? भारतीय समाज में महिला सशक्तिकरण को प्रभावित करने वाले कौन–कौन से कारक हैं? क्या महिला सशक्तिकरण की दिशा में स्वयंसेवी संगठन भी प्रभावशाली योगदान दे सकती हैं? आर्थिक आत्मनिर्भरता के बिना क्या हम महिला सशक्तिकरण की बात कर सकते हैं? प्रस्तुत लेख प्रबंध में इन प्रश्नों की बारीकी से छानबीन की गई है।

महिला सशक्तिकरण की जरुरत से कोई भी इन्कार नहीं कर सकता। प्राचीन भारत भी महिला सशक्तिकरण के महत्व को समझता था, लेकिन प्राचीन काल से आज तक महिलाओं की राजनैतिक व सामाजिक स्थिति में काफी उतार–चढ़ाव आये हैं। इतिहास के पन्ने पलटने से पता चलता है कि पूर्व–आर्यन युग (ई.पू. 3000 से ई.पू. 2000) में भी महिलायें समाज में अपना विशिष्ट स्थान रखती थीं, सिंधु–घाटी सभ्यता के विलोप के बाद 1500 ई.पू. के आस–पास भारत में आर्यों का आगमन हुआ। इसी दौरान ऋग्वेद की रचना हुई और फिर सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद भी लिखे गये। इन वेदों और पुराणों के अध्ययन के आधार पर इतिहासकारों नें वैदिक युग को, महिलाओं की सामाजिक स्थिति के संदर्भ में स्वर्ण–युग कहा है, क्योंकि इस काल–खण्ड़ में महिलाओं की समाज में अत्यन्त उन्नत स्थिति थी।

वैदिक युग के बाद ई. पू. 600 से 300 ई. पू. के काल–खण्ड़ को क्रांति–युग की संज्ञा दी जाती है। लगभग इसी समय कौटिल्य ने ''अर्थशास्त्र'' और ''मनुस्मृति'' की रचना की। इन महाग्रन्थों में उस समय की सामाजिक स्थिति और समाज में महिलाओं की प्रस्थिति का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसी दौरान समाज में महिलाओं की स्थिति का क्षरण शुरु हुआ। ''अर्थशास्त्र'' और ''मनुस्मिृति'' में कहीं भी महिला शिक्षा का जिक्र नहीं किया गया है। अब तक बाल–विवाह की कुप्रथा भी अस्तित्व में आ गयी थी। सम्पति पर भी महिलाओं का अधिकार समाप्त कर दिया गया था।

बाद आये ''गुप्त–युग'' में महिलाओं की स्थिति में और भी अधिक दासत्व आ गया था, विधवा विवाह पर तो पूर्णतया प्रतिबंध लगा दिया गया था लेकिन सती और जौहर प्रथायें अस्तित्व में आ गयी थी। अब उनके लिए सहनशीलता व आज्ञाकारिता के गुणों को अनिवार्य कर दिया गया था।

सन् 1200 से 1757 ई. तक के मध्यकाल में भारत में मुस्लिम आक्रमणकारियों नें

अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया था, दूसरी ओर इस समय तक हिन्दू समाज में जाति–व्यवस्था भी अपने पैर पसार लिये थे। इस मुगल काल में महिलाओं की स्थिति और भी दयनीय हो गई थी। महिला शिक्षा पूरी तरह से समाप्त हो गई थी और पर्दा प्रथा सभी महिलाओं के लिए अनिवार्य कर दी गयी थी, अब सती प्रथा अपने चरम सीमा पर थी। इस काल में महिलाओं की आजादी छीन कर ''गृहस्थी'' को हीं उनकी समस्त गतिविधियों का केन्द्र बना दिया गया था। इस प्रकार महिलायें पति की दासी और उपभोग की वस्तु मात्र बनकर रह गयी। मुगल काल में शुरु हुआ महिलाओं की सामाजिक स्थिति का यह क्षरण, ब्रिटिश शासनकाल तक लगातार जारी रहा।

19 वीं सदी के उत्तरार्द्ध में सारी दुनिया में सुधारवादी आन्दोलन का जोर था, उस दौर में सुधारवादी आन्दोलनों नें भारतीय समाज की संरचना को गहरे तक प्रभावित किया। इस सामाजिक चेतना की बदौलत महिलायें बड़े पैमानें पर राष्ट्रीय आन्दोलन में सम्मिलित हुई। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के नेता इस तथ्य से भली–भांति परिचित थे कि महिला सशक्तिकरण किये बिना राष्ट्र के सम्पूर्ण विकास की कल्पना नहीं की जा सकती। स्पष्ट है कि भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के उदय काल से हीं महिला सशक्तिकरण के महत्व को समझा जाने लगा था। इसका परिणाम यह हुआ कि महिलायें जीवन के सभी क्षेत्रों में आगे आने लगीं। इस दौर में राष्ट्रीय आन्दोलन में महात्मा गांधी के आनें से राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं के विषय में सोच बदली। पुरातन परम्पराओं का विरोध भी शुरु हो गया। अब ऐसी परम्पराओं पर भी प्रश्न चिन्ह लगने लगे थे, जो महिलाओं को पुरुषों के मुकाबले कम करके आंकती थी। गांधी जी नें महिलाओं को एक वस्तु के नजरिये से नहीं देखा कि उनका सुधार किया जाये या उनके साथ ज्यादा मानवीय व्यवहार किया जाये बल्कि उन्हें एक जागरुक नागरिक और अपने भाग्य विधाता के रुप में देखा।

स्वाधीनता संघर्ष काल के दौरान महिला सशक्तिकरण की जिस चेतना का प्रस्फुटन हुआ, वह उतरोत्तर तीव्र होती गयी। सम्भवतः उसी से बहुत प्रेरित होकर संविधान निर्माताओं नें भारतीय संविधान की उद्वेशिका सहित विभिन्न अनुच्छेदों में ऐसी व्यवस्थायें की, जो महिलाओं के वैधानिक सशक्तिकरण की दृष्टि से बहुत उपयोगी तथा प्रभावशाली है। जहाँ तक महिला सशक्तिकरण की दृष्टि से महिलाओं के अधिकारों का प्रश्न है, भारतीय संविधान के भाग तीन में मौलिक अधिकारों के अन्तर्गत कई महत्वपूर्ण अधिकारों का उल्लेख किया गया है। भारतीय संविधान में महिलाओं और पुरुषों के अधिकारों में कोई भेदभाव नहीं किया गया है।

सके अलावा महिलाओं के अधिकारों को और अधिक व्यवहारिक और प्रासंगिक तौर पर प्रभावी बनाने के लिए समय–समय पर अनेक अधिनियमों का निमार्ण किया गया है। यहां हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1950 का उल्लेख किया जा सकता है, इसमें माता–पिता की सम्पति में पुत्रियों को पुत्रों के समान ही सम्पति का अर्धिकार दिया गया था। उस समय यह अधिनियम लागू नहीं हो सकता था सन् 2005 में केन्द्र सरकार ने यह महत्वपूर्ण कानून सारे भारत में लागू कर दिया है। इसके बाद भारतीय संसद नें भारतीय साक्ष्य अधिनियम, भारतीय दण्ड संहिता, अपराध प्रक्रिया संहिता आदि में व्यापक संशोधन किये, ताकि महिला उत्पीड़न के मामले को रोका जा सके। महिला के खरीद–फरोख्त तथा वेश्यावृति को गैर–कानूनी घोषित किया गया। दहेज निरोधक कानून के द्वारा दहेज लेने व देने को अपराध

मानते हुए कड़ी सजा का प्रावधान किया गया।

यह एक अकाट्य तथ्य है कि आर्थिक विकास के बिना बाकी सभी विकास बेमानी है, इसलिए महिलाओं के आर्थिक विकास हेतु कई कार्यक्रम चलाये गये। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण क्षेत्र में महिला एवं बाल-विकास कार्यक्रम, गंगा कल्याण योजना आदि में महिलाओं को प्रमुखता दी गई। इनक कार्यक्रमों का उद्वेश्य था महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण। शिक्षा भी सशक्तिकरण के लिए बेहद आवश्यक है, इसलिए बालिका शिक्षा के लिए विषेश कार्यक्रम चलाये गये। महिलाओं के बढ़ते शिक्षा के स्तर और सरकार द्वारा बनाये गये विभिन्न कानूनों के मद्देनजर महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण की दिशा में प्रभावी काम हुआ है।

पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं की राजनीतिक रुपसे सशक्त बनाने हेतु सन् 1992 में 73 वाँ संविधान संशोधन भारत की संसद द्वारा पारित किया गया जिसके आधार पर पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को 33 फीसदी आरक्षण दे दिया गया। इस संशोधन के माध्यम से महिलाओं को राजनैतिक रुप से एक नई ताकत मिली। वास्तव में यह संशोधन महिलाओं की छिपी हुई शक्ति को उजागर करने का एक अच्छा प्रयास था।

उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट है कि महिला सशक्तिकरण के लिए भारत में काफी प्रयास किये जा रहे हैं, लेकिन वास्तविकता क्या है? यह सभी जानते हैं। क्या इसे महिला सशक्तिकरण कहा जा सकता है कि आज हम प्रतिवर्ष हजारों शिशुओं की गर्भ में हीं सिर्फ इसलिए हत्या कर देते हैं कि गर्भ में पल रहा वो बच्चा एक कन्या है। इन घृणित हत्याओं के कारण देश भर में लिंगानुपात बेहद कम हैं। राष्ट्रीय महिला आयोग का एक अध्ययन (सन् 2010) बताता है कि पढ़ी-लिखी आधुनिक कामकाजी महिलाओं को अपेक्षाकृत अधिक शोषण का सामना करना पड़ता है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के ऑकड़े भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं। भारतीय समाज कितना विकसित हो गया है, इसकी एक झलक, बलात्कार का दिन-प्रतिदिन ऊँचा उठता ग्राफ हीं दिखाई देता है। लड़कियाँ न तो शैक्षणिक संस्थाओं में सुरक्षित है और न ही देश की राजधानी के "राजपथ" पर।

परिवार को समाज की महत्वपूर्ण संरचनात्मक इकाई माना जाता है लेकिन पारिवारिक स्तर पर भी महिलायें सुरक्षित नहीं है। घर के भीतर हीं उन्हें पारिवारिक और वैवाहिक हिंसा का सामना करना पड़ता है। "अस्मिता" नामक गैर-सरकारी स्वैच्छिक संगठन का शोध बताता है कि उच्च परिवारों की अशिक्षित लगभग 13 प्रतिशत महिलायें, पति द्वारा हाथापाईं का शिकार होती हैं, महिलाओं द्वारा की जाने वाली आत्महत्याओं का बढ़ता ग्राफ बताता है कि भारतीय महिलायें किसी विपरीत परिस्थितियों में जीवन-यापन कर रही हैं।

सरकारी ऑकड़ों के अनुसार भारतीय कोख से जन्म लेने वाली प्रत्येक 100 बालिकाओं में से मात्र 62 बालिकायें ही प्राथमिक विद्यालय में अपना नाम पंजीकृत करवाती हैं, 30 प्रतिशत बालिकायें मिडिल स्कूलों की दहलीज चढ़ पाती हैं और सिर्फ 35.5 फीसदी बालिकायें हीं माध्यमिक, शिक्षा पूरी कर पाती हैं। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद् (सी.बी.एस.ई) की परीक्षाओं में जरुर सदैव "लड़कियाँ हीं बाजी मारती हैं" और महानगरों विश्वविद्यालयों, कॉलेजों तथा प्रोफेशनल शिक्षा देने वाली संस्थानों में जरुर आजकल लड़कियां हीं बहुमत में होती है, लेकिन भारत के गांवों और दूर-दराज के इलाके की तस्वीर बिल्कुल उल्टी है। लाल बहादुर शास्त्री के "असली भारत" में लड़कियों की उच्च-शिक्षा

आज भी एक दिवास्वप्न मात्र है। इन इलाकों की केवल 7 प्रतिशत लड़कियाँ हीं विश्वविद्यालयों की सीढ़ियां चढ़ पाती हैं।

हमारे यहाँ स्त्री–अशिक्षा के लिए आर्थिक एवं सामाजिक कारण तो दोषी हैं हीं, संसाधनों की कमी भी एक प्रमुख कारण है। एक अनुमान के मुताबिक भारत में गाँवों की कुल संख्या 547672 है। इनमें से लगभग 48566 गाँव ऐसे हैं जिनमें एक भी प्राथमिक विद्यालय नहीं हैं, इनमें से लगभग 167383 ग्रामीण स्कूल ऐसे हैं जिनमें न तो आवश्यकतानुसार अध्यापक हैं और न हीं जरुरी साजो–समान। इतने कम विद्यालयों में और ऐसे विद्यालयों में बालिकाओं की तो छोड़िये, बालकों का शिक्षा प्राप्त करना भी कठिन है। संसाधनों की इस कमी के चलते हीं हमारें यहाँ जीवन का दसवाँ सावन देखते–देखते 73.78 प्रतिशत कन्याएँ पढ़ाई–लिखाई छोड़कर घर की दहलीज तक सिमट जाती हैं।

जब भारतीय महिलाओं में औपचारिक व परम्परागत् शिक्षा की ये हालत है तो उनसे राजनैतिक शिक्षा की उम्मीद भी करना बेमानी है। राजनैतिक शिक्षा के अभाव में आम भारतीय महिला की न तो कोई राजनैतिक सोच होती है और न ही राजनैतिक विचार धारा। इस राजनैतिक विचार–शून्यता का असर स्पष्ट रूप से भारतीय परिवारों पर देखा जा सकता है।

हमारी सामाजिक संरचना और विश्वास होता है कि किसी भी महिला को पूर्णता विवाह होने पर ही मिलती है, मां बनने पर ही उसे सम्पूर्णता का अहसास होता है। जो महिला वैवाहिक बंधनों से मुक्त रहकर स्वयं अपने बल पर राजनीति में जगह बनाने की कोशिश करती हैं, समाज उसकी ओर ऊँगली उठाने लगता है, उसके चरित्र पर कीचड़ उछाली जाने लगती है।

महिलाओं की संवेदनशीलता, भावनात्मक रुप से औरों पर निर्भरता, उनका मातृत्व का गुण और परिवार के साथ उनके भावात्मक लगाव भी ऐसे कारण हैं जो महिलाओं के पैरों में बेड़ियाँ डाल देते हैं। नृवैज्ञानिक (एन्थ्रोपोलोजिस्ट) लायनल टाइगर तथा रॉबिन फॉक्स ने 70 के दशक में "द इम्पीरियल एनिमल" शीर्षक की एक पुस्तक लिखी थी। वे बताते हैं कि वानर जाति के जीवों में स्त्री–पुरुषों में जीविका का विभाजन केवल मनुष्यों में पाया जाता है। अन्य सभी जातियों में नर और मादा जीवन–यापन के कार्य का विभाजन नहीं करते है। नर अपना भोजन खोजता है और मादा अपना। मनुष्य समाज बहुत विकसित है मनुष्य को अनेक प्रकार के संबंध बनाने पड़ते हैं, कहीं एक–दूसरे से सहयोग करना पड़ता है तो कहीं उन्हीं का विरोध। इस व्यवहारिक जटिलता को बच्चों को सिखाने के लिए मनुष्य समाज में माँ–बच्चे को 10–12 वर्षों तक पालती है और सिखाती है। इतनी लम्बी अवधि तक माँ–बच्चे का सम्बन्ध किसी दूसरे जाति में नहीं पाया जा सकता। इस प्रकार महिलायें प्राकृतिक रूप से हीं दूसरों पर आश्रित रहती हैं, इसलिए वे भावात्मक रुपसे कमजोर अर्थात अधिक भावुक होती है।

गंभीरता से विचार किया जाये तो आजादी के बाद शुरु हुआ महिला सशक्तिकरण का आन्दोलन आज भी जारी है। इस दौरान इसे कुछ असफलताएँ मिली तो इसके खाते में बहुत सी सफलताएँ भी दर्ज हैं। दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश में महिला को सशक्त बनाने की दिशा में ठोस कदम उठायें गये हैं, अनेक सरकारी कार्यक्रम एवं नीतियाँ बनाई गई हैं। बिहार में महिला सशक्तिकरण के विमर्श को आर्थिक और राजनैतिक सशक्तिकरण के साथ जोड़ना एक उल्लेखनीय प्रयोग है।

बुनियादी स्तर पर महिलाओं को ज्यादा अधिकार देने के लिए सबसे पहले पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने कदम उठाया था और संविधान में 73 वें संशोधन करके महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण संभव किया था। बिहार, उतराखण्ड़, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश में पहले से हीं पंचायतों में 50 फीसदी आरक्षण है। बिहार में 9040 पंचायतों में 130091 निर्वाचित पंचायत प्रतिनिधियों में से महिला प्रतिनिधियों की संख्या 70400 है जो 54.12 फीसदी है। बिहार के आलावा मणिपुर में महिलाओं को पंचायतों में 43.66 फीसदी और कर्नाटक में 42.89 फीसदी प्रतिनिधित्व हासिल है। देश की कुल महिला प्रतिनिधियों की संख्या 36.87 फीसदी है। बिहार पहला राज्य है जहां 2005 में महिलाओं को त्रिस्तरीय पंचाायती राज व्यवस्था एवं नगर निकाय में 50 प्रतिशत आरक्षण दिया गया था।

प्रदेश की कमान संभालते हीं नीतीश कुमार ने वर्ष 2007-08 में मुख्यमंत्री नारी शक्ति योजना लागू की थी। इसका मकसद आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सशक्तिकरण के रुप में बिहार की महिलाओं की पहचान दिलाना है। आज प्रदेश में शराबबंदी की घोषणा को आधी आबादी की जीत के रुप में देखा जाता है। बिहार में नीतीश कुमार ने पूर्ण शराब बंदी एवं दहेज बंदी जैसे नीतियां लागू कि है जो महिलाओं का शोषण किया जाता था जो अब कम हुआ है। बिहार के नीतीश सरकार ने बड़े पैमाने पर होने वाले बाल विवाह पर भी रोक लगाने का फैसला किया है। इसका मकसद प्रदेश में लड़कियों की दशा, जन्म दर और स्त्री-पुरुष अनुपात को सुधारना है। इससे संबंधित योजना का ऐलान की गई। इस बैठक में सी. एम. नीतीश कुमार नें प्रदेश में लड़कियों की दशा, शिक्षा के स्तर गिरती जन्मदर और बिगड़ती स्त्री-पुरुष अनुपात पर चर्चा की । नई योजना में बिहार में पैदा होने वाली लड़कियों के जन्म से लेकर ग्रेजुएशन करने तक उसका खर्च सरकार वहन करेगी। वहीं एक अन्य फैसलों में बच्चियों के लिए सेनेटरी नैपकिन के लिए मिलने वाले भत्ते की रकम 300 रुपये कर दी गई है। पोषाक के लिए 600 रुपये प्रति वर्ग 1 व 2 में, 700 रुपये वर्ग 3 से 5 तक, 1000रुपये वर्ग 6 से 8 तक, 1500 रुपये वर्ग 9 से 12 तक प्रति वर्ष देने का प्रावधान है।

बिहार में लड़कियों को जन्म से स्नातक तक सरकार देगी 54 हजार की सहायता-बेटियों का सम्पूर्ण विकास हो इस दिशा में राज्य सरकार लगातार काम कर रही है। मुख्यमंत्री कन्या उत्थान योजना भी इसके लिए चलाई है योजना के तहत कन्या भ्रूण हत्या को रोकने, कन्या जन्म को प्रोत्साहित करने, 02 वर्ष की बालिका शिशु मृत्यु दर को कम करने, बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने, बाल विवाह पर अंकुश लगाने कुल प्रजनन दर में कमी लाने और बालिकाओं को आत्म निर्भर बनाकर समाज की मुख्यधारा में जोड़ रही है। राज्य सरकार कन्या सुरक्षा और कन्या उत्थान के लिए पूर्व से कई योजनाएं चला रही है। बिहार में मुख्यमंत्री बालिका प्रोत्साहन योजना है। इसके तहत 10 वीं की परीक्षा फर्स्ट डिवीजन से पास करने वाली लड़कियों को राज्य सरकार 10,000 हजार रुपये आर्थिक सहायता देती है। मुख्यमंत्री कन्या उत्थान योजना के तहत राज्य की हर लड़की को जन्म से स्नातक तक कुल 54 हजार की सहायता राज्य सरकार द्वारा देने की योजना है। इस योजना के तहत लड़की के जन्म के समय 2,000 रुपये, आधार में नाम जुड़ते हीं 1,000 रुपये, टीकाकरण के बाद 2,000 रुपये, इंटर पास करने पर 10,000 रुपये (अविवाहित लड़कियों को) और स्नातक की पढ़ाई पूरी करने पर 25,000 रुपये देने का प्रावधान है।

2007 में शुरु हुई थी योजना –मुख्यमंत्री कन्या सुरक्षा योजना की शुरुआत 2007–08 में की गई थी इस योजना को शुरु करने का उद्धेश्य बेटियों की जन्म दर को बढ़ावा देना, समाज में लिंग भेद की समस्या दूर करना, कन्या भ्रूण हत्या को रोकना, लिंगानुपात को बढ़ावा और जन्म निबंधन को बढ़ावा देना था। इस योजना के तहत बी.पी.एल. परिवार में 22 नवंबर 2007 के बाद जन्म लेने वाली बेटियों को सरकार द्वारा 2,000 रुपये के निवेश प्रमाण पत्र दिया जाता है और यह 18 वर्ष पूरा होने पर उसकी पूरी राशि बेटी के नाम उपलब्ध करा दी जाती है। इस योजना का संचालन आंगनबाड़ी केन्द्रों के जरिये किया जा रहा है।

बिहार की मुख्यमंत्री कन्या विवाह योजना –बिहार देश में सामाजिक और आर्थिक रुपसे सबसे ज्यादा पिछड़े राज्यों में शामिल है। कन्या विवाह योजना करीब एक दशक से राज्य में चल रही है। इसका पहला उद्धेश्य, नाबालिक लड़कियों की शादी पर रोक लगाना, दूसरा समाज में दहेज प्रथा को खत्म करना कन्या विवाह योजना चलाई जा रही है। बी.पी.एल. परिवार की बेटी की शादी में सरकार 5,000 रुपये की सहायता एक मुश्त देती है। यह रकम लड़की के नाम से चेक या डी.डी. के जरिये दी जाती है। कन्या विवाह योजना साल 2012 से लोक सेवा के अधिकार अधिनियम में भी शामिल किया गया है।

बिहार सरकार नें महिलाओं को सरकारी नौकरियों में 35 प्रतिशत आरक्षण दिया है। सरकार ने आरक्षित और गैर आरक्षित कोटे में भी महिलाओं को 35 प्रतिशत आरक्षण दिया है तथा प्राथमिक एवं मध्य विद्यालयों में 50 प्रतिशत महिला आरक्षण की व्यवस्था है जो कि एक पूर्ण महिला सशक्तिकरण का प्रयास साबित हो रहा है (अमर उजाला 20 जनवरी 2016)। बिहार बोर्ड 10 वीं रिजल्ट 2020 के अनुसार इस वर्ष कुल 14,94071 छात्रों नें परीक्षा दी थी। परीक्षा परिणामों के आधार पर कुल परीक्षार्थियों में 7,29213 छात्र एवं 7,64858 छात्राएं थी। 2020 में बिहार इंटरमिडिएट् के तीनों संकायों को मिलाकर कुल 12 लाख 04 हजार 834 विद्यार्थी शामिल हुए थे। इनमें से 6 लाख 56 हजार 301 छात्र औार 5 लाख 48 हजार 533 छात्राएं शामिल हुई हैं।

निष्कर्ष – गंभीरता से विचार किया जाये तो आजादी के बाद शुरु हुआ महिला सशक्तिकरण का आन्दोलन आज भी जारी है। इस दौरान इसे कुछ असफलताएँ मिली तो इसके खाते में बहुत सी सफलताएँ भी दर्ज हैं। दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश में महिला को सशक्त बनाने की दिशा में ठोस कदम उठायें गये हैं, बिहार सरकार के द्वारा अनेक सरकारी कार्यक्रम एवं नीतियाँ बनाई गई हैं। जैसे– पंचायती राज एवं नगर निकाय चुनाव में 50 प्रतिशत महिलाओं की जन प्रतिनिधित्व की भागीदारी, प्राथमिक एवं मध्य विद्यालय में महिला शिक्षकों का 50 प्रतिशत आरक्षण, सरकारी नौकरीयों में 35 प्रतिशत आरक्षण, मुख्यमंत्री कन्या उत्थान योजना के तहत राज्य की हर लड़की को जन्म से स्नातक तक कुल 54 हजार रु. की सहायता राज्य सरकार द्वारा देने की योजना है, प्रत्येक पंचायत में हाई स्कूल की स्थापना जिससे बालिकाओं को पढ़ने के लिए दूर न जाना पड़े। इस प्रकार बिहार में महिला सशक्तिकरण की दिशा आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में एक सफल प्रयास है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. कश्यप, सुभाष (1996) –हमारा संविधान, नेशनल बुक ट्रस्ट नई दिल्ली
2. कुमारी, जयवर्द्धने (1987) –फेमिनिज़्म एण्ड नेशनलिज्म इन थर्ड वर्ल्ड, जेड

बुक्स लंदन

3. कौशिक, आशा (2004) –नारी सशक्तिकरण : विमर्श एवं यर्थाथ, पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर
4. नाटाणी, प्रकाश नारायण (2002) –महिला जागृति और कानून, आविष्कार पब्लिशर्स जयपुर
5. मजुमदार, वीणा (1993) –वुमेन एण्ड पालिटिकल प्रोसेस, दिल्ली
6. राय, सरीन (1997) –गेटिंग इंस्टिट्यूशनल राईट्स फॉर वुमेन, जेड बुक्स लंदन।
7. कुमार, राधा (2005) –स्त्री संघर्ष का इतिहास, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली
8. शर्मा, हरिशंकर (1999) –प्राचीन भारत का इतिहास, मलिक एण्ड कम्पनी जयपुर
9. सरकार, सुमित (1998) –आधुनिक भारत, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली
10. सिंह, राजेन्द्र (2001) –सोशल मूवमेंट : ओल्ड एण्ड न्यू, सेज पब्लिकेशन नई दिल्ली
11. महेश्वर (2000) –भारतीय लोकतंत्र : समस्या और समाधान, साहित्यागार जयपुर
12. बी.बी.सी. हिन्दी न्यूज, 27 अगस्त 2009
13. एन. डी. टी. भी. इंडिया, 07 फरवरी 2014
14. दैनिक भास्कर, 03 अगस्त 2018
15. जनसत्ता ऑनलाइन, 20 अप्रैल 2018
16. टी. टी. हिन्दी, 25 जुलाई 2019
17. अमर उजाला, 20 जनवरी 2016

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

नगरीय भारत में उदीयमान जातीय-प्रतिमानः
(इलाहाबाद/प्रयागराज नगर के दलित बाहुल्य क्षेत्र के सन्दर्भ में)

• अखिलेश शुक्ल
•• राजेश कुमार दुबे

सारांश – भारतीय जाति संरचना तथा सामाजिक संरचना एक दूसरे के पर्यायवाची हैं। आज भारतीय संरचना से जुड़े अनेक मुद्दों का अध्ययन कई दृष्टिकोणों से हुआ है। जाति के उदीयमान–प्रतिमानों को नगरीय संदर्भ में यथार्थ रूप से समझा व जाना जा सकता है। आज जाति अपना परम्परावादी स्वरूप खोती जा रही है तथा आधुनिक रूप लेती जा रही है। दलितों का शासन व प्रशासन में आना, मंदिर के पुजारी के रूप में दलितों का नियुक्त होना, शिक्षा एवं प्रशासन के क्षेत्र में उच्च जातियों द्वारा निम्न जातियों का पैर छूना, सफाईकर्मी के रूप में ब्राम्हणों एवं उच्च जातियों का आना, प्रभु जाति की प्रभुता का आधार बदलना, दलित महिला की राजनैतिक सशक्तिकरण, जाति पंचायत के प्रभाव में कमी आना, अर्न्तजातीय व अर्न्तधार्मिक विवाहों का प्रचलन, राजनैतिक शक्ति संरचना के केन्द्र में पिछड़ी व अनुसूचित जातियों का स्थान ग्रहण करना इत्यादि उदीयमान जातीय–प्रतिमान दृष्टिगोचर हो रहे हैं। आज राजनैतिक व प्रशासनिक क्षेत्रों में निम्न/दलित जातियों का सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक स्थिति में सुधार आया है। वहीं दूसरी तरफ नवीन संविधान के लागू होने से उच्च जातियों के सामाजिक अधिकारों में कमी आयी है। आज जाति यथावत तो बनी हुई है, किन्तु जातीय प्रणाली (जाति व्यवस्था) में परिवर्तन आया है। ये उदीयमान जातीय–प्रतिमान भारतीय सामाजिक संरचना के रूपांतरण को न व्यक्त करके निरंतरता को स्पष्ट करता है। जातियों में आये ये परिवर्तन भारतीय सामाजिक संरचना के उदीयमान प्रतिमानों को परिलक्षित करते है।

मुख्य शब्द - जाति संरचना, ग्रामीण परिवेश, सामाजिक परिवर्तन

भारत में मानवशास्त्रीय एवं समाजशास्त्रीय अध्ययनों की शुरूआत जाति संरचना से जुड़े मुद्दे को समझने के लिए किया गया। ब्रिटिश शासन अपने हितों के संरक्षण देने अथवा अपने प्रशासन को सफल बनाये रखने के लिए भारतीय समाज व संस्कृति के आधारभूत जाति प्रणाली के अध्ययन को आवश्यक समझा। इस दिशा में भारतीय विचारकों का ध्यान व रूचियां भी इस प्रणाली के तरफ बढ़ी। जी.एस. घुरिए, एम.एन. श्रीनिवास, लूई ड्यूमा, रिजले, एस.वी. केतकर, मजूमदार एवं मदन इत्यादि विद्वानों ने जाति संरचना में हो रहे परिवर्तनों को समझने का प्रयास किया। किन्तु भारतीय संरचना के अध्ययन ग्रामीण परिवेश में ही ज्यादा देखने को मिला है। टी.वी. बोटोमोर[1] ने भारत में हुए सामाजिक परिवर्तनों के अध्ययन की समीक्षा करते हुए टिप्पणी की है कि पद्धतिशास्त्रीय दृष्टि से परिवर्तनों के अध्ययन का परिवेश ग्रामीण न होकर नगरीय होना चाहिए, क्योंकि परिवर्तन की शक्तियों एवं कारकों का केन्द्र गाँव न होकर नगर होता है। नगर हमेशा परिवर्तन के लिए चालक का काम करता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुये शोध कर्ता ने अपने शोध के क्षेत्र का चुनाव

• प्राध्यापक,समाजशास्त्र,शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय(रीवा म0प्र0)
•• शोध छात्र, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय (रीवा म0प्र0

इलाहाबाद/प्रयागराज नगर के दलित बाहुल्य क्षेत्र सादियाबाद, स्वराजनगर, सरायलाला एवं चाँदपुर सलोरी को चुना तथा महिला-पुरुष उत्तरदाताओं के गहन साक्षात्कार के आधार पर भारतीय जाति संरचना में निम्न उदीयमान जातीय प्रतिमानों को उजागर करने का प्रयास किया है -

- शिक्षा एवं प्रशासन के क्षेत्र में उच्च जातियों द्वारा निम्न जातियों के पैर छूना।
- दलितों का शासन व प्रशासन के क्षेत्र में आना एवं स्थायी होना।
- दलितों का मंदिर के पुजारी के रूप में नियुक्ति का विरोध ना होना।
- सफाईकर्मी के रूप में ब्राह्मणों एवं उच्च जातियों का आगे आना।
- दलितों का मंदिर के पुजारी के रूप में नियुक्ति का विरोध न होना।
- निम्न जाति के व्यक्तियों का उच्च जातियों के घरों में रसोईकर्ता के रूप में काम करना।
- उच्च जाति के लड़के-लड़कियों द्वारा निम्न जातियों से विवाह सम्बन्धों की
- अनदेखी करना तथा किसी सामाजिक प्रतिरोध का न होना।
- जातीय पंचायतों के प्रभाव में शिथिलता का आ जाना।
- समाज में बढ़ते अन्तर्जातीय व अर्न्तधार्मिक विवाहों का प्रचलन होना।

अवधारणात्मक परिप्रेक्ष्य - भारत में जाति प्रणाली का अध्ययन भारत विद्याशास्त्र, संरचनात्मक-सांस्कृतिक दृष्टिकोणों, अंत:क्रियावादी परिप्रेक्ष्यों, सभ्यतावादी-परिप्रेक्ष्य एवं उपाश्रित दृष्टिकोण से देखने को मिलता है। चार्ल्स कूले[2] के अनुसार "जब कोई वर्ग पूर्णत: वंशानुक्रमण पर आधारित हो जाता है तब वह जाति कहलाता है।" लूई ड्यूमा[3] ने Homo-Hierarchus में जातियों को मूल्यों के आधार पर देखा तथा कहा कि हिन्दू समाज की सोपानिक व्यवस्था मानक व मूल्यों से जुड़ी होने के कारण ही आज हजारों वर्ष बीत जाने के बाद भी भारतीय समाज में जाति व्यवस्था यथावत विद्यमान है। ड्यूमा ने जाति की एकता को विचारधारा के साथ जोड़ा तथा बोगले की तरह इसे पवित्रता व अपवित्रता के साथ जोड़ा। ड्यूमा जाति के तीन तत्वों- सोपानक्रम, जातिगत दूरी एवं श्रम विभाजन- का उल्लेख करते हुये जाति को विभक्त रूप/खण्डों का योग कहते हैं। जी.एस. घुरिए[4] ने जाति को एक अखिल भारतीय प्रघटना मानते हुए इसे एक प्रस्थिति समूह कहते हैं। ये जाति व्यवस्था के 6 लक्षणों - समाज का खण्डात्मक विभाजन, संस्तरण, भोजन व सामाजिक व्यवहार पर नियंत्रण, विभिन्न उप विभागों की नागरिक तथा धार्मिक योग्यताए तथा विशेषाधिकार, निर्वाध व्यवसाय के चुनने का अभाव तथा विवाह पर नियंत्रण - का उल्लेख किया है। दीपाकंर गुप्ता[5] सोशल स्ट्रैटीफिकेशन में कहते हैं कि जाति व्यवस्था भारतीय समाज में ऐसी पैठ गई है कि इसे पृथक करना कठिन है। इरावती कर्वे[6] जाति को विस्तृत नातेदारी समूह मानती है। एस.वी. केतकर[7] ने अन्त:विवाह को ही जाति का सारतत्व कहा है।

मजूमदार एवं मदन[8] ने जाति को वर्ग से पृथक करते हुये लिखा है कि "जाति एक बन्द वर्ग है।" टी.एन. मदन[9] ने पाथवेज में रामपुरा की आलोचना में लिखा है कि "वास्तव में रामपुरा का अध्ययन अनिवार्य रूप से एक गांव का अध्ययन है, पर इसमें श्रीनिवास ने जातियों के विश्लेषण को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया है और इसमें भी ऊंची जातियों व अभिजनों को।" हरबर्ट रिजले[11] जाति को परिवारों का एक समूह माना है, जिसका एक सामान्य नाम,

काल्पनिक पूर्वज से उत्पत्ति का दावा, एक समान आनुवांशिक व्यवसाय तथा सम्पत्ति देने में समर्थ लोगों द्वारा एक सजातीय समुदाय है। के.एल. शर्मा[12] ने अपनी पुस्तक 'भारतीय समाज' में लिखते है – जाति प्रथा की उत्पत्ति के बारे में काल्पनिक सिद्धान्तों की चर्चा बन्द हो गई है। असली बात तो यह है कि आज हम जाति की उत्पत्ति की चर्चा नहीं करते हैं, अपितु समाज में जाति के उद्‌भव के स्तरों की व्याख्या करते हैं। हीरा सिंह[13] ने अपनी पुस्तक "रिकास्टिंग ऑफ कास्ट सिस्टमः फ्राम सेक्रेट टू प्रोफेन" में स्पष्ट करते हैं कि हिन्दू सामाजिक संरचना में जाति और धर्म दोनों मजबूत हुआ है, जबकि केवल जाति व्यवस्था ही कमजोर हुई है। योगेन्द्र सिंह[14] का मानना है कि भारत में जाति ही संस्तरण की एक महत्वपूर्ण सरंचनात्मक इकाई है, जिसमें संरचनात्मक एवं सांस्कृतिक स्तरों पर परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है। शायद हट्टन और रिजले के बाद श्रीनिवास ही ऐसे तीसरे समाजशास्त्री है, जिन्होंने जाति व्यवस्था पर बहुत बड़े साहित्य का निर्माण किया है। श्रीनिवास का पद्धतिशास्त्रीय संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक रहा है, जिसमें जाति की गत्यात्मकता में अर्न्तजातीय सम्बन्धों की यथार्थता एवं जाति गतिकी को स्पष्ट किए हैं। श्रीनिवास जाति के 9 लक्षणों- संस्तरण, अन्तःविवाह तथा अनुलोम विवाह, व्यावसायिक सम्बद्धता, भोजन जलपान एवं धूम्रपान पर प्रतिबंध, प्रथा भाषा एवं पहनावें का भेद, अपवित्रीकरण, संस्कार एवं अन्य विशेषाधिकार तथा निर्योग्यताएं, जाति संगठन तथा जाति गतिशीलता – का उल्लेख किया है। एम. एन. श्रीनिवास[15] ने सोशल चेन्ज इन माडर्न इण्डिया में जाति को एक खण्डात्मक व्यवस्था माना है, जिसमें प्रत्येक जाति अनेक उपजाति में बंटी होती है।

शोध पद्धति एवं अध्ययन क्षेत्र – शोधकर्ता वर्णनात्मक शोध के अन्तर्गत नगरीय भारत में उदीयमान जातीय-प्रतिमानों के अध्ययन क्षेत्र के लिए इलाहाबाद/प्रयागराज नगर के दलित बाहुल्य क्षेत्र- सादियाबाद, स्वराजनगर, सराय लाला एवं चाँदपुर सलोरी- का चुनाव किया है। ये क्षेत्र अति दलित, शोषित एवं उपेक्षित रहे हैं। क्षेत्र निर्धारण में शोधकर्ता वहां रहकर सामाजिक व्यवहार के विभिन्न पक्षों के अति सूक्ष्म अध्ययन के आधार पर किया है। गहन सहभागी अवलोकन के आधार पर न्यायदर्श विधि से 300 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। उत्तर दाताओं के चयन में परिवार के मुखिया के चयन को वरीयता दिया है। शोध पद्धति निम्नवत् है –

(क) अध्ययन का क्षेत्र – नगरीय भारत में उदीयमान जातीय-प्रतिमानों के अध्ययन के लिए इलाहाबाद/ प्रयागराज नगर के अति दलित बाहुल्य क्षेत्र-सादियाबाद, स्वराजनगर, सराय लाला एवं चाँदपुर सलोरी का चुनाव किया गया है।

(ख) सहाभागी अवलोकन पद्धति[15] – क्षेत्र से उत्तरदाताओं के चयन हेतु दैव निदर्शन विधि पर विशेष ध्यान दिया गया है। 300 उत्तरदाताओं का सहभागी अवलोकन द्वारा गहन साक्षात्कार किया गया। सामग्री संकलन के मुख्य स्रोत साक्षात्कार एवं अवलोकन है। गौण स्रोत के अंतर्गत विभिन्न दस्तावेजो, जैसे- प्रतिवेदन, अभिलेख, फाइले, डायरिया इत्यादि से सूचनाएं एकत्रित की गई है। अवलोकन पद्धति में सहभागिता पर यथोचित ध्यान दिया गया है।

(ग) गुणात्मक अध्ययन के लिए उपकरण[16] – तथ्य संकलन में उपकरण के रूप में साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है। उत्तरदाताओं के सामाजिक

व्यवहारों एवं अभिमतों से सम्बन्धित तथ्यों को जानने हेतु 300 उत्तरदाताओं का साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से गहन सर्वेक्षण किया गया है।

(घ) तथ्य संकलन की विधि – तथ्य संकलन में सहभागी एवं अर्द्ध सहभागी निरीक्षण दोनों पर बल दिया गया है। शोधक शोध क्षेत्र में लगभग एक वर्ष तक क्षेत्र कार्य के उपरान्त तथ्यों का संकलन किया। तथ्य संकलन में निरीक्षण एवं साक्षात्कार विधियों के साथ-साथ एकल अध्ययन पद्धति पर भी ध्यान बनाए रखने का प्रयास किया है।

(ड.) सूचक- उदीयमान जातीय-प्रतिमानों का स्वरूप मूर्त एवं अमूर्त दोनों पाया गया है, जैसे उच्च जातियों एवं ब्राह्णों का सफाईकर्मी के रूप में कार्य करना तथा जूतों की दुकान खोलना, दलित का मंदिर के पुजारी के रूप में कार्य सम्भालना, शिक्षा व प्रशासन से जुड़े निम्न जातियों का उच्च जातियों द्वारा पैर छूना व साथ-साथ बैठकर भोजन करना आदि। जातीय परिवर्तनों का अमूर्त पक्ष मानसिक परिवर्तनों से सम्बद्धता के कारण अदृश्य बन जाता है। शोधकार्य में इसका भी प्रत्यक्षीकरण अक्सर देखने का मिला है तथा शोधकर्ता इस अदृश्य पक्ष से सम्बन्धित तथ्यों को भी उद्घाटित करने का यथोचित प्रयास किया है।

(च) उपकल्पना – शोध में निम्न उपकल्पनाओं को प्रयोग में लाया गया है –

1. पुरानी पीढ़ियों की तुलना में नई पीढ़ियों में उदीयमान जातिय-प्रतिमानों की मात्रा अधिक होती है।
2. उच्च शिक्षित व्यक्तियों की तुलना में शिक्षित व अशिक्षित व्यक्तियों में उदीयमान जातीय-प्रतिमानों की मात्रा क्रमशः कम हो जाती है।
3. पिछड़ी जाति के सदस्य उच्च जाति के सदस्यों से सामाजिक दूरी के नीति के विरोधी नहीं हैं, जबकि निम्न जातियों से सामाजिक दूरी की नीति के विरोधी हैं।
4. उच्च जातियों की अपेक्षा पिछड़ी व निम्न जातियों में राजनैतिक सहभागिता की मात्रा अधिक देखने को मिलती है।
5. उच्च जातियों की अपेक्षा पिछड़ी व निम्न जातियों में जातीय चेतना की मात्रा अधिक होती है।
6. राजनैतिक शक्ति संरचना के केन्द्र में अब उच्च जातियों के स्थान पर पिछड़ी व अनुसूचित जातियां स्थान ग्रहण करती जा रही हैं।
7. उच्च आर्थिक एवं राजनैतिक प्रस्थिति धारक निम्नजातीय व्यक्तियों के लिए जातिगत निषेध अप्रभावी हो गये हैं।

(छ) परिवर्त्य – परिवर्त्यों का प्रभाव प्रतिचरों पर पड़ता है। तथ्य संकलन में इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि किस श्रेणी का उत्तरदाता कैसा प्रतिचर प्रस्तुत करता है। परिवर्त्यों में जाति, लिंग, आयु, शिक्षा एवं आर्थिक पृष्ठभूमि को प्रमुख रूप से स्थान दिया गया है।

तथ्य संकलन, वर्गीकरण एवं विश्लेषण –

तालिका संख्या– 01

क्या आपको अन्र्तजातीय विवाहों की संख्या में वृद्धि देखने का मिल रही है?

क्र.सं.	जाति परिवर्त्य	उत्तरदाता की संख्या		कुल
		हां	नहीं	
1	सामान्य जाति	21	57	78
2	पिछड़ी जाति	28	36	64
3	अनुसूचित जाति	93	35	128
4	अन्य	9	21	30
	योग	151	149	300

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 151 उत्तरदाताओं ने हां में तथा 149 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया। अनुसूचित जाति के 93 उत्तरदाताओं ने सर्वाधिक हां में तथा सामान्य जाति के सर्वाधिक 57 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। महिला शक्तिकरण, बढ़ते शिक्षा के स्तर, वैज्ञानिक व औद्योगिकरण तथा बढ़ते वैयक्तिकता के परिणाम स्वरूप समाज में विवाह के स्वरूप मं परिवर्तन देखने को मिला है तथा समाज में अंर्तजातीय विवाहों की संख्या में वृद्धि आ रही है।

तालिका संख्या – 02

क्या प्रभु जातियों की प्रभुता में कमी आयी है?

क्र.सं.	जाति परिवर्त्य	उत्तरदाता की संख्या		कुल
		हां	नहीं	
1	सामान्य जाति	30	48	78
2	पिछड़ी जाति	42	22	64
3	अनुसूचित जाति	93	35	128
4	अन्य	15	15	30
	योग	180	120	300

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 180 उत्तरदाताओं ने हां में तथा 120 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। अनुसूचित जाति में सर्वाधिक 93 उत्तरदाताओं ने हां में तथा सामान्य जाति में सर्वाधिक 48 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। पंचायती राज व्यवस्था, वयस्क मताधिकार, आरक्षण व्यवस्था, पश्चिमी शिक्षा इत्यादि कारणों के फलस्वरूप जाति के धार्मिक प्रतिमान कमजोर हुये हैं। जिसके फलस्वरूप प्रभु जातियों की प्रभुता में कमी आयी है। आज प्रभुता के निर्धारण में आर्थिक व राजनैतिक कारकों का विशेष महत्व हो गया है।

तालिका संख्या – 03

क्या आर्थिक सम्पन्नता में वृद्धि हो जाने से दलितों की सामाजिक–प्रस्थिति में सुधार देखने का मिला है?

क्र.सं.	जाति परिवर्त्य	उत्तरदाता की संख्या		कुल
		हां	नहीं	
1	सामान्य जाति	48	30	78
2	पिछड़ी जाति	34	30	64
3	अनुसूचित जाति	74	54	128
4	अन्य	14	16	30
	योग	170	130	300

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 170 उत्तरदाताओं ने हां में तथा 130 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया। अनुसूचित जाति के सर्वाधिक 74 उत्तरदाताओं ने हां में तथा अनुसूचित जाति के ही सर्वाधिक 54 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। नवीन कानूनों, वयस्क मताधिकार, पंचायती राज अधिनियम, नगरीय निकाय अधिनियम, आरक्षण व्यवस्था, विभिन्न सरकारी योजनाओं इत्यादि के फलस्वरूप दलितों की आर्थिक स्थिति में सुधार आया है और आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हो जाने के फलस्वरूप दलितों की सामाजिक प्रस्थिति में सुधार आया है।

तालिका संख्या – 04

क्या पंचायती राज अधिनियम और नगरीय निकाय अधिनियम के लागू होने से दलितों व अछूतों की स्थिति में सुधार होता दिख रहा है ?

क्र.सं.	जाति परिवर्त्य	उत्तरदाता की संख्या		कुल
		हां	नहीं	
1	सामान्य जाति	32	46	78
2	पिछड़ी जाति	34	30	64
3	अनुसूचित जाति	78	5.	128
4	अन्य	12	18	30
	योग	156	144	300

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 156 उत्तरदाताओं ने हां में तथा 144 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया। अनुसूचित जाति के सर्वाधिक 78 उत्तरदाताओं ने हां में तथा अनुसूचित जाति के ही सर्वाधिक 50 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है।

तालिका संख्या – 05
क्या उदीयमान जातीय–प्रतिमानों की मात्रा में वृद्धि होने से समाज पर सकारात्मक प्रभाव देखने को मिल रहा है?

क्र.सं.	जाति परिवर्त्य	उत्तरदाता की संख्या		कुल
		हां	नहीं	
1	सामान्य जाति	40	38	78
2	पिछड़ी जाति	37	27	64
3	अनुसूचित जाति	82	46	128
4	अन्य	17	13	30
	योग	176	124	300

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 176 उत्तरदाताओं ने हां में तथा 124 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया। अनुसूचित जाति के सर्वाधिक 82 उत्तरदाताओं ने हां में तथा अनुसूचित जाति के ही सर्वाधिक 46 उत्तरदाताओं ने नहीं में उत्तर दिया है। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता हैं कि नगरीय भारत में जाति व्यवस्था के संरचना एवं प्रकार दोनों में विशेष रूप से परिवर्तन आया है, जिसके फलस्वरूप नगरीय भारत में उदीयमान जातीय प्रतिमान दृष्टिगोचर हुये हैं तथा इसका समाज पर सकारात्मक प्रभाव देखने को मिला है।

निष्कर्ष – ये उदीयमान प्रतिमान विभिन्न कारकों (आवागमन व संचार के साधनों के विकास, औद्योगीकरण व नगरीकरण, लौकीकरण, बढ़ते शिक्षा के स्तर, वैज्ञानिक एवं औद्योगिक उन्नति इत्यादि) के सम्मिलित दीर्घकालिक प्रयासों के फलस्वरूप दृष्टिगोचर हुये हैं। आज आवागमन व संचार–साधनों के विकास, पंचायती राज प्रणाली, वयस्क मताधिकार, महिला सशक्तिकरण, बढ़ती साक्षरता की दर, सामुदायिक उत्थानों एवं एक कल्याणकारी राज्य की नीति इत्यादि कारकों के परिणाम स्वरूप आज नगरीय भारत में उदीयमान जातीय–प्रतिमान दृष्टिगोचर हो रहे है। वर्तमान भारतीय सामाजिक संरचना में परम्परागत जजमानी व्यवस्था के स्थान पर एक परिवर्तित जजमानी व्यवस्था कार्य करती हुई दिख रही है। इन नये परिवर्तनों में व्यवसाय का बाजारीकरण, पारस्परिक सम्बन्धों में विखराव व टूटन, विनिमय की मौद्रिक व्यवस्था और सम्बन्धों की विभिन्न अवसरों पर सीमितता इत्यादि प्रमुख रूप से देखने को मिल रही है। नगरीय सामाजिक संरचना में गोत्र का महत्व धीरे–धीरे समाप्त होता दिख रहा है। यद्यपि हिन्दू विवाह अधिनियम भी समान गोत्र में शादी करने पर कानूनी रोक नहीं लगाता है। फिर भी अध्ययन के क्रम में कुछ उत्तरदाताओं ने गोत्र के महत्व को प्रतिष्ठा के साथ जोड़कर रखा हुआ है। जाति हिन्दू संरचना की सच्चाई है और यही जाति देश के सामाजिक विकास में सबसे बड़ी बाधा भी है। भारत में जातियों के बीच प्रतिस्पर्धा का मूल कारण लोकतंत्र है। लोकतंत्र के आने से जाति व्यवस्था कमजोर हुई है, जबकि जाति ने लोकतंत्र को मजबूत बनाया है। आज जाति तो यथावत बनी हुई है, किन्तु जातीय–प्रणाली (जातीय बंधन) परिवर्तित होते दिख रहे है, जो कि रूपान्तरण को न स्पष्ट करके भारतीय संरचना में निरन्तरता को व्यक्त करता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. बोटोमोर, टी.वी. : सोसियोलॉजीः ए गाइड टू प्राबलम्स एण्ड लिटरेचर्स, राउट इण्डिया प्रकाशक।
2. कूले, चार्ल्स : सोशल आर्गेनाइजेशन (19.9), फारगटेन बुक्स, प्रकाशक।
3. ड्यूमा, एल. : होमो हायरार्किकस (198.), यूनिवर्सिटी आफ शिकांगो प्रेस।
4. धुरिए, जी.एस. : कास्ट, क्लास एण्ड आक्यूपेशन (1961), बाम्बे, पापुलर बुक डिपो प्रकाशक।
5. गुप्ता, दिपांकर : सोशल स्ट्रैटीफिकेशन (1991), जनरिक प्रकाशक।
6. कर्वे, इरावती : किनशिप आर्गनाइजेशन (1968), मुंशी राम मनोहर लाल प्रकाशक।
7. केतकर, एस.वी. : हिस्ट्री ऑफ कास्ट इन इण्डिया, रावत पब्लिकेशन।
8. मजूमदार एवं मदन : एन इन्ट्रोडक्शन टू सोशल एन्थ्रोपोलाजी, एशिया पब्लिक हाउस प्रकाशक।
9. मदन, टी.एन. : पाथवेज, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
10. रिजले हरवर्ट : दी प्यूपिल ऑफ इण्डिया (19.8), बुक ऑफ आल।
11. शर्मा, के.एल. : भारतीय समाज (1989)।
12. सिंह, हीरा : रिकास्टिंग आफ कास्ट सिस्टमः फ्राम सेक्रेट टू प्रोफेन (2.14), सेज इण्डिया प्रकाशक।
13. सिंह, योगेन्द्र : सोशल स्ट्रैटीफिकेशन एण्ड चेन्ज इन इण्डिया, मनोहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीव्यूटर्स।
14. श्रीनिवास, एम.एन. : सोशल चेन्ज इन मार्डन इण्डिया, ओरिएन्ट ब्लैक स्वान प्रकाशक।
15. यंग, पी.वी., साइटिफिक, सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बाम्बे
16. गुडे, विलियम जे. एवं हाट पाल के., मेथड्स इल सोशल रिसर्च, मैग्रेहिल बुक कम्पनी इंक, न्यूयार्क।
17. पाण्डेय, ए.के. : ग्रामीण भारत में परिवर्तित जातीय–प्रतिमान का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन, अप्रकाशित शोध ग्रंथ, समाजशास्त्र, अवध विश्वविद्यालय, उ.प्र.।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

भारतीय राजनीति में सांप्रदायिकता की भूमिका

• प्रदीप कुमार

सारांश– इस शोध पत्र में साम्प्रदायिकता के ऐतिहासिक संदर्भ का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। सन् 1947 में भारत का विभाजन साम्प्रदायिकता की समस्या के कारण ही हुआ है। भारत में अंग्रेजों ने फूट डालो और राज्य करो की नीति अपनाई और आपस में धर्म एवं संप्रदाय के नाम पर लोगों को डराने का प्रयास किया।

मुख्य शब्द -साम्प्रदायिकता, विभाजन, जाति, धर्म

साम्प्रदायिकता शब्द सम्प्रदाय शब्द से बना है। किसी विषय विशेष में आस्था रखने वाले व्यक्ति समूह को सम्प्रदाय कहा जाता है। परन्तु भारत में सम्प्रदाय शब्द का प्रयोग धार्मिक साम्प्रदायिकता के लिए किया जाता है। इस दृष्टि से साम्प्रदायिकता वह विश्वास है, जिसके अधीन का एक वर्ग जो एक ही धर्म का पालन करता हो। धर्म के राजनीतिक और आर्थिक हितों को सुरक्षित रखने के लिए प्रयत्नशील रहता है। साम्प्रदायिकता अपने सम्प्रदाय के प्रति अंधे प्रेम का प्रतीक कहा जा सकता है।

प्रभा दीक्षित ने अपनी पुस्तक साम्प्रदायिकता का ऐतिहासिक संदर्भ में कतिपय नए दृष्टिकोण प्रस्तुत करके भारतीय राजनीति में साम्प्रदायिकता की व्याख्या ऐतिहासिक संदर्भ में की है। लेखिका का कहना है कि सम्प्रदायवाद जान-बूझकर रचा गया एक राजनीतिक सिद्धान्त है, जिसका प्रचार पुराने स्थापित विशिष्ट समुदाय का एक वर्ग राष्ट्रवादी और लोकतांत्रिक शक्तियाँ को क्षीण करने के लिए करता है।

सांप्रदायिकता आन्दोलन की आधारशिला है। अत: धर्मों, जातियाँ और सस्कृतियों वाले समाज में लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्थापना समुदायवादी राजनीति के लिए आदर्श खड़ी कर देती है। ऐसे समाज में राजनीतिक क्षेत्रों में प्रभावशाली बनाने के लिए तथा राजनीतिक सौदेबाजी के लिए धर्म या संस्कृति का राजनीतिकरण हर समुदाय के विशेषकर अल्पसंख्यक के लिए सबसे आसान रास्ता बन जाता है, इसलिए हर समुदाय अपने विशिष्ट व्यक्तित्व की रक्षा तथा सामूहिक एकता के लिए जुट जाता है। मूल रुप से बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक सम्प्रदायवाद का प्रेरक शक्ति और कार्यप्रणाली समान होते हुए भी दोनों में एक गुणात्मक भेद है। अल्पसंख्यक का उद्देश्य समता प्राप्त करना होता है। वही बहुसंख्यक सम्प्रदायवाद का उद्देश्य श्रेष्ठता स्थापित करना होता है। दोनों दृष्टियों से धर्म और संस्कृति पर आधारित सभी साम्प्रदायिकता आन्दोलन क्रांति और पुर्ननिर्माण के आन्दोलन न होकर राजनीतिक और सामाजिक प्रक्रिया के आन्दोलन है।

अंग्रेजों के आने से पूर्व भारत में हिन्दू-मुस्लिम शासकों और नवाबों के हाथों में सत्ता थी। ईस्ट इंडिया कम्पनी उनसे डरती थी। फलत: उन्होंने हिन्दुओं की सहायता और

• प्रवक्ता, राजनीति विज्ञान, डी.बी.एस.डी. इन्टर कॉलेज, कदना, गरखा, सारण (बिहार)

सहानुभूति प्राप्त करने की कोशिस की। प्लासी के युद्ध के बाद जब कम्पनी के हाथों में शासन सत्ता आने लगी तो उसने मुसलमानों के प्रति सौतेला व्यवहार किया और हिन्दुओं को नौकरियों में प्रोत्साहन देकर मुसलमानों के प्रति अपेक्षा की नीति अपनायी। बहाबी आन्दोलन के परिणाम स्वरूप सन् 1857 की क्रान्ति में हिन्दुओं मुसलमानों ने मिलकर अंग्रेजों का विरोध किया।

अंग्रेज इसे मुस्लिम विद्रोह मानते थे, जिसके माध्यम से मुसलमानों ने मुगल शासन की स्थापना करने की चेष्टा की थी। अतः उन्होंने मुसलमानों के विरोध और दमन की नीति अपनायी। कुछ समय बाद हिन्दुओं के विकास, उन्नति और आधुनिकीकरण की बदलती हुई प्रवृति से अंग्रेज डरने लगे। अब उन्होंने मुसलमानों से मित्रता की चातुर्थपूर्ण नीति अपनायी। इसके फलस्वरूप् मुम्हडन एंग्लों औरियण्टल डिफेन्स एसोसियेशन की स्थापना हुई। मुसलमानों को खुश करने के लिए सन् 1905 में बंगाल का विभाजन किया गया। बंगाल का विभाजन फूट डालो और शासन करो की कुटिल नीति का ही परिणाम था। भारतीय मुसलमानों के राजनीतिक एवं अन्य अधिकारों की रक्षा के लिए 1906 में ढ़ाका में ऑल इण्डिया मुस्लिम लीग की स्थापना हुई। 1908 में लीग ने मुसलमानों की आबादी से अधिक स्थान दिए जाने की मांग की। 1909 के मार्ले-मिण्टो सुधारो में सांप्रदायिकता के आधार पर पृथक चुनाव की व्यवस्था का समावेश कर दिया गया। 1916 के लखनउ पैक्ट के अत्तर्गत मुसलमानों की प्रतिनिधि संस्था के रूप में लीग का अस्तित्व साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व तथा मुसलमानों के लिए प्रतिनिधित्व गुरूत्ता के सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया जो एक दम गलत था। सन् 1916 के एक्ट में साम्प्रदायिक निर्वाचन पद्धति को न केवल मुसलमानों के लिए कायम रखा गया वरन् सिक्खों, यूरोपियन और आंग्लो-भारतीय समुदायों के लिए भी इसे अपना लिया गया।

सन 1928 के बाद जिन्ना साम्प्रदायिक राजनीति के खलनायक बन गए। सन 1935 के अधिनियम द्वारा साम्प्रदायिक निर्वाचन पद्वति का विस्तार किया गया। सन् 1940 में जिन्ना ने द्विराष्ट सिद्वान्त का प्रतिपादन किया और अन्त में 1947 में साम्प्रदायिकता के आधार पर भारत का विभाजन हुआ। भारत की संविधान निर्मात्री सभा का गठन सन 1946 में किया गया। प्रान्तो की विधान सभाओं के सदस्यों का चयन साम्प्रदायिक समूह द्वारा अप्रत्यक्ष रीति से हुआ था।

भारत की स्वतंत्रता और भारत के विभाजन के समय जो साम्प्रदायिक दंगे हुए, उन्होंने भारत के लोंगों को अत्यंत विचलित कर दिया। भारतीय नेताओं के इस भयानक सांप्रदायिक तत्व की समाप्ति के लिए भारत में एक धर्म-निरपेक्ष राज्य बनाने का निर्णय किया ताकि भारतीय लोगों में भावनात्मक एकता में मिलकर इकठठे रह कर तीव्र प्रगति कर सके। भारतीय संविधान ने सबको धार्मिक स्वतंत्रता का आधिकार प्रदान किया और राज्य का कोई धर्म घोषित नही किया गया। स्वतंत्रता के लगभग 15 वर्ष बाद भारत के लोग शांति से रहे और इस समय मे सामान्यतः कोई साम्प्रदायिक दंगे नही हुए। परन्तु दुर्भाग्यवश 1960 ई. के दशक में पुनः बिहार, उत्तर प्रदेश., पश्चिम बंगाल और उड़ीसा में हिन्दू-मुसलमान साम्प्रदायिक दंगें भड़क उठे। उस समय से अब तक साम्प्रदायिक दंगे समय-समय पर फैलते रहे हैं। श्रीनगर, मेरठ, मुरादाबाद, कानपुर, इलाहाबाद, चौबास, सहारनपुर, कटक, हैदराबाद, पटना भिवंडी और औरंगाबाद आदि शहरों की सूची लंबी है।

साम्प्रदायिकता की बीमारी भारतीय राजनीति को निरन्तर प्रभावित कर रही है, जबकि हिन्दू- मुस्लिम दंगों की संख्या में वृद्धि हुई। केन्द्रीय सरकार की राय में अल्पसंख्यक समुदाय में कट्टरपंथी नेतृत्व का उभार और परम्परावादी मुस्लिम गुटों को अरब देशों से भारी मात्रा में धनराशि प्राप्त होने और मुस्लिम जगत में अन्य अन्तराष्ट्रीय इस्लामी एकता का प्रभाव इसका कारण है।

भारत में राजनीतिक दल पार्टी को शक्तिशाली बनाने के लिए साम्प्रदायिकतावाद का प्रयोग करने से नहीं चूकते है। यहॉ तक की साम्यवादी दल सी.पी.एम. सत्ता प्राप्ति के लिए केरल में मुस्लिम लीग अथवा ऑल इंडिया मुस्लिम लीग से गठजोड़ करने से नहीं हिचकिचाती है। काग्रेस भी सत्ता प्राप्ति के लिए साम्प्रदायिक दलों से गठजोड़ करने से नहीं हिचकिचाई। वैसे ही बिहार के रामविलास पासवान की लोक जनशक्ति पार्टी बिहार में मुख्यमंत्री मुस्लिम को बनाना चाहती थी, तो लालू प्रसाद यादव की राष्ट्रीय जनता दल मुस्लिम और यादव का समीकरण लेकर एम. वाई. का नारा देती है और बी.जे.पी. को साम्प्रदायिक पार्टी कह कर स्वंय मुस्लिमों की हिमायती होने की बात करती है, तो नीतीश कुमार की जनता दल यूनाइटेड अपने को धर्मनिरपेक्ष पार्टी का नारा देकर भारतीय जनता पार्टी को साम्प्रदायिक मानकर अलग हो गई। उतर प्रदेश में मुलायम सिंह यादव की सपा मुस्लिम और यादव की पार्टी बनकर मुस्लिम की हिमायती बनी है, तो मायावती की बहुजन समाजवादी पार्टी ब्राम्हण और हरिजन की पार्टी बनकर दलित वर्ग की हिमायती बनी है। 06 दिसम्वर 1992 को जब हिन्दू कटटरपंथियों ने अयोध्या में स्थित बाबरी मस्जिद को ढहा दिया, तो 10 मई 1995 को कश्मीर में स्थित चरारे शरीफ दरगाह को मुस्लिम उग्रवादियों ने फूक दिया। बी.जे.पी. कभी राम मंदिर का मुदद्ा उठाती है, तो इंडिया नेशनल मुस्लिम लीग तथा अन्य मुस्लिम पार्टियॉं कश्मीर का मुद्दा उठाती हैं। इसी कारण आज भारतीय राजनीतिक संघर्ष का स्वरूप साम्प्रदायिक बना हुआ है। भारत में चुनाव महंगे से महंगा और अधिक से अधिक मुकाबला वाला होता जा रहा है। चुनाव जीतना दलों और उम्मीदवारों के लिए आज आसान कार्य नही है। वोट प्राप्त करने के लिए कुछ दल अथवा संगठन साम्प्रदायिक तनाव पैदा करने का प्रयास करते है।

मुसलमानों में पृथक्करण की भावना और वोट बैंक की राजनीति से ये लोग भारत की मुख्य धारा से अपने को जोड़ नहीं पाये और वह अपने को अलग मानते हैं। पाकिस्तान आरंभ से ही भारतीय मुसलमानों को हथकण्डा बनाकर भारत के खिलाफ उकसाता रहता है। वह दंगा करा कर हल्ला करता है कि भारत में मुसलमानों की हत्या हो रही है। ऐसा माना जाता है कि अल्पसंख्यक सम्प्रदायवादी होते हैं और उनकी सोच बहुसंख्यक से अलग होती है। भारत में हिन्दू महासभा, विश्व हिन्दू परिषद् आर.एस.एस., शिव सेना, बजरंग दल आदि ऐसी संस्थाए है जो संकुचित हिन्दू राष्ट्रवाद को उत्तेजित करती है

इन सभी तथ्यो की विद्यामानता के कारण ही भारतीय लोकतंत्र के सामने आज साम्प्रदायिकतावाद की चुनौती विद्यमान है। इसका सामना करना भारत के लिए एक महत्वपूर्ण चुनौती है। आज भारत साम्प्रदायिकता के ढेर पर बैठा हुआ है। यदि इसे नही रोका गया तो भविष्य में इसके बहुत ही खतरनाक दुष्परिणाम होंगे, जैसे-आपसी द्धेष, राजनीतिक अस्थिरता, राष्ट्रीय सुरक्षा में खतरा आर्थिक क्षेत्रो में हानि, मावन जीवन की हानि, राजनीतिक स्पष्टता की कमी।

1990 को आयोध्या में राम मंदिर निर्माण का मुद्दा जोर पकड़ रहा था। इसी बीच लालकृष्ण आडवाणी ने सोमनाथ से लेकर आयोध्या तक रथ यात्रा निकालने की घोषणा कर दी और धर्मनिरपेक्षता के प्रति उनकी वचनबद्वता को और भी बल प्रात हुआ, जब रथ यात्रा को बिहार में रोक दिया। यह रथ यात्रा के रास्ते से होकर बावरी मास्जिद के विवादित ढ़ाचे को गिराने और राम मंदिर का वहाँ पुनर्निर्माण करने अयोध्या जा रही थी। उन्होंने आडवाणी को रोका गिरफ्तार किया और इन पर ध्यान दिया कि पूरे राज्ये में साम्प्रदायिक सौहार्द और शांति बरकरार रहे। इसे भी हमें नहीं भूलना चाहिए कि आडवाणी ने वी.पी. सिंह के मंडल कार्ड का उतर देने के लिए यह रथ यात्रा निकाली थी, ताकि उन्हे राम मंदिर के नाम पर उच्च जातियां और पिछड़ी जातियां के एक महत्वपूर्ण हिस्से का समर्थन प्राप्त हो सके। उस समय न ही वी.पी. सिंह को और ना ही जनता दल के पास अपना बहुमत था। पटना और दिल्ली दोनो स्थानो पर जनता दल की सरकार भाजपा के समर्थन पर ही निर्भर थी। उस समय जनता दल चन्द्रशेखर और देवीलाल के बीच बढ़ते मतभेद के कारण एक विकट आंतरिक संघर्ष का सामना कर रहा था। इस स्थिति में आडवाणी के विरूद्ध खड़े होने के लालू के इस प्रयास ने उन्हे मुस्लिम समाज के बीच लोकप्रिय बना दिया। इस निर्भिक प्रयास के द्वारा उन्होंने स्वयं अपनी सरकार का अस्तित्व खतरे में डाला। 30 अक्टूबर 1990 को 50000 से भी अधिक लोग कड़ी सुरक्षा के बावजूद विवादास्पद ढ़ाचे को नष्ट करने के लिए अयोध्या में जमा हो गए यह अभूतपूर्व स्थिति भारत ने आज तक इसके पहले कभी नहीं देखी थी। पुलिस ने गोली चलाना आरम्भ कर दिया, जिसमें 15 लोग मारे गए गये और देश के दूसरे हिस्सों में हुए साम्प्रदायिक तनाव में 37 लोग मारे गए, हालाकि बिहार पर इस साम्प्रदायिक अशांति का कोई प्रभाव नही पड़ा। आडवाणी की रथ यात्रा शुरू हुई लेकिन असली ट्विस्ट बाकी था, इधर आडवाणी रथ पर सवार थे और उधर बिहार के तत्कालीन मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव के दिलों-दिमाग में कुछ और ही चल रहा था, उन्होने बिहार में आडवाणी की रथ यात्रा रोकने की ठान ली थी और इसके लिए पूरा प्लान बना लिया गया, हालांकि आडवाणी के साथ काफी समर्थक थे, ऐसे में उस दौरान गिरफ्तारी के बाद बवाल होने की आशंका भी थी। ऐसे में लालू यादव ने इंतजार करना ठीक समझा। इसके बाद देर रात करीब दो बजे लालू यादव ने पत्रकार बनकर सर्किट हाउस मे फोन किया, ताकि यह पता लगाया जा सके कि आडवाणी के साथ कौन-कौन है। आडवाणी के सहयोगी ने था। सोमनाथ मंदिर से शुरू हुई आडवाणी की रथ यात्रा 30 अक्टूबर को अयोध्या पहुंचनी थी, लेकिन 23 अक्टूबर को बिहार में आडवाणी को गिरफ्तार कर लिया गया। आडवाणी की गिरफ्तारी के बाद केन्द्र की रियासत में भूचाल मच गया। भारतीय जनता पार्टी ने केन्द्र में सत्तासीन वी. पी. सिंह सरकार से समर्थन वापस ले लिया।

निष्कर्ष - साम्प्रदायिकता भारतीय राजनीति की एक दुखदायक और दुर्भाग्यपूर्ण वास्तविकता है। यह राजनीति को हानि पहुंचा रही है। साम्प्रदायिकता ने भारत के लोगों को अत्यन्त विचलित कर दिया है। भारतीय राजनेताओं को साम्प्रदायिक तत्व को समाप्त कर देना चाहिए। पढ़े-लिखे विशिष्ट वर्ग राजनीतिक नेताओं को साम्प्रदायिकता की न भावना रखनी चाहिए और न बात करनी चाहिए। भारतीय राजनीतिक दलों को पार्टी को शक्तिशाली बनाने तथा सत्ता प्राप्ति के लिए न साम्प्रदायिकता का प्रयोग करना चाहिए और न हीं साम्प्रदायिक दलों से गठबंधन करना चाहिए। मुसलमानों में पृथक्करण की भावना और

वोट बैंक की राजनीति नहीं होनी चाहिए। राजनीतिक दलों को मंन्दिर व मस्जिद का झगड़ा, रीति व रिवाज का अन्तर, हिन्दू व मुस्लमानों के बीच खाई का काम और साम्प्रदायवाद की भावना को दिखाकर व उकसाकर वोट बैंक की राजनीति नहीं करनी चाहिए। अन्त में आज भारत साम्प्रदायिकता के ढेर पर बैठा हुआ है, यदि इसे नहीं रोका गया तो भविष्य में इसके बहुत ही खतरनाक दुष्परिणाम होगें। जैसे–आपसी द्वेष, राजनीतिक अस्थिरता राष्ट्रीय एकता और अखण्डता को खतरा आदि।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. यू. आर. घई के. के. घई–भारतीय राजनीतिक व्यवस्था मनजीत सिंह न्यू एकेडमिक पब्लिशिंग कम्पनी, जालंधर 2005
2. डॉ अमिताभ अग्रवाल, डॉ स्मिता अग्रवाल– राजनीतिक समाजशास्त्र, नऐ क्षतिज ज्ञानदा प्रकाशन पी. एण्ड डी दरियागंज अंसारी रोड नई दिल्ली 2012
3. विपिन चंद्र – कम्युनलिज्म इन मार्डन इण्डिया
4. के. वी. कृष्णा – दि प्रोवलेम ऑफ माइनोरिटीज
5. कुल दीप नायर – साम्प्रदायिक दंगों की पृनरावृति
6. मॉरिस जीन्स – भारतीय शासन पद्धति पृ.190
7. राजस्थान पत्रिका
8. द हिन्दुस्तान टाइम्स 13 मई1990
9. अमर उज्जाला 1990
10. रोशनी की धार पटना 1990
11. लोकयत और लोक देवता, मुजफ्फरपुर 1986

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

अम्बेडकर का धर्म दर्शन विषयक विमर्श

• नरेन्द्र कुमार बौद्ध

सारांश - अम्बेडकर का धर्म से आशय दैवीय शासन या नियमन की आदर्श प्रयोजना के प्रतिपादन से है, जिसका लक्ष्य उस सामाजिक-व्यवस्था जिसमें लोग रहते हैं। आदिम युग में मानव को धर्म की कितनी जरूरत थी, उससे अधिक आज के वैज्ञानिक युग में मनुष्य को धर्म की जरूरत है। इसलिए अम्बेडकर धर्म का दार्शनिक स्वरूप प्रस्तुत करते हैं ताकि धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझा जा सके। अम्बेडकर के अनुसार किसी भी धर्म के दर्शन को परखने के लिए यही वास्तविक नियम है। एक तो यह नियम लोगों को मनुष्य के आचरण में क्या सही और क्या गलत है, यह परखने एवं दूसरे, नैतिक उत्तमता जिससे सृजित है, उसका स्वरूप वर्तमान धारणाओं के अनुरूप हो। यहाँ प्रश्न उठ सकता है कि इन दो प्रकार के नियमों में से कौन सा नियम नैतिक दृष्टि से श्रेष्ठ है। उत्तर यह है कि धर्म के दर्शन को परखने के लिये दैवी होने के साथ-साथ प्राकृतिक भी होने चाहिए धर्म के दर्शन का परीक्षण करने के लिए अम्बेडकर इन्हीं नियमों को स्वीकार करते हैं।

मुख्य शब्द - विमर्श, धर्म, मजहब, समाज

अम्बेडकर धर्म और मजहब में फर्क करते हैं। उन्होंने धर्म के नाम पर मजहब या पाखण्ड का विरोध किया। वे मजहब को वैयक्तिक मानते हैं, क्योंकि यह ईश्वर, आत्मा, प्रार्थना, पूजा, यज्ञ, बलि, अन्धविश्वास, कर्मकाण्ड तथा रहस्य पर आधारित है। साथ ही इनके परिपालन पर बल देता है। यह नैतिकता एवं लोकहित को महत्व नहीं देता है। धर्म सामाजिक व नैतिक है, जो बुद्धि को निर्मल, व्यवहार को संयमित व परिमार्जित करता है और व्यक्ति का चरित्र-निर्माण करता है। व्यक्ति क्या करता है, क्या नहीं करता, यह उसकी धार्मिक भावनाओं के ऊपर निर्भर है। धर्म मनुष्य में आशा का संचार करता है और उसे कर्म करने की प्रेरणा देता है। लेकिन अम्बेडकर धर्म को वैज्ञानिक आधार देना चाहते हैं। इसके लिए धर्म तभी सार्थक हो सकता है, जबकि वह विवेकसंगत, सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक हो जो सभी काल में सभी मानव जाति की सेवा करता हो, लोकहित में वृद्धि करता हो। इस प्रकार के धर्म को अम्बेडकर वास्तविक धर्म कहते हैं। इसीलिए वे धर्म को अपनाते हैं और धर्म की आवश्यकता एवं महत्ता को निरूपित करते हैं। अम्बेडकर का धर्म से आशय दैवीय शासन या नियमन की आदर्श प्रयोजना के प्रतिपादन से है, जिसका लक्ष्य उस सामाजिक-व्यवस्था जिसमें लोग रहते हैं। धर्म की विवेचना में दो बातें महत्वपूर्ण होती है। एक तो धर्म की आदर्श प्रयोजना का अध्ययन और दूसरे धर्म की आदर्श प्रयोजना के मूल्याँकन की कसौटी की विवेचना।

एक वर्ग जो विज्ञान के प्रभाव से आकर्षित है, सोचता है कि धर्म समाज के लिए आवश्यक नहीं है, दुनिया को धर्म की आवश्यकता नहीं है। धर्म एक त्रुटि है इसीलिए धर्म-परित्याग आवश्यक है। दूसरा वर्ग जो मार्क्सवादी शिक्षा से प्रभावित होकर धर्म को

• अतिथि व्याख्याता, दर्शनशास्त्र विभाग डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

अफीम समझता है–'ऐसी अफीम जो गरीब वर्ग को अमीरों की अधीनता और गरीबी में जीवन गुजारने को अभ्यस्त बनाती है इसीलिए दोनों वर्ग धर्म को त्याज्य मानते हैं।'[1] लेकिन अम्बेडकर जीवन तथा सामाजिक गतिविधियों को जारी रखने के लिए और आज की परिस्थितियों में धर्म की आवश्यकता को पहले से कहीं अधिक आवश्यक मानते हैं।[2] धर्म मानवता के लिए आवश्यक है यदि धर्म समाप्त होगा तो समाज भी समाप्त हो जायेगा। क्योंकि कोई भी सरकार मनुष्य को वह सुरक्षा और अनुशासन की छाया नहीं दे सकती जो नीति और धर्म से उसे मिलती है।

धर्म को महत्व देने से अम्बेडकर का यह तात्पर्य कतई नहीं है कि वे जीवन में आर्थिक पक्ष की अनदेखा करते हैं। धर्म का उपदेश देकर वे आर्थिक व सामाजिक अधिकारों के लिए उनके द्वारा किये जा रहे संघर्ष से उनका ध्यान हटाना नहीं चाहते थे। उनका मानना है कि जो भूखा, अपमानित है उसे धर्म के ऊँचे उपदेशों से क्या लेना–देना। उनकी दृष्टि में केवल पेट भरना, जीवित रहना या धन सम्पन्न होना ही काफी नहीं था। वे शरीर के साथ मन और मस्तिष्क का भी विकास आवश्यक मानते हैं। मन और मस्तिष्क का विकास शुद्ध विचारों से होता है, जिसका स्त्रोत धर्म है।[3] उनका मानना था धर्म व्यक्ति की रक्षा करता है, धर्म व्यक्ति का शोषण नहीं करता जो धर्म व्यक्ति का शोषण करता है, वह धर्म नहीं अधर्म है। क्योंकि धर्म व्यक्ति के लिए होता है न कि व्यक्ति धर्म के लिये। धर्म ही व्यक्ति के अस्तित्व एवं महत्व को स्वीकार करता है, उसके आध्यात्मिक एवं बौद्धिक विकास के लिए अनुकूल वातावरण का निर्माण करता है।

आदिम युग में मानव को धर्म की कितनी जरूरत थी, उससे अधिक आज के वैज्ञानिक युग में मनुष्य को धर्म की जरूरत है। हिन्दू समाज में चातुर्वर्ण–व्यवस्था, कर्म और पुनर्जन्म के सिद्धान्तों के चलते दलितों के दिमाग में यह बात घर कर गई थी कि दरिद्रता और दासता उनकी भवितव्यता है। उनमें जीवन के प्रति उत्साह नहीं निराशा थी। जिनके लिये जीवन ही बोझ हो उन्हें कार्य के लिए, उन्नत जीवन हेतु संघर्ष करने के लिए प्रेरित और उन्नत कैसे किया जाये? यह अम्बेडकर के सम्मुख एक समस्या थी, जिसका निदान करना उनके लिये आवश्यक था। वे जानते थे कि निर्धन, निरीह और निराश लोगों के जीवन का एकमात्र सहारा धर्म ही है। धर्म से ही उन्हें कार्य करने की और जीवन में संघर्ष कर अपना जीवन उन्नत बनाने की प्रेरणा मिलती है। इसलिए अम्बेडकर धर्म का दार्शनिक स्वरूप प्रस्तुत करते हैं ताकि धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझा जा सके।

धर्म दर्शन क्या है? यह ऐसा प्रश्न है, जो अपनी तार्किक विचारों की श्रृंखला में उत्पन्न होता है। इसकी तार्किक श्रृंखला के अलावा भी इसका इतना महत्व है कि इसके बिना किसी धर्म के उद्देश्यों और आदर्शों को समझा भी नहीं जा सकता। इसलिए सर्वप्रथम विषय की पृष्ठभूमि को स्पष्ट करना साथ ही उससे सम्बन्धित शब्दावली को परिभाषित करना भी बहुत आवश्यक है। धर्म दर्शन का अर्थ स्पष्ट नहीं है क्योंकि धर्म एक सीमा तक निश्चित है लेकिन दर्शन में किन–किन बातों का समावेश किया जाए, यह निश्चित नहीं। दर्शन और धर्म परस्पर दोनों में विरोध की अपेक्षा प्रतिस्पर्धा तो है।

अध्यात्मवादी दार्शनिक पर यह दोषारोपण करते हुए कहता है कि वह एक अंधे पुरूष की तरह है, जो अंधेरे कमरे में एक काली बिल्ली को खोज रहा है, जो कि वहाँ है ही नहीं। इसकी प्रतिक्रियास्वरूप दर्शनशास्त्री अध्यात्मवादी पर आरोप लगाते हुए कहता है कि

वह 'एक ऐसे अंधे व्यक्ति की तरह है, जो अंधेरे कमरे में एक काली बिल्ली को खोज रहा है। जबकि कमरे में बिल्ली का कोई अस्तित्व है ही नहीं, और भी वह उसे पा लेने की घोषणा करता है। इससे धर्म के दर्शन का अर्थ स्पष्ट नहीं हो रहा।

प्रोफेसर प्रिंगले-पेटीसन ने धर्म दर्शन का अर्थ बुद्धिमत्तापूर्ण व्यक्त किया है, प्रोफ़ेसर प्रिंगले के अनुसार 'सामान्यतः बहुत पहले दार्शनिक प्लेटो (अफलातून) ने दर्शन को किसी विषय पर विहंगम दृष्टि डालना कहा था।' दूसरे शब्दों में दर्शन संसार के सभी प्रमुख रूपों के सन्दर्भ में समग्र और सम्पूर्ण विश्व का अंशमात्र होते हुए उन मुख्य लक्षणों को उनके परस्पर सम्बम्धों के अर्थ में समझने का एक प्रयास है।

विद्वान टीले ने कहा है, "सभ्य तथा असभ्य संसार के सभी मृत और सजीव धर्म अपने सभी अभिव्यक्त रूपों में एक ऐतिहासिक तथा मनोवैज्ञानिक तत्त्व हैं। जिन तत्त्वों के साथ धर्म के दर्शन का संबंध है उनकी सम्पूर्ति अत्यन्त बोधगम्य अर्थ में धर्म के इतिहास से होती है। ऐतिहासिक घटनाएँ धर्म के दर्शन का आधार तो बनती है तो लेकिन स्वयं दर्शन या धर्म का विज्ञान नहीं बनती। ऐतिहासिक जानकारी चाहे कितनी भी पूर्ण एवं सटीक हो, पर्याप्त नहीं होती, क्योंकि इतिहास दर्शन नहीं है। उनके अनुसार धर्म का दर्शन निश्चित करने के लिए धर्म के विभिन्न रूपों में जो समान तत्त्व हैं, जिसकी जड़ हम मानव-स्वभाव में देख सकते हैं, उसे जानना आवश्यक है। ऐसे तत्त्व का विकास उसके सम्पूर्ण रूपों में और उसके विकास की समग्र अवस्थाओं द्वारा जाना जा सकता है। उसके साथ ही मानव सभ्यता के मुख्य तत्वों से उनके जो गहरे सम्बन्ध है, उन्हें भी जाना जा सकता है।'[4]

यदि इसे ही धर्म का दर्शन समझा जाए, तब धर्म के विभिन्न रूपों में जो समान तत्व हैं, उसे जाना जाए। 'दर्शन' शब्द का उसके मूल अर्थ में जिसके दो अर्थ हैं-पहला अर्थ है उपदेश, जैसा कि लोग सुकरात और प्लेटों के दर्शन के बारे में करते हैं। दूसरे अर्थ में, इसका तात्पर्य है किसी भी विषय तथा घटना पर निर्णय देते समय सूक्ष्म विवेक बुद्धि का प्रयोग करना। इस आधार पर अम्बेडकर के धर्म का दर्शन केवल वर्णनात्मक शास्त्र नहीं है। वे वर्णनात्मक और नियमबद्ध शास्त्र धर्म के दर्शन को दोनों मानते हैं। जहाँ तक उसका धर्म के उपदेश के साथ सम्बन्ध है, धर्म का दर्शन केवल वर्णनात्मक शास्त्र बनता है। परन्तु जब उसका सम्बन्ध उन उपदेशों पर निर्णय लेने के लिए सूक्ष्म विवेक बुद्धि का उपयोग करने से होता है, तब धर्म का दर्शन एक नियमबद्ध शास्त्र बनता है। धर्म के दर्शन के अध्ययन से अम्बेडकर का सम्बन्ध किन बातों से है। स्पष्टतः अम्बेडकर हिन्दू धर्म का विश्लेषण जीवन शैली के रूप में उसमें छिपे महत्व को निर्धारित करने के रूप में करते हैं। अम्बेडकर के विचार में धर्म के दर्शन के अध्ययन में तीन आयामों का होना आवश्यक है। अम्बेडकर के अनुसार धर्म क्या है ? यह जानने के लिये धर्म के दर्शन का अनुशीलन जरूरी है।

1. धर्म क्या है? अर्थात् धर्म की संकल्पना क्या है, उसका दर्शन क्या है?[5]
2. किसी धर्म की आदर्श प्रयोजना क्या है? अर्थात् किसी धर्म की कार्य-पद्धति जिसके माध्यम से कार्यरूप देने के लिए वह अस्तित्वमान है।[6]
3. धर्म में ईश्वरीय शासन की आदर्श प्रयोजना, जिसको कार्यरूप प्रदान करने के लिए कोई धर्म खड़ा होता है, के मूल्याँकन की कसौटी क्या है?[7]

धर्म की संकल्पना - अम्बेडकर बाल गंगाधर की इस परिभाषा से सहमत हैं कि, "धर्म वह है जो लोगों को एकता के सूत्र में बाँधकर रखता है।"[8] इस सन्दर्भ में अम्बेडकर समान आस्था की तुलना में सामान्य धार्मिक नियमों जो व्यक्तियों के व्यवहारों का नियमन

करते हैं, को अधिक महत्व देते हैं। उनका मानना है कि इन नियमों की प्रकृति पर ही सामाजिक एकता की प्रकृति निर्भर करती है। जैसे कोई धर्म व्यक्ति की जगह समूह को इकाई मानता है और उसके नियम विभिन्न समूहों के कार्य एवं उनमें आदान-प्रदान को ही परिभाषित करते हैं तो उस धार्मिक समूह में एकता का स्वरूप उस धर्म के स्वरूप की अपेक्षा उससे भिन्न होगा जो व्यक्ति को महत्व देता है। जिसके नियम व्यक्ति के कार्यों तथा व्यक्ति और व्यक्ति के बीच सम्बन्धों का निर्धारण करते हैं।

धर्म की आदर्श प्रयोजना - धर्म के सम्बन्ध में दूसरी महत्वपूर्ण बात यह जानना आवश्यक है कि धर्म का प्रयोजन क्या है? प्रत्येक धर्म में किसी न किसी प्रकार की आदर्श प्रयोजना होती है, जिसे सामान्यतया दैवीय शासन योजना के रूप में प्रस्तुत किया गया होता है। धर्म का अस्तित्व मुख्यतया उसमें प्रतिपादित आदर्श प्रयोजना की रक्षा (धर्म की रक्षा) व पोषण करने के लिए होता है।

किसी धर्म की आदर्श प्रयोजना उसके धर्मग्रन्थों में वर्णित की गई होती है। धर्म के सामाजिक, नैतिक आचार, सिद्धान्त एवं नियम धर्मावलम्बियों के सामाजिक, धार्मिक एवं संस्कारात्मक व्यावहारों को नियमित करते हैं। सामान्यतया धर्मों में यह दावा अथवा विश्वास किया जाता है कि धर्मग्रन्थ ईश्वर-प्रणीत अथवा ईश्वरीय-शक्ति से विभूषित मानव द्वारा प्रणीत हैं। उनमें जिन सिद्धान्तों, नियमों एवं आदर्शों का प्रतिपादन किया गया है, वे भी ईश्वरीय हैं। उन सिद्धान्तों एवं नियमों के आधार पर जिस आदर्श-व्यवस्था की रचना की गई है वह भी ईश्वरीय या दैवीय है। उदाहरणस्वरूप ईसाई धर्म में बाइबिल, इस्लाम में कुरान एवं हदीस, बौद्ध धर्म में विनयपिटक, धम्मपद आदि। हिन्दू धर्म में वेद, गीता व स्मृतियाँ धार्मिक या ईश्वरीय संहिता है। जिनमें उन नियमों का प्रतिपादन किया गया है जो उन धर्मावलम्बियों के धार्मिक, संस्कारात्मक एवं सामाजिक जीवन को नियंत्रित करते हैं।

आदर्श प्रयोजना के मूल्याँकन की कसौटी - धर्म की आदर्श प्रयोजना जिसकी वह वकालत करता है और जिसकी स्थापना, प्रसार-प्रचार के लिए वह अस्तित्व में होता है, के मूल्याँकन की कसौटी के अन्तर्गत दैवीय शासन-व्यवस्था सम्बन्धी धर्म की योजना में क्रांति के अध्ययन का उद्देश्य मुख्यतः उन नियमों या मापदण्डों का पता लगाना है जिसके आधार पर सही और गलत का निर्णय किया जाता है। अतः प्राचीन समाज एवं आधुनिक समाज ने अपने-अपने धार्मिक आदर्श के रूप में दैवीय शासन की जिन व्यवस्थाओं को अपनाया है, उनमें भिन्नता है। प्राचीन समाज में अपनाये गये धार्मिक आदर्श का लक्ष्य समाज या समुदाय रहा है जबकि आधुनिक समाज में व्यक्ति हो गया। ऐसा भी कहा जा सकता है कि प्राचीन समाज में सही-गलत के निर्णय की पहचान उपयोगिता के आधार पर की जाती थी क्योंकि नैतिक दृष्टि से अच्छा वही था जिसकी उपयोगिता हो। जबकि आधुनिक समाज में सही-गलत के निर्णय की पहचान न्याय के आधार की जाने लगी। क्योंकि आधुनिक समाज का लक्ष्य व्यक्ति हो गया इसलिए नैतिक दृष्टि से वही चीज अच्छी हो सकती है जो व्यक्ति के साथ न्याय करती हो।

इस सन्दर्भ में अम्बेडकर धर्म में होने वाले क्रांतिकारी परिवर्तनों के अध्ययन को महत्वपूर्ण निरूपित करते हैं। आरम्भिक काल में ज्ञान की सभी शाखाएँ धर्म में समाहित थीं और यह विश्वास किया जाता था कि धार्मिक ज्ञान पवित्र, सत्य एवं अकाट्य है। जैसे चिकित्सा के सम्बन्ध में धार्मिक दृष्टिकोण था कि व्याधियाँ या व्यक्ति के पापों के लिए

ईश्वरीय-दण्ड है। व्यक्ति के शरीर में बुरी आत्माओं के प्रवेश या प्रभाव के कारण बीमारियाँ आदि उत्पन्न हुईं हैं, परिणामस्वरूप इनका निदान ईश्वर-पूजा या आराधना करने अथवा सन्त पुरूषों का आशीर्वाद प्राप्त करने अथवा शरीर से बुरी आत्माओं के स्वतः निकलने या उनको दूर करने से हो सकता है। धर्म ने शरीरविज्ञान और मनोविज्ञान को भी अपने दायरे में समेटने का दावा किया और प्रतिपादित किया कि शरीर और आत्मा दो भिन्न वस्तुएँ हैं।

मानव का खगोलशास्त्रीय-ज्ञान भी धार्मिक चिन्तन का अंग था और यह विश्वास किया जाता था कि पृथ्वी ब्रह्मण्ड के केन्द्र में स्थित है। पृथ्वी स्थिर है, सूर्य, चन्द्रमा तथा अन्य ग्रह और नक्षत्र पृथ्वी के चारों ओर घूमते हैं। भूगर्भशास्त्र एवं जीवशास्त्र के बारे में धर्म में यह प्रतिपादित किया गया कि पृथ्वी पर समस्त वस्तुओं, जीवों, वनस्पतियों आदि की रचना एक समय में हुई और पृथ्वी पर ये वस्तुएँ तभी से विद्यमान हैं। धीरे-धीरे धार्मिक ज्ञान का क्षेत्र संकुचित होता गया और धर्म की सत्ता सिमट गई। कॉपरनिकस के क्रांतिकारी चिन्तन के फलस्वरूप खगोलशास्त्र धर्म के दायरे से मुक्त हो गया। डार्विन के उद्विकास (विकासवाद) के सिद्धान्त के प्रतिपादन के परिणामस्वरूप जीवन विज्ञान और भूगर्भ विज्ञान भी धर्म की अधीनता से मुक्त हुये। औषधविज्ञान और मनोविज्ञान भी धर्म के प्रभाव से अब पूर्णतया मुक्त हैं। कॉपरनिकस एवं डार्विन के वैज्ञानिक सिद्धान्तों के प्रतिपादन के फलस्वरूप भौतिक ज्ञान के साथ सामाजिक ज्ञान के विविध क्षेत्रों में भी धर्म की सत्ता ध्वस्त हो चुकी है। चिन्तन के क्षेत्र में धर्म की प्रभुता का नष्ट होना एक बहुत बड़ी क्रांति थी, जो विज्ञान के द्वारा लाई गई। विज्ञान को धर्मशास्त्रीय स्थापनाओं के विरूद्ध क्रांति लाने में कई सौ वर्षों तक संघर्ष करना पड़ा और अन्ततः विज्ञान विजयी रहा।

इस वैज्ञानिक क्रांति के फलस्वरूप स्वतंत्र चिन्तन का उद्‌भव हुआ जिसने समाज को अन्धविश्वास, रहस्यवाद तथा दैवीय भय से मुक्त किया। स्वतंत्र चिन्तन एवं स्वयं के प्रयासों के माध्यम से व्यक्ति की आत्मोन्नति तथा समाज की प्रगति का मार्ग प्रशस्त हुआ। संस्कृति से भिन्न सभ्यता के विकास को सम्भव बनाने में लौकिकीकरण की प्रक्रिया का स्वागत न केवल वैज्ञानिकों अपितु धार्मिक प्रवृत्ति के लोगों द्वारा भी किया गया। समाज में अप्रासंगिक धार्मिक बातों को अस्वीकृत किया जाने लगा जिसके परिणामस्वरूप सभ्यता के विकास को बल मिला। इस क्रांति ने धर्म को विशेष रूप से उसके चिन्तन के क्षेत्र एवं सत्ता को प्रभावित किया। अतः किसी धर्म के दर्शन को जाँचने का मापदण्ड क्या हो? यह जानने के लिए धर्म के क्षेत्र में होने वाली एक दूसरे प्रकार की क्रांति को समझना पड़ेगा। इस क्रांति का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू जिसमें मुख्य रूप से तीन तरह के सम्बन्ध-ईश्वर और व्यक्ति के बीच सम्बन्ध, समाज और व्यक्ति के मध्य सम्बन्ध, और व्यक्ति और व्यक्ति के बीच सम्बन्ध की अवधारणाओं की प्रकृति व अन्तर्वस्तु से सम्बन्धित है। इस क्रांति की प्रकृति व महत्ता बर्बर एवं सभ्य समाज के धर्मों के मध्य अन्तर के माध्यम से समझ सकते हैं।

बर्बर या असभ्य समाज के धर्म में मुख्यरूप से हमें दो बातें देखने को मिलती हैं, पहली इस समाज में अनेक प्रकार के संस्कार व कर्मकाण्ड सम्पन्न होते हैं। जादू-टोना में विश्वास करते हैं, निषेधों का पालन करते हैं, टोटम व जड़ देवता की पूजा-अर्चना करते हैं। सामान्यतया संस्कार, कर्मकाण्ड या जादू-टोना किन्हीं विशेष अवसरों जैसे-जन्म के समय परिवार में संतान उत्पन्न होने पर, किशोरावस्था में पहुँचने पर, विवाह, बीमारी, मृत्यु अथवा युद्ध के अवसर पर सम्पन्न किया जाता है। अर्थात् बर्बर समाज में धर्म का सम्बन्ध जीवन-अस्तित्व से है। दूसरी जीवन-मृत्यु, जन्म-विवाह आदि जीवन-अस्तित्व से जुड़ी

घटनायें धर्म के आधारभूत तत्व हैं। जादू, टोटम, देवी-देवता एवं निषेध आदि इनके जीवन का लक्ष्य नहीं हैं। इनका लक्ष्य तो जीवन तथा जीवन की रक्षा है। जादू-टोना, निषेध आदि तो बर्बर समाज में बुरे प्रभावों से जीवन की सुरक्षा के लिए अपनाये जाने वाले साधन हैं। दूसरे शब्दों में बर्बर समाज में धर्म का सम्बन्ध मुख्यरूप से जीवन या जीवन को बनाये रखने के प्रश्न से जुड़ा है। जीवन-प्रक्रिया ही इस समाज में धर्म का प्रमुख तत्त्व एवं स्त्रोत है।

(1) प्राचीन समाज में ईश्वर और व्यक्ति सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक सम्पूर्णता के अंग के रूप में हैं। धर्म ईश्वर और उसके अनुयाइयों के बीच नातेदारी सम्बन्ध पर आधारित होता है। आधुनिक समाज में अपनी रचना से ईश्वर का निरसन कर दिया है यह केवल व्यक्तियों से ही रचित है।

(2) प्राचीन एवं आधुनिक समाजों के धर्मों में दूसरा महत्वपूर्ण अन्तर यह है कि प्राचीन समाज में ईश्वर किसी एक समुदाय का होता है अर्थात् किसी एक ईश्वर से कोई एक समाज (कबीला) जुड़ा होता है। इसलिए प्राचीन समाजों में सार्वभौमिक ईश्वर की कल्पना नहीं की गई और न ही उनमें सामान्य मानवीयता का विचार था।

(3) प्राचीन समाज के धर्म में ईश्वर की कल्पना पिता या पालक के रूप में की गई। ईश्वर अपने अनुयाईयों के पिता के रूप में मानव रूप में स्थापित था। इसलिए उसमें सभी गुण और अच्छाईयाँ हों यह आवश्यक नहीं था आधुनिक समाज में धर्म में ईश्वरीय पितृत्व का अभाव पाया जाता है। ईश्वर की कल्पना मानवीय व्यक्ति के रूप में नहीं वरन् एक छवि के रूप में की गई है जिसमें सभी गुण और अच्छाईयाँ होती हैं। उसे सर्वशक्तिमान सर्वव्यापक स्थापित किया गया है।

(4) प्राचीन और आधुनिक समाजों के धर्मों में चौथा अन्तर यह है कि प्राचीन समाज के धर्म में परिवर्तन का अर्थ राष्ट्रीयता में परिवर्तन होता था। जबकि सामाजिक एकजुटता का अर्थ धार्मिक एकजुटता होता था। आधुनिक समाज में एक धर्म के परित्याग अथवा दूसरे धर्म के स्वीकार किये जाने से सामाजिक एकजुटता प्रभावित नहीं होती। कोई व्यक्ति दूसरे राज्य का नागरिक होकर उस राज्य के अन्य नागरिकों के साथ एकजुट हो सकता है। किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि यह धार्मिक रूप से भी उनके साथ एकजुट हो। इस प्रकार किसी आधुनिक समाज में व्यक्ति भिन्न-भिन्न ईश्वरों के उपासक हो सकते हैं।

(5) प्राचीन समाज में ज्ञान का सम्बन्ध धार्मिक ज्ञान से था अर्थात् उन नियमों एवं विधाओं के ज्ञान से जो ईश्वर द्वारा मनुष्य के पालन हेतु निर्धारित थे। मनुष्य से अपेक्षा की जाती थी कि वह उन नियमों का श्रृद्धापूर्वक पालन करे। प्राचीन समाज में यहाँ तक विश्वास किया जाता था कि ईश्वर से डरो, उसके आदेशों का पालन करो और उन पर प्रश्न या चिन्तन करने का प्रयास मत करो। अर्थात् ईश्वरीय चिन्तन करने की मनाही थी। आधुनिक समाज में ईश्वर से सम्बन्धित चिन्तन मनन के लिये मर्यादित सीमा में खुला-मंच या स्वतंत्रता प्राप्त हो गई और ईश्वरीय आदेशों का पालन नैतिकता पर आधारित हो गये।

(6) प्राचीन धर्म वस्तुत - परम्परागत रीतियों, संस्कारों व कार्य चलन का संग्रह था, न कि विश्वासों की व्यवस्था। व्यक्ति कोई कार्य पूर्ण उद्धरणों अथवा परम्परात्मक रीतियों को दृष्टिगत रखते हुए करता था, न कि किसी तर्क या कार्य-कारण के आधार पर। प्राचीन समाज में पहले तार्किक औचित्य को ध्यान में रखकर कार्य-रीति नहीं बनाई जाती थी वरन् इसके विपरीत कार्य-चलन पहले तय होता था और उससे सम्बन्धित सिद्धान्त बाद में बनते थे। इसका अर्थ यह हुआ कि प्राचीन समाज में आचरण के नियम चलन में पहले आये थे

और उनसे सम्बन्धित सिद्धान्त बाद में। यही कारण है कि प्राचीन समाज में राजनैतिक व धार्मिक संस्थायें पहले बनीं और उनसे सम्बन्धित सिद्धान्तों का प्रतिपादन बाद में हुआ।

(7) प्राचीन समाज एवं आधुनिक समाज में वैयक्तिक विश्वास से सम्बन्धित है। प्राचीन समाज में व्यक्ति जिस धर्म में पैदा होता था वह अपने जीवन में चेतन या अचेतन रूप से उसके रीति-रिवाजों, नियमों एवं विश्वासों को अपनाता था और अपना जीवन भी इनके अनुरूप ढालता था। ईश्वर और उसकी उपासना को बिना किसी तर्क के स्वीकार करता था। आधुनिक समाज में व्यक्ति के लिये धर्म वैयक्तिक विश्वास की वस्तु हो गया, जिसे वे तार्किक औचित्य के आधार पर स्वीकार करते हैं। जबकि प्राचीन समाज में धर्म लोगों के लिए नागरिक जीवन का हिस्सा था। जिसका एक निश्चित स्वरूप था जिसे जानने व समझने के लिये न तो वे बाध्य थे और न ही उसकी आलोचना या अवहेलना अथवा समीक्षा करने की उन्हें स्वतंत्रता थी। वे तो केवल उसका (धर्म) पालन ही करते हैं।

(8) प्राचीन समाज में ईश्वर से अच्छा वातावरण, मौसम, अधिक पैदावार, पशु-धन में वृद्धि, शत्रुओं के विरूद्ध सहायता तथा युद्ध में विजय आदि की कामना की जाती थी। अर्थात् ईश्वर से सार्वजनिक लाभ की प्रार्थना की जाती थी क्योंकि समूह को लाभ होने की स्थिति में व्यक्ति के कष्ट से ईश्वरीय व्यवस्था किसी तरह से प्रभावित नहीं होती थी। इसके विपरीत व्यक्ति के कष्ट को उसके बुरे कर्मों या ईश्वरीय प्रकोप का परिणाम माना जाता था। अतः धर्म वैयक्तिक नहीं सामाजिक विषय था। व्यक्ति निजी लाभ के लिये भी ईश्वर की आराधना करता था किन्तु इस रूप में ईश्वर भले ही किसी पर विशेष अनुग्रह कर दे किन्तु समुदाय के स्वामी के रूप में यह उसके असली कार्य का हिस्सा नहीं माना जाता था। ईश्वर व्यक्ति के नागरिक जीवन का लेखा-जोखा रखता है और उसे सार्वजनिक लाभ का हिस्सा भी देता था किन्तु वह व्यक्ति की सभी निजी आवश्यकताओं में मदद करेगा यह जरूरी नहीं था। इसके अतिरिक्त प्राचीन समाज का व्यक्ति, व्यक्ति तथा समाज एवं व्यक्ति के बीच किसी प्रकार के विवाद से ईश्वर को कोई सरोकार नहीं था। ईश्वर को विवादों से पृथक रखा जाता था लेकिन विवाद की स्थिति में ईश्वर को न्याय करते समय उसे साक्षी अवश्य बनाया जाता था।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि समाज में दो प्रकार की धार्मिक क्रांति हुईं एक थी-बाह्य क्रांति और दूसरी आन्तरिक क्रांति। बाह्य क्रांति धर्म में मानव समाज के दैवीय नियमन व्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों से सम्बन्ध थी। वस्तुतः बाह्य परिवर्तन एक धार्मिक क्रांति नहीं वरन् अनाधिकृत क्षेत्रों में धर्म के प्रभाव के विरूद्ध विज्ञान का विद्रोह था। आन्तरिक क्रांति ही वस्तुतः धार्मिक क्रांति थी जिससे समाज की दैवीय नियमन-व्यवस्था में परिवर्तन, संशोधन और पुनर्रचना हुई।

अम्बेडकर के अनुसार किसी भी धर्म के दर्शन को परखने के लिए यही वास्तविक नियम है। एक तो यह नियम लोगों को मनुष्य के आचरण में क्या सही और क्या गलत है, यह परखने एवं दूसरे, नैतिक उत्तमता जिससे सृजित है, उसका स्वरूप वर्तमान धारणाओं के अनुरूप हो। ये नियम हमें परखने की योग्यता देते हैं। जिस समाज ने उनको स्वीकार किया है, यह नियम उसके अनुरूप ही हैं क्योंकि वहाँ लक्ष्य था। समाज और सामाजिक उपयुक्तता को ही नैतिक आचरण माना जाता रहा। न्याय, यह कसौटी आधुनिक समाज के अनुरूप है, जिसमें व्यक्ति को लक्ष्य माना गया है और उस व्यक्ति को न्याय मिले, इसे ही नैतिक उत्तमता माना गया है। यहाँ प्रश्न उठ सकता है कि इन दो प्रकार के नियमों में से कौन सा नियम

नैतिक दृष्टि से श्रेष्ठ है। उत्तर यह है कि धर्म के दर्शन को परखने के लिये दैवी होने के साथ-साथ प्राकृतिक भी होने चाहिए, हिन्दू धर्म के दर्शन का परीक्षण करने के लिए अम्बेड़कर इन्हीं नियमों को स्वीकार करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूँची -

1. विकल्प की तलाश : बुद्ध से लेकर अम्बेडकर तक, रामगोपाल सिंह, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 2008, पृ. 23
2. डॉ. अम्बेडकर : सामाजिक न्याय एवं परिवर्तन, रामगोपाल सिंह, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 2006, पृ. 44
3. भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, आनन्द कौसल्यायन (अनुदित), सिद्धार्थ प्रकाशन, बम्बई, 1989, पृ. 264
4. अम्बेडकर का विचार दर्शन, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 2002, पृ. 243
5. डॉ. अम्बेडकर : एक चिन्तन (मस्तराम कपूर अनुदित), मधु लिमये, सरदार वल्लभ भाई पटेल एजुकेशन सोसायटी, नई दिल्ली, 1980, पृ. 164
6. धर्मशास्त्र का इतिहास, प्रथम- भाग, महामहोपाध्याय डॉ. पाण्डुरंग वामन काणे, अनुवादक : अर्जुन चौबे काश्यप, हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उत्तरप्रदेश, लखनऊ, पृ. 184
7. वही
8. विकल्प की तलाश : बुद्ध से लेकर अम्बेडकर तक, रामगोपाल सिंह, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 2008, पृ. 23
9. डॉ. अम्बेडकर : सामाजिक न्याय एवं परिवर्तन, रामगोपाल सिंह, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 2006, पृ. 44
10. भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, आनन्द कौसल्यायन (अनुदित), सिद्धार्थ प्रकाशन, बम्बई, 1989, पृ. 264
11. अम्बेडकर का विचार दर्शन, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 2002, पृ. 243
12. डॉ. अम्बेडकर : एक चिन्तन (मस्तराम कपूर अनुदित), मधु लिमये, सरदार वल्लभ भाई पटेल एजुकेशन सोसायटी, नई दिल्ली, 1980, पृ. 164
13. विकल्प की तलाश : बुद्ध से लेकर अम्बेडकर तक, रामगोपाल सिंह, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 2008, पृ. 23
14. डॉ. अम्बेडकर : सामाजिक न्याय एवं परिवर्तन, रामगोपाल सिंह, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 2006, पृ. 44
15. भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, आनन्द कौसल्यायन (अनुदित), सिद्धार्थ प्रकाशन, बम्बई, 1989, पृ. 264
16. अम्बेडकर का विचार दर्शन, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 2002, पृ. 243
17. डॉ. अम्बेडकर : एक चिन्तन (मस्तराम कपूर अनुदित), मधु लिमये, सरदार

वल्लभ भाई पटेल एजुकेशन सोसायटी, नई दिल्ली, 1980, पृ. 164

18. धर्मशास्त्र का इतिहास, प्रथम- भाग, महामहोपाध्याय डॉ. पाण्डुरंग वामन काणे, अनुवादक : अर्जुन चौबे काश्यप, हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उत्तरप्रदेश, लखनऊ, पृ. 184
19. वही,
20. वही,
21. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाङ्मय, 6, पृ. 22
22. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाङ्मय, 6, पृ. 24
23. विकल्प की तलाश : बुद्ध से लेकर अम्बेडकर तक, रामगोपाल सिंह, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 2008, पृ. 23
24. डॉ. अम्बेडकर : सामाजिक न्याय एवं परिवर्तन, रामगोपाल सिंह, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 2006, पृ. 44
25. भगवान् बुद्ध और उनका धर्म, आनन्द कौसल्यायन (अनुदित), सिद्धार्थ प्रकाशन, बम्बई, 1989, पृ. 264
26. अम्बेडकर का विचार दर्शन, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 2002, पृ. 243
27. डॉ. अम्बेडकर : एक चिन्तन (मस्तराम कपूर अनुदित), मधु लिमये, सरदार वल्लभ भाई पटेल एजुकेशन सोसायटी, नई दिल्ली, 1980, पृ. 164
28. धर्मशास्त्र का इतिहास, प्रथम- भाग, महामहोपाध्याय डॉ. पाण्डुरंग वामन काणे, अनुवादक : अर्जुन चौबे काश्यप, हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उत्तरप्रदेश, लखनऊ, पृ. 184
29. वही,
30. वही,
31. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाङ्मय, 6, पृ. 22
32. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाङ्मय, 6, पृ. 24

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

प्राचीन भारतीय इतिहास में दूत द्वारा किये गये कार्यों का अध्ययन

• संतोष कुमार 'सुमन'

सारांश – प्राचीन भारतीय इतिहास में अंतर्राज्यीय संबंधों के संचालन में दूत की महत्वपूर्ण भूमिका होती थी। वह दो राज्यों के बीच मध्यस्थता का कार्य करता था। शत्रु और मित्र दोनों ही प्रकार के राज्यों में जाकर वह अपने राजा के हितों के अनुसार कार्य करता था। संधि और विग्रह का कार्य उनके द्वारा ही सम्पन्न होता था। संदेश पहुंचाने, राजा के उद्देश्यों का पता करना, नीति के उपायों को कार्य रूप देना दूत के मुख्य कार्य थे। दूत के द्वारा जो कार्य सम्पन्न करवाया जाता था वे प्रिय और अप्रिय दोनों प्रकार के होते थे। अप्रिय संदेशों को सुनकर किसी भी राजा अथवा राजकीय पदाधिकारी के आवेशित तथा क्रोधित होने का भय सदैव सम्भावित होता था, ऐसी परिस्थिति में दूत की सुरक्षा के लिए अनेक विशेषाधिकारों की व्यवस्था की गई जिससे निश्चित होकर वह अपना अभीष्ट कार्य सम्पन्न कर सके। प्रस्तुत शोध आलेख में प्राचीन भारतीय इतिहास में दूतों द्वारा किये गये कार्यों पर प्रकाश डाला गया है।

मुख्य शब्द - संदेश, शासक, संदेशवाहक, दूत, कार्य, निमंत्रण, संधि, विग्रह

दूत के कार्यों में प्रमुख कार्य संदेश का पहुंचाना माना गया है। ऋग्वेद के मंत्रों में दूत से संदेशवाहक के कार्य की अपेक्षा की गई है एक मंत्र में अग्नि (दूत) से देवताओं को बुला लाने हेतु प्रार्थना की गई है।[1]इस मंत्र में अग्नि (दूत) से संदेशवाहक का कार्य करवाया गया है। एक अन्य मंत्र में अग्नि (दूत) से देवताओं को बुलवाया गया है और कहलवाया गया कि देवताओं को मेरी याचना का संदेश पहुंचा दें।[2] उसे देवताओं को बुलाने वाला भी कहा गया है। इस प्रकार प्रतीत होता है कि पृथ्वी पर निवास करने वाले अग्नि (दूत) के द्वारा अपना संदेश देवताओं तक पहुचवाते थे और उसी के द्वारा देवताओं को बुलाने के लिए निमंत्रण भी देते थे। देवताओं के संदेश पृथ्वी तक लाने का कार्य भी करते थे इसलिए उन्हें यजमान के दूत, मानव के दूत, देवी के दूत और देवदूत कहा गया है।[3]

अथर्ववेद में भी अग्नि (दूत) से प्रार्थना की गई है कि 'हे श्रेष्ठ स्थान में रहने वाले, शरीर को संयम करने वाले अग्नि तू तुले हुये घी आदि का प्राशान कर दुष्टों को रूला।[4]एक अन्य मंत्र में कहा गया है कि 'हे ज्ञानी, हमारे कार्यों को प्रारंभ कर, तू हमारे प्रयोजनों के लिए उत्पन्न हुआ है, तू हमारा दूत बनकर यातुध्नों को रूला। इन मंत्रों में अग्नि से प्रार्थना की गई है कि वह दूत कार्य में संलग्न होकर दुष्टों का नाश करें।[5]एक अन्य मंत्र में कहा गया है कि 'भेजा हुआ कपोत हमारे लिए कल्याणकारी हो। यह हमारे घर के लिए शुभ-सूचक हो। हमारे गाँवों और मनुष्य के लिए कल्याणकारी हो। हे देव, यह कपोत यहां पर हमारी हिंसा न करें।' इस मंत्र के बारे में श्री सातवलेकर का विचार है कि कबूतर दूर देश से संदेश लाने का कार्य करता है।[6]यह हानिकारक संदेश न लायें शुभ संदेश लाये। इससे परिलक्षित होता है कि कपोत

• शोधार्थी, इतिहास विभाग, बी.एन.एम.यू.,मधेपुरा (बिहार)

अर्थात् कबूतर से संदेशवाहक का कार्य लिये जाते थे।

रामायण में भी दूत द्वारा संदेशवाहक का कार्य लिया जाता था। दूत को संदेश के साथ निमंत्रण देने के कार्य की अपेक्षा की जाती थी। एक प्रसंग में कहा गया है कि विश्वामित्र की आज्ञा प्राप्त कर राजा जनक ने राजा दशरथ के पास दूत भेजकर सीता के साथ राम के विवाह की सूचना भेजी और मिथिलापुरी में लिवा लाने के लिए कहा।[7] रामायण में ही राजा दशरथ द्वारा सुमंत्र ने गुरूजनों और पुरोहित की संदेश भेजकर बुलाने का उल्लेख है। हनुमान को रावण दरबार में उपस्थित किये जाने पर उन्होंने रावण को श्रीराम के संदेशों और शक्ति का परिचय दिया। इसी प्रकार रावण ने वानरराज सुग्रीव के पास शुक नामक दूत से संदेश भिजवाया था। वहां से वापस आते समय शुक ने वानरराज सुग्रीव का संदेश लेकर गये थे। रामायण के उक्त साक्ष्यों से प्रमाणित होता है कि एक दरबार से दूसरे दरबार में संदेश भिजवाने के लिए दूत का उपयोग किया जाता था।

महाभारत में भी दूत के द्वारा संदेशवाहक के रूप में कार्य करने का उल्लेख प्राप्त होता है। कौरवों ने उलूक नामक दूत से श्रीकृष्ण के पास सूचना भेजी थी कि वे सब तैयारी के साथ पांडवों के हित के लिए युद्ध करें।[8] इसी प्रकार उलूक के वापस आते समय श्रीकृष्ण ने दुर्योधन के लिए संदेश दिया कि कौरव रणभूमि में आकर अपने पुरूषत्व का परिचय दे।[9] इस दृष्टांतों से दूत द्वारा संदेशवाहकों के कार्य की पुष्टि होती है।

राजनीति के विकास के साथ ही दूत से संधि कार्यों की अपेक्षा की जाने लगी। संभवतः इसीलिये गुप्त काल में दूत के लिये संधि विग्रहिक का प्रयोग किया जाने लगा।[10] संधि के कार्यों को दूत द्वारा किये जाने का उल्लेख रामायण काल से ही प्राप्त होने लगा। रामायण में वानरराज सुग्रीव द्वारा श्रीराम के यथार्थ परिचय तथा संदेह को दूर करने के लिए हनुमान को भेजा था।[11] हनुमान ने वानरराज सुग्रीव द्वारा मित्रता करने की इच्छा को भी श्रीराम के समक्ष रखा। मित्रता के लिए इस वार्ता के पश्चात् श्रीराम ने हनुमान से कहा कि सुग्रीव के निर्देशानुसार आपने मैत्री संबंध की जो चर्चा की है वह हमें स्वीकार है।[12] इससे यह परिलक्षित होता है कि सुग्रीव द्वारा हनुमान को श्रीराम के पास भेजने का उद्देश्य उससे मित्रता अथवा संधि करना था।

महाभारत में भी दूत द्वारा संधि कार्यों का उल्लेख प्राप्त होता है। धृतराष्ट्र का दूत संजय द्रुपद की छावनी में निवास कर रहे पांडवों के पास जाकर श्रीकृष्ण के समक्ष धृतराष्ट्र का संधि प्रस्ताव प्रस्तुत किया।[13] संजय ने वहां पहुंच कर धृतराष्ट्र के संदेश को सुनाया और अनुरोध किया कि मैं चाहता हूँ भाई, पुत्र तथा स्वजनों सहित दोनों पक्षों में संधि हो जाये। इस संधि से सभी को शांति प्राप्त हो सकती है। कौरवों की सभा में श्रीकृष्ण ने दुर्योधन से अनुरोध किया कि मैं आपसे यह निवेदन करने आया हूँ कि क्षत्रिय वीरों का संहार हुए बिना ही कौरवों और पांडवों के बीच संधि हो जाय, इन प्रसंगों से दूत द्वारा संधि कार्य करने की पुष्टि होती है।

कौटिल्य भी दूत के लिए संधि कार्य का विवरण प्रस्तुत करते हैं। सेल्यूकस और मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के बीच संधि और वैवाहिक संबंध की स्थापना हुई थी। मेगास्थनीज चन्द्रगुप्त मौर्य के पास दूत रूप में गया था। अतः स्पष्ट है कि सेल्यूकस और चन्द्रगुप्त मौर्य के बीच हुए संधि में मेगास्थनीज ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।[14] रोम सम्राट अगस्तस ने दूत के माध्यम से भारतीय और सीथियनों को रोमन नागरिकों से मित्रता के लिए स्वेच्छा से आकर्षित किया था। कुषाण काल में भी रोम साम्राज्य के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध

बनाये रखने के लिए दूतों को भेजा गया था। संगम युग के कवि ओरमपोगियार ने दूत के एक अन्य कार्य को प्रदर्शित किया। उनके अनुसार दूत राजा का समर्थन करते थे और उनकी सहायतार्थ दूसरों से सहायता जुटाने का प्रयास करते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि जब कभी प्रजा अथवा राजा किसी संकटापन्न अवस्था में होती थी तो दूत अन्य राज्यों से सहायता के लिए सभी आवश्यक प्रयास करता था।

हर्षवर्धन ने चीन से मैत्री पूर्ण संबंधों और संधि के लिए अपने शासनकाल में 642 ई. में चीन सम्राट के यहां अपना दूत भेजा था।[15] सोमदेवसूरी ने अपने ग्रंथ नीतिवाक्यामृतम् में दूत द्वारा पर राज्यों के साथ संधि कार्यों को सम्पादित करवाने का विवरण प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष - इस प्रकार हम देखते हैं दूत द्वारा दूसरे राज्यों में संदेश पहुंचाने और निमंत्रण देने का कार्य किया जाता था। दूत द्वारा संधि कार्य से संबंधित सभी कार्यों को सम्पन्न कराया जाता था। दूसरे राज्यों में विग्रह का कार्य भी दूत द्वारा ही किया जाता था। दूसरे राज्यों में किसी शासक के राज्यारोहण और अन्य किसी उत्सव पर दूत अपने राज्य का प्रतिनिधित्व करने के साथ ही औपचारिकताओं की पूर्ति भी करते थे। दूसरे राज्यों में व्यापारिक समझौतों को सम्पन्न कराने के साथ ही उपहार आदि भेजने के लिए दूतों का उपयोग किया जाता था। उपरोक्त कार्यों को सरलता पूर्वक सम्पन्न करने तथा अभीष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करने में दूत कार्यों की विशिष्टता परिलक्षित होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

01. ऋग्वेद, 1.36.5 (पृ. 50-51)
02. ऋग्वेद 1.74.6 (पृ. 105-106)
03. ऋग्वेद 1.60.1 (पृ. 86)
04. अथर्वेद 1.7.2
05. मातृभूमि और स्वराज्य शासन (भाग-2) पंडित श्रीपाद दामोदर सातवलेकर पृ.- 158
06. मातृभूमि और स्वराज्य शासन (भाग-2) पंडित श्रीपाद दामोदर सातवलेकर पृ.- 159
07. बाल्मिकी रामायण 67.24.27
08. महाभारत गीता प्रेस 160.53
09. महाभारत गीता प्रेस 162.57
10. हिन्दू राज्यतंत्र, रामचंद्र वर्मा, पृ.- 270
11. बाल्मिकी रामायण 2.24
12. बाल्मिकी रामायण 3.38
13. महाभारत गीता प्रेस 22.38
14. प्राचीन भारत का इतिहास- रामशरण शर्मा, पृ.- 130-135, प्राचीन भारत का इतिहास- द्विजेन्द्र नारायण झा एवं कृष्णमोहन श्रीमाली, पृ.- 176
15. जे.ए. एस.बी., वाल. 6 पृ. 68

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

हिन्दू-मुस्लिम एकता में मुहम्मद अली जिन्ना की भूमिका (1922-35)

• स्मिता कुमारी

सराशं - प्रस्तुत शोध आलेख में भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में 1922-1935 ई0 के मध्य हिन्दू-मुस्लिम एकता को पुर्नस्थापित करने में मुहम्मद अली जिन्ना की भूमिका पर प्रकाश डाला गया है।

मुख्य शब्द - भेदभाव, अन्याय, असहयोग, एकता, खिलाफत

भूमिका - भारतीय राजनीति में महात्मा गाँधी के उदय ने राष्ट्रीय आन्दोलन को एक नया मोड़ दिया था। 1922 तक भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में अनेक परिवर्तन हो चुके थे। राष्ट्रीय आन्दोलन एक जन आन्दोलन के रूप में उभर कर सामने आया था। उल्लेखनीय है कि 1919 में खिलाफत तथा 1920 में असहयोग आन्दोलन आरम्भ था। दोनों आन्दोलनों ने भारत में हिन्दू एवं मुसलमानों को बहुत ही करीब ला दिया था। सेब्रे की सन्धि में मित्र राष्ट्रों ने जब टर्की के साथ अपमानजनक व्यवहार किया तो भारतीय मुसलमानों में इसकी भारी प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई और भारत में खिलाफत आन्दोलन आरम्भ हुआ। ऐसी ही परिस्थिति में महात्मा गाँधी ने असहयोग आन्दोलन आरम्भ कर राष्ट्रीय आन्दोलन को एक नया मोड़ दे दिया। दोनों आन्दोलन लगभग साथ-साथ चले और यहाँ तक कि खिलाफत और असहयोग की मीटिंग एक ही पंडाल पर होने लगी। गाँधी जी राष्ट्रीय एकता के लिए हिन्दू- मुस्लिम एकता को अति आवश्यक मानते थे। अत: इस दिशा में स्वयं उन्होंने और कांग्रेस तथा उदारवादी भारतीय मुसलमानों ने भरपूर प्रयास किया। असहयोग आन्दोलन अहिंसा पर आधरित था, किन्तु दुर्भाग्यवश चौरी-चौरा कांड के पूर्व ही परिस्थिति दिनो दिन बिगड़ती चली जा रही थी। जनवरी 1922 के मध्य में मालवीय जी तथा कुछ अन्य लोगों ने एक सर्वदलीय सम्मेलन बुलाया था, जिसमें गाँधी जी एवं जिन्ना ने भी भाग लिया। जयकर और नटराजन उसके मंत्रियों में से थे। सम्मेलन के अनुरोध पर कांग्रेस कार्य समिति ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थागित कर दिया था, लेकिन बंदियों की रिहाई के सम्बन्ध में गवर्नर-जनरल बराबर अड़े रहे। वस्तुत: सरकार कुछ वर्गों के लोगों को जेल में बनाए रखना चाहते थे। ताकि कांग्रेस और खिलाफत सम्मेलन में एक दूसरे के प्रति अविश्वास पैदा हो।[1] फरवरी में गाँधी जी ने गवर्नर-जनरल को एक पत्र लिखा, जिसमें कहा गया था कि यदि सरकार ने खिलाफत प्रश्न का और पंजाब के साथ किए गए अन्याय का निराकरण नहीं किया तो वह बारडोली में सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ कर देंगे। किन्तु गवर्नर-जनरल का उत्तर नकारात्मक था, क्योंकि वह आन्दोलन को पूर्णरूप से कुचल देना चाहते थे।[2]

किन्तु इसी बीच 5 फरवरी को चौरी-चौरा कांड हो गया। जो राष्ट्रीय आन्दोलन के

• विश्वविद्यालय इतिहास विभाग, तिलकामाँझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर (बिहार) 812007

परिप्रेक्ष्य में एक दुर्भाग्य था। गाँधी ने बाद में बारडोली के विषय में जो कहा वही चौरी-चौरा कांड पर भी लागू होता है। उन्होंने कहा था कि "मान लिया जाए कि वारडोली में अहिंसक अवज्ञा परमात्मा की कृपा से सफल होती है और सरकार वारडोली के विजेताओं के पक्ष में सत्ता देती है तो उन अराजक तत्वों को, जो योजनबद्ध ढंग से उकसाए जाने पर अमानुषिक कार्यों में लगे रहेंगे, कौन नियंत्रित करेगा?"[3]

अतः इस स्थिति में असहयोग आन्दोलन स्थगित कर देने aur बारडोली में सविनय अवज्ञा का कार्यक्रम स्थगित कर देने का निश्चय किया गया। यह निर्णय पराजय की स्वीकृति के समान था। भारतीय राजनीति में महात्मा गाँधी की लोकप्रियता ने मुहम्मद अली जिन्ना की लोकप्रियता पर आघात पहुँचाया था। 1920 के नागपुर अधिवेशन में जिन्ना को घोर अपमान सहना पड़ा था। उन्होंने कांग्रेस द्वारा संचालित आन्दोलनों में रूचि लेनी कम कर दी। अतः जिन्ना ने असहयोग आन्दोलन को जन आन्दोलन से जोड़ने का प्रयास नहीं किया। चौरी-चौरा कांड के बाद जब गाँधी जी ने आन्दोलन को स्थगित किया तो उनकी इस नीति की जिन्ना ने आलोचना की। यहाँ तक की 1922 के मध्य में जिन्ना ने स्वयं एक अलग मोडरेट पार्टी की स्थापना का प्रयत्न किया था।[4] उन्होंने अब खुलकर गाँधी जी की आलोचना शुरू की। उन्होंने जयकर तथा मोतीलाल नेहरू को अपनी पार्टी में सम्मिलित होने का आमंत्रण दिया, किन्तु उन लोगों ने इस ओर कोई उत्सुकता नहीं दिखाई। अतः अब जिन्ना कांग्रेस के मुख्य हिन्दू साथियों के बीच अकेले नजर आने लगे। जो जिन्ना हिन्दू - मुस्लिम एकता के राजदूत कहलाते थे, उनकी विचारधाराएँ स्वयं टूटने लगी थी। स्वयं जिन्ना खिलाफत के मुस्लिम नेताओं से भी दूर हटने लगे। अली भाइयों तथा मौलाना आजाद जैसे नेताओं से भी दूर हटने लगे। अली भाइयों तथा मौलाना आजाद जैसे नेताओं के विचार में वे सरकार की ओर से बोलने वाले व्यक्ति समझे जाने लगे। अब उनका मात्र राजनीतिक मित्र मुस्लिम लीग के गुलाम मुहम्मद थे, जो बम्बई के मालावार हिल नामक स्थान में उनसे सदैव राजनीतिक बातें करने आया करते थे। इसके अतिरिक्त होमरूल के सचिव जमुनादास द्वारकादास कांजी भी कभी-कभी उनके पास आते जाते थे।

किन्तु जैसे ही भारत की राजनीति में महात्मा गाँधी का उदय हुआ तथा असहयोग आन्दोलन फैलने लगा, जिन्ना को कांग्रेस तथा भारत के नेतृत्व करने का सपना टूटता नजर आया। राष्ट्रीय एकता तथा प्रगतिशील राजनीति जिन्ना के सपने थे। गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन, सत्याग्रह, विदेशी कपड़े का बहिष्कार आदि कार्यक्रम जिन्ना पसंद नहीं करते थे। ऐनी बेसेंट की भी मान्यता थी कि यदि एक बार लोगों को जालिम कानूनों के खिलाफ बगावत करने के लिए उकसाया गया और उनमें कानून तोड़ने की प्रवृति हुई, तो वे अच्छे कानूनों का भी विरोध करने लगेंगे।[5] इतना ही नहीं, गाँधी जी के खिलाफत आन्दोलन का समर्थन करने वाली बात भी जिन्ना को उचित नहीं लगी। मुस्लिम लीग को वे प्रगतिशील बनाना चाहते थे, लेकिन कट्टर धार्मिक आन्दोलन को गाँधी जी के समर्थन करने से मुस्लिम लीग में अनुदार लोगों को बल मिला। अतः लीग में जो प्रगतिशील नेतृत्व था, पिछड़ने लगा और जब 1920 के नागपुर अधिवेशन में जिन्ना को अपमानित होना पड़ा तो वे बेचैन हो एकान्तवास में चले गए।

ऐसी स्थिति में रट्टी का जिन्ना के व्यक्तिगत एवं राजनीतिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती थी। किन्तु वह ऐसा नहीं कर सकी। जिन्ना नागपुर अधिवेशन से लौटने के

बाद टूट चुके थे। उनके पास अब प्रसिद्दि का तेज नहीं था, सभा-सम्मेलन नहीं थे तथा न ही राजनीतिक रंगमंच के नेता थे। अतः उन्होंने स्वयं को वकालती के पेशे में लगा लिया। जीवन के इस एकांकीपन में जिन्ना की बढ़ती उम्र भी एक समस्या उत्पन्न कर रही थी। जिन्ना तथा रट्टी की उम्र में लगभग पच्चीस वर्ष का अन्तर था। बढ़ते उम्र ने दोनों के विचारों में भी परिवर्तन ला दिया।[6] मुस्लिम लीग की राजनीति के कारण जिन्ना के धार्मिक विचारों में भी परिवर्तन आने लगा था। संभवतः दोनों के दृष्टिकोण यहाँ पर भी टकराए। रट्टी के मित्र काजी ने रट्टी के इस दुख का बड़ा ही मार्मिक वर्णन किया है। उन्होंने लिखा है- "मई 1922 को एक रात मैने एक बुरा सपना देखा कि रट्टी एक पुराने सोफे पर लेटी हुई है तथा वह कहती है कि "मेरी मदद करो।" दूसरे दिन जैसे ही में उठा मुझे सपना याद आया। किन्तु मैंने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। दूसरी रात पुनः मैंने वही सपना देखा। रट्टी मुझे मदद के लिए बुला रही थी, तीसरे दिन दोपहर के बाद लगभग पाँच बजे मै अपने आफिस से वापस लौट रहा था, मेरे पैर स्वयं जिन्ना के घर की ओर मुड गए। मैंने रट्टी को कई हफ्तों से नहीं देखा था। यह पहली बार था कि मैं बिना पूर्व समय लिए जिन्ना के घर पहुँचा था। जैसी ही मैं कार से बाहर निकला जिन्ना के नौकर ने मुझे बताया कि रट्टी बीमार है। मैंने नौकर को अपना कार्ड दिया और वह कुछ ही मिनट के अन्दर आकर मुझे कहा कि रट्टी आपसे मिलना चाहती है। मै पीछे के बरामदे से वहाँ गया जहाँ रट्टी लेटी हुई थी। मै आश्चर्य चकित रहा गया, क्योंकि रट्टी सौफे पर लेटी हुई थी। हम लोगों ने बातचीत की। जिन्ना अपने आफिस से 7:30 में वापस आए और मुझे अपने साथ ड्रिंक के लिए पूछा तथा रात के भोजन पर रुकने को कहा। किन्तु मैंने इंकार कर दिया कि मै पाँच बजे से ही यहाँ हूँ और रात के आने तक नहीं ठहर सकता।"[7]

सितम्बर, 1922 में रट्टी अपनी इकलौती बेटी दीना के साथ लंदन चली गयी। जिन्ना तथा रट्टी के जीवन में थोड़ा अलगाव आरम्भ हो चुका था। 1928 में जिन्ना लंदन गए तो रट्टी उनके साथ नहीं जाकर स्वयं पेरिस चली गयी। 1929 तक आते-आते वह बीमार रहने लगी। हालांकि रट्टी अलग रहती थी, किन्तु जिन्ना अब भी उनसे मिलने आते थे। 20 फरवरी 1929 को मानो ठीक उनके वर्षगाँठ के दिन रट्टी की प्राणज्योति हमेशा के लिए बुझ गयी।[8] रट्टी की मृत्यु के बाद जिन्ना के जीवन में भयानक तूफान आया। उस रिक्तता की पूर्ति नहीं हो सकी। अतः 1920 से ही व्यक्गित रूप से तथा रट्टी के साथ बिखराव ने जिन्ना के व्यक्तिगत जीवन पर जो प्रभाव डाला, उसका प्रभाव राजनीति पर दिखाई पड़ता है। राजनीति तथा जीवन साथी दोनों में एकाकी जीवन ने जिन्ना को अत्यधिक कठोर बना दिया था। अतः जिन्ना के राजनीतिक परिवर्तन के लिए उसका संवेदनशील ह्दय को भी दोषी ठहराया जा सकता है, अन्यथा कोई कारण नहीं था कि साम्प्रदायिक एकता लाने वाला व्यक्ति अपने ह्दय को इतनी तेजी से बदल पाता।

दूसरी और 1922 में असहयोग आन्दोलन की समाप्ति के बाद राजनीति ने एक नया मोड़ लेना प्रारम्भ किया। मार्च 1922 में ब्रिटिश सरकार ने महात्मा गाँधी को सरकार के खिलाफ असंतोष भड़काने के अपराध में गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें छः वर्ष की सजा हुई। गाँधी जी की गिरफ्तारी से राष्ट्रवादी गुट में विखराव आने लगा। कुछ लोग गाँधी जी की रणनीति पर प्रश्नचिह्न लगा रहे थे तथा कुछ लोग इ स गतिरोध से उबरने का रास्ता ढूंढ़ रहे थे। सी.आर.दास तथा मोतीलाल नेहरू ने औपनिवेशिक सत्ता का विरोध जारी रखने के लिए नयी रणनीति की वकालत की। उन्होंने सुझाव दिया कि राष्ट्रवादी आन्दोलकारी विधान

परिषदों का बहिष्कार करें। सी.आर. दास ने दिसम्बर 1922 में गया कांग्रेस की अध्यक्षता की लेकिन कांग्रेस के दूसरे गुट के लोगों ने जिसका नेतृत्व पटेल, राजेन्द्र प्रसाद तथा राजगोपालाचारी कर रहे थे, इसका विरोध किया। प्रस्ताव के पक्ष में 890 और विपक्ष में 1748 मत पड़े। प्रस्ताव नामंजूर हो गया। सी.आर.दास तथा मोतीलाल ने कांग्रेस से इस्तीफा दे दिया और जनवरी 1923 को स्वराज्य पार्टी की स्थापना की।[9]

स्वराज्य पार्टी ने कांग्रेस के कार्यक्रमों को ही अपनाया था। अन्तर केवल इतना था कि इस पार्टी ने साल के अन्त में होने वाले चुनावों में भाग लेने का निर्णय किया। इसने घोषणा की कि वह विधान परिषद् में स्वदेशी सरकार के गठन की मांग उठाएगी और यदि यह मांग नहीं मानी गयी, तो पार्टी के सभी निर्वाचित सदस्य विधान परिषद् के अंदर एक साथ मिलकर परिशद् की कार्यवाही में बाधा डालेंगे और उसके कामकाज को असम्भव बना देंगे। किन्तु राष्ट्रीय आन्दोलन पर इसके बुरे परिणाम निकले। 1923 में विधान परिषदों के चुनाव हुए। 14 अक्टूबर के अपने घोषणा पत्र में स्वराजियों ने साम्राज्यवाद के विरोध में चुनाव को प्रमुख मुद्दा बनाया। सेंट्रल लेजिस्लेटिव ऐसेंबली की 101 सीटों में 42 सीट स्वराजियों को प्राप्त हुई। इस चुनाव में उन्होंने साझा राजनैतिक मोर्चा बनाया। इनमें जिन्ना के नेतृत्व में अनेक समर्थक, उदारवादी व व्यक्तिगत रूप से कुछ विधायक, जैसे मदन मोहन मालवीय सम्मिलित थे।[10]

1923 के सेंट्रल लेजिस्लेटिव ऐसेंबली के चुनाव में मुहम्मद अली जिन्ना एक स्वतन्त्र उम्मीदवार के रूप में खड़े हुए। चूँकि कांग्रेस से उनका विश्वास धीरे-धीरे उठ रहा था और स्वराज्य पार्टी में वे जाना चाहते थे, अतः उन्होंने अपने को एक स्वतन्त्र उम्मीदवार के रूप में ही प्रस्तुत किया। बम्बई चुनाव क्षेत्र से उनके विरूद्ध स्वराज्य पार्टी के एक सदस्य तथा एक निर्दलीय उम्मीदवार खड़े हुए थे। सितम्बर 1923 में जिन्ना ने बम्बई की मुस्लिम जनता को अपील करते हुए कहा कि, "जो मुस्लिम जनता इस लेजिस्लेटिव एसेंबली के चुनाव में मतदान करने जा रही है, उसका कर्तव्य है कि वे उन्हें समर्थन दें।"[11]

चुनाव के समय में उनके दानों विराधियों ने अपने नाम वापस ले लिए और जिन्ना निर्विरोध चुन लिए गए। कांग्रेस छोड़ने के बावजूद बम्बई में जिन्ना की प्रसिद्ध तथा बम्बई की जनता द्वारा उनको समर्थन प्राप्त होने का यह परिचायक है। 14 नवम्बर 1923 को जिन्ना सरलता से ऐसेंबली के लिए उपयुक्त सिद्ध हुए थे।

13 जनवरी 1925 को नई दिल्ली में नव निर्वाचित नेशनल एसेम्बली की प्रथम बैठक हुई। जिन्ना ने तुरन्त ही उन 23 सदस्यों को अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया जो इस एसेम्बली में स्वतन्त्र उम्मीदवार के रूप में निर्वाचित होकर आए थे। इसमें वे सफल भी हुए। इसके बाद उन्होंने मोतीलाल नेहरू तथा सी.आर.दास की स्वराज पार्टी को भी अपनी ओर मिलाने का आमंत्रण दिया। अतः रातोरात जिन्ना ने ऐसेम्बली में एक स्वतन्त्र पार्टी का गठन कर दिया। फरवरी 1924 में जिन्ना की राजनीति इस रूप में सफल हो गयी जबकि ऐसेम्बली में अल्पसंख्यकों के महत्व को स्वीकार कर लिया गया।[12] परिणामस्वरूप गवर्नर-जनरल लार्ड रिडींग ने इसके लिए एक "रिफार्म एनक्वायिरी कमेटी" की स्थापना की जिसकी अध्यक्षता सर अलेक्जेण्डर मुडिमेन कर रहे थे। इस कमेटी में पाँच भारतीय सदस्य भी थे, जिनमें से जिन्ना भी एक थे। इसके अन्य सदस्य के शिवस्वामी अय्यर पूना के डॉ. आर. पी. पारानजीय, इलाहाबाद के तेजबहादुर सप्रू तथा पंजाब के मुहम्मद सफी थे। इस कमेटी को

जिन्ना ने अत्यधिक प्रभावित किया तथा अल्पसंख्यकों के पक्ष में जो निर्णय हुआ, उसमें जिन्ना की बहुत कड़ी भूमिका रही।[13]

5 फरवरी 1924 को स्वास्थ्य की गड़बड़ी के कारण गाँधी जी को जेल से स्वतन्त्र कर दिया गया। गाँधी जी विधान परिषदों का सदस्य बनने और उसकी कार्यवाही में बाधा पहुँचाने की नीति के विरोधी थे। उनके अनुसार यह नीति अहिंसक असहयोग आन्दोलन की नीति से मेल नहीं खाती थी। अत: एक बार फिर कांग्रेस में विभाजन का खतरा उत्पन्न हुआ। 7 जून 1924 को गवर्नर-जनरल ने भारतीय गृह सचिव को लिखा कि स्वराजियों और गाँधी में अलगाव की संभावनाएँ बढ़ती जा रही है और स्वराजी इस समय कांग्रेस पर गाँधी के नियंत्रण को तोड़ने में पूरे प्रयास से लगे हुए हैं।[14] किन्तु ऐसा नहीं हुआ। गाँधी जी ने धीरे-धीरे स्वराजियों के साथ एकता स्थापित करनी शुरू की। अत: जेल से रिहा होने के बाद गाँधी जी ने विधान परिषद् में भाग लेने की नीति पर कोई टिप्पणी नहीं की। पहले उन्होंने स्वराजी नेताओं से वार्तालाप किया। विधान परिषद् में स्वराजियों ने जिस साहस और जुझारूपन का परिचय दिया, उससे गाँधी जी का यह विश्वास दृढ़ हो गया कि स्वराजियों की रणनीति भले ही गलत हो, वे साम्राज्यवादी प्रशासन के अंग नहीं बन सकते। इस बीच सरकार ने आतंकवाद से निबटने के नाम पर नागरिक अधिकारों का दमन करना शुरू कर दिया और बंगाल में स्वराजी नेताओं पर आक्रमण बोल दिया। उससे गाँधी जी की पहली प्रतिक्रिया गुस्से के रूप में सामने आयी। 31 अक्टूबर को उन्होंने यंग इण्डिया में लिखा- "रौलट ऐक्ट तो मर चुका है। पर जिन मनोभावनाओं के चलते इसे लाया गया था, वे आज भी जिंदा है। जब तक अंग्रेजों के हित भारतीयों के हित से टकराते रहेगे, रौलट, ऐक्ट कोई न कोई रूप धारण कर आता ही रहेगा।"[15]

अत: स्वराजियों पर सरकारी दमन का विरोध करने के लिए गाँधी जी ने स्वराजियों के साथ एकता दिखाने का निश्चय किया। उन्होंने यंग इण्डिया में लिखा- "अगर मैं जरूरत की इस घड़ी में स्वराजियों का साथ नहीं देता हूँ, तो यह देश के साथ धोखा होगा हालांकि मैं विधान मंडल में हिस्सेदारी और संसदीय संघर्ष की नीतियों में विश्वास नहीं करता। उनकी नीतियों का विरोधी होने के बावजूद मुझे न केवल उनके साथ मिलकर काम करना है, अपितु उन्हें और मजबूत करना है।"[16]

6 नवम्बर 1924 को गाँधी जी ने स्वराजियों और उनके विरोधियों के बीच की खाई को पाट दिया। सी. आर. दास, मोतीलाल नेहरू और गाँधी जी ने एक संयुक्त बयान पर हस्ताक्षर किए, जिसमें कहा था कि स्वराजी नेता कांग्रेस के अभिन्न अंग के रूप में, कांग्रेस के नेतृत्व में, विधान मंडल में अपना काम करते रहेंगे।[17] दिसम्बर में बेलगांव कांग्रेस अधिवेशन में इस निर्णय को स्वीकृति दी गयी। इस अधिवेशन की अध्यक्षता गाँधी जी ने की। कांग्रेस कार्यकारिणी में गाँधी जी ने स्वराजियों को स्थान दिया।

स्वराजियों का कांग्रेस से समझौता होने पर जिन्ना की राजनीति पुन: अस्थिर हो गयी और उसकी स्वतंन्त्र पार्टी कमजोर पड़ने लगी।[18] जिन्ना कांग्रेस में गाँधी जी के उत्कर्ष से अपनी स्थिति को कमजोर देख चिंतित थे। 1922 में जब स्वराज पार्टी का गठन हुआ और कांग्रेस एक बार पुन: विभाजित हुई और उसने एक स्वतंन्त्र पार्टी की स्थापना की थी। उसे इस बात की आशा नहीं थी कि दो वर्ष के अन्दर की स्वराज पार्टी और गाँधी में पुन: समझौता हो

जाएगा। किन्तु 1924 में दोनों के मध्य हुए समझौते से जिन्ना पुनः विचलित हुए और उन्होंने मुस्लिम लीग को पुनर्जीवित कर साम्प्रदायिक राजनीति को ही अपना सहारा बना लिया। 1924 में मृत प्राय मुस्लिम लीग को पुनर्जिवित किया और मुसलमानों के हितों और अधिकारों की रक्षा के नारे के आधार पर उसे सुदृढ़ बनाने लगे। अब उनकी राजनीति इस बुनियादी साम्प्रदायिक विचार के आधार पर चल रही थी कि मुसलमानों को अपना अलग संगठन बनाना चाहिए। अतः भारत में अब साम्प्रदायिक मुसलमानों का एक अलग दल बन चुका था। विधान परिषद् पर नियंत्रण रखने के लिए मुस्लिम राजनीतिक संगठन आवश्यक माना जाने लगा।[19] 1924 के पश्चात् से जिन्ना ने लगातार ऐसा प्रयास किया कि हिन्दू मुस्लिम एकता जो 1920-21 के समय दिखाई पड़ी थी वह समाप्त होने लगी।

ठसके पीछे टर्की की राजनीति भी सम्मिलित थी। भारत में खिलाफत आन्दोलन मुख्य रूप टर्की के सुल्तान के साथ मित्र राष्ट्रों के अनुचित व्यवहार के कारण हुआ था। गाँधी जी ने इस परिस्थिति में हिन्दू मुस्लिम एकता को जोड़ने का प्रयत्न किया। भारतीय मुसलमानों को स्वयं खिलाफत को सफलता के लिए कांग्रेस की सहायता की आवश्यकता थी। दूसरी ओर कांग्रेस को असहयोग आन्दोलन में मुस्लिम समर्थन चाहिए था। अतः दोनों ने कंधे से कंधा मिलाया था, किन्तु 1922 में असहयोग समाप्त हो चुका था और कांग्रेस में फूट भी हुई थी। इसी समय 1924 में टर्की मे ंमुस्तफा कमाल पाशा के नेतृत्व में रिपब्लिकन सरकार की स्थापना हुई और कमाल पाशा ने टर्की में सुल्तान के पद को समाप्त कर दिया। इस घटना के साथ ही भारत में खिलाफत आन्दोलन भी समाप्त हो गया। जैसे ही खिलाफत आन्दोलन समाप्त हो गया वैसे ही भारत में हिन्दू-मुस्लिम दंगे आरम्भ हुए। मुसलमानों को मुख्यतः खिलाफत प्रश्न की चिन्ता थी, जिसके समाधान के लिए वे हिंसा का सहारा लेने के लिए तैयार थे। उनके लिए स्वराज्य का प्रश्न गौण था।[20] इसी परिवेश में मुस्लिम लीग को जीवित करने के लिए जिन्ना ने अवसर का लाभ उठाया। विधान परिषद् की आने वाले बैठकों में मुसलमानों को एकमत करने के लिए जिन्ना ने मुस्लिम लीग के उद्देश्यों की व्याख्या की। उसके अनुसार लीग के निम्नलिखित उद्देश्य थे -

क. भारतीय संविधान में संशोधन के प्रश्न पर विचार करना।

ख. हिन्दू मुस्लिम मतभेदों को मैत्री में बदलना।

ग. आल इण्डिया मुस्लिम लीग से पूर्ण समझौता स्थापित करना, जैसा कि 1916 में लखनऊ समझौता में हुआ था।[21]

इन उद्देश्यों को और भी स्पष्ट करते हुए जिन्ना ने कहा कि "मैं जहाँ तक समझता हूँ लीग किसी भी ऐसी नीति को नहीं अपनाएगा जो निम्न स्तर का हो।" उन्होंने एकता के लिए अपने अपील को सकारात्मक रूप में प्रस्तुत किया।[22] यद्यपि कुछ दिनों बाद ही उन्होंने लीग के अधिवेशन में एक अध्यक्ष के रूप में घोषणा की थी कि स्वराज्य हिन्दू मुस्लिम एकता का लगभग पर्याय है।[23]

उपर्युक्त बातों से जिन्ना की सक्रिय राजनीति में वापस आने की स्थिति स्पष्ट होती है। सर्वप्रथम, जिन्ना के विचारों और उद्देश्यों में कोई अन्तर नहीं आया था। स्वशासन को प्राप्त करना अब भी उसका उद्देश्य था, फिर भी हिन्दू मुस्लिम एकता के राजदूत के रूप में उनकी जो छवि थी वह धूमिल हो चुकी थी। मुस्लिम लीग की सदस्यता तथा कौंसिल में मुसलमानों

के प्रतिनिधित्व के कारण वह कांग्रेस और होमरूल से अलग होते नजर होते आए। उनका नियमित संगठन अब मुस्लिम लीग हो चुका था। साधारण मंच की अपेक्षा मुस्लिम मंच से एकता सम्बन्धी भाषण देने के कारण स्वयं इसका बुरा प्रभाव जिन्ना पर भी पड़ा। उन्होंने अपने को बचाने के लिए जो भाषण दिए थे, उसमें संदेह की झलक स्पष्ट दिखाई पड़ती थी। जिन्ना को यह छूट दी गयी थी कि वे मुस्लिम मतों के लिए साम्प्रदायिक निर्वाचकों की सहायता ले सकते हैं। उन्होंने इसका लाभ उठाया। मुस्लिम लीग में अपना विश्वास रखने के लिए वे साम्प्रदायिकता पर जोर देने लगे। किन्तु मुसलमानों में विश्वास प्राप्त करने के लिए साम्प्रदायिकता की आवश्यकता नहीं थी। डॉ. अंसारी जैसे मुसलमान साम्प्रदायिकता को आवश्यक नहीं मानते थे, फिर भीा मुस्लिम बहुमत पर उनका गहरा प्रभाव था।

फिर भी अभी तक जिन्ना के अन्दर राष्ट्रवादी भावना जीवित थी। हिन्दू मुस्लिम एकता की दृष्टि से 1924 में जिन्ना द्वारा मुस्लिम लीग को पुर्नगठित करने के पीछे जिन्ना की एक राजनीति थी। वह भारत में मुसलमानों को एक शक्ति बनाकर बोलने की स्थिति में लाना चाहते थे, ताकि हिन्दुओं से अन्ततः समझौता करने की कोशिश की जाए। व्यवहारिक राजनीति में अधिकृत संगठन के प्रतिनिधित्व के बिना दो सम्प्रदाय में समझौता होना सम्भव नहीं था। जिन्ना सम्पूर्ण भारत का प्रतिनिधित्व करना चाहते थे, जबकि अनेक राजनैतिक संगठनों का नेता बनने के बावजूद वे ऐसा नहीं कर पा रहे थे।[24] वे मात्र सम्प्रदाय को ही संगठित कर पाए। यही कारण था कि वे राष्ट्र ही जनता का प्रतिनिधित्व नहीं कर पा रहे थे; जिसके लिए उन्हें हमेशा दुःख होता था। स्वयं भारतीय मुसलमान साम्प्रदायिक राजनीति की दृष्टि से असंगठित था। तुर्की में खिलाफत के अन्त होने तक भारत में खिलाफत ने कभी भी मुसलमानों के भारत में हित को स्पष्ट नहीं किया। राष्ट्रीय स्तर पर भारत में एक ही मुस्लिम संगठन था- जमायत-उल-उलेमा। जिसके संगठन में भी विशेष बल नहीं था। कोई भी संगठन इतना सक्षम नहीं था, जो वह भारत के मुसलमानों के गृहनीति की आवश्यकताओं को समझ कर सम्प्रदाय के लिए अधिकार से आवाज उठाता। उस समय जिन्ना द्वारा मुस्लिम लीग को अधिकृत संगठन में बदलने के बाद भी मुसलमान सम्प्रदाय दिन व दिन असंगठित होता जा रहा था। उनके परस्पर विरोधी मतो ने अनेक मुस्लिम संगठनों को भी जन्म दिया था।[25]

जहाँ यह समय हिन्दू एवं मुसलमानों में फूट को विशेष रूप से व्यक्त करता है, वहीं दूसरी और एकता और सभी पार्टियों के सम्मेलन को भी दिखाता है। पहला सर्वदलीय सम्मेलन 1924 में हुआ। इस समय साम्प्रदायिक दंगो को लेकर गाँधी जी अनशन करने के लिए दृढ़ संकल्प थे। इस सम्मेलन में जिन्ना की भूमिका महत्वपूर्ण नहीं रही, क्योंकि उन्होंने साम्प्रदायिक मामलों को धार्मिक मार्गदर्शकों के ऊपर ही छोड़ दिया था। उनका स्वयं का उद्देश्य प्रस्तावित भारतीय संविधान के लिए साम्प्रदायिक समझौता था। यद्यपि प्रथम एकता सम्मेलन धार्मिक मतभेदों को दूर करने के लिए हुआ था। किन्तु साम्प्रदायिकता पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। अतः इस सम्मेलन से विशेष उपलब्धि की आशा नहीं की जा सकती थी।[26]

किन्तु जनवरी 1925 में जब दूसरा सर्वदलीय सम्मेलन हुआ तो जिन्ना की भूमिका महत्वपूर्ण रही। इस समय जिन्ना ने मुसलमानों के प्रतिनिधि के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। लेकिन अपने सभी प्रयासों के होते हुए भी यह सम्मेलन असफल रहा। एक अर्थ में यह सम्मेलन जिन्ना के लिए दोहरी असफलता थी, क्योंकि इस समय वे लोग मुस्लिम लीग

के लिए काम कर रहे थे जिसकी बैठक एक महीने पहले ही हुई थी। मुस्लिम लीग के कई सदस्यों के विरोध के बावजूद जिन्ना ने कुछ प्रमुख हिन्दू नेताओं को इस अधिवेशन में हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बोलने के लिए स्वीकृत प्राप्त कर ली। जिन्ना ने स्वयं मुस्लिम माँगों को ठीक ढंग से रखने के लिए एक समिति की स्थापना की थी। वैसी ही एक समिति उन्होंने हिन्दुओं के साथ मिलकर एक पूर्ण एवं अंतिम व्यवस्था के लिए एक प्रस्ताव रखा था। इस प्रस्ताव को रखने में उन्होंने अपने आरम्भिक विचारों को बार-बार दुहराया था। हालांकि जिन्ना के अपने विचार मुस्लिम नेताओं से भिन्न थे, फिर भी उन्होंने मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करते हुए इस बात पर बल दिया था कि वे अभी भी लखनऊ समझौता पर अडिग हैं। इतना होते हुए भी, उसकी उदारता ने, एकता के विरूद्ध शत्रुता को कम नहीं कर सकी।[27]

1925 के मध्य दोनों समुदायों के सदस्यों के बीच निराशा की भावना बढ़ गयी जिन लोगों ने एकता के लिए कार्य किया था वे भी निराश हो चुके थे। स्वयं गाँधी जी भी निराश थे। हिन्दू महासभा मुस्लिम सम्प्रदाय के प्रति अधिक विरूद्ध होती जा रही थी, तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की नीति निर्धारण में अपना प्रभाव दिखा रही थी। उसी प्रकार मुस्लिम लीग के अलीगढ़ अधिवेशन में सर अब्दुर रहीम के भाषण ने मुस्लिम स्वार्थ को एक चुनौती के रूप में ला खड़ा किया। 1926 में स्वयं जिन्ना ने भी तीव्रता को अपना लिया। 1926 के लीग के अधिवेशन में वर्तमान भारतीय संविधान के पुनर्विचार एवं संशोधन के लिए रायल कमीशन की नियुक्ति एवं प्रस्ताव रखते हुए जिन्ना ने कहा था- ''दुर्भाग्यवश यह विफल हो रहा है और यह हमारा दुर्भाग्य है कि हम एक समझौते पर नहीं आ सकते हैं। अतः मुसलमानों के लिए अलग कार्यक्रम यह है कि उन्हें रॉयल कमीशन में अपनी ओर से तैयार रहना चाहिए।''[28] साथ ही उन्होंने कांग्रेस की आलोचना भी इस आधार पर की कि वह किसी साम्प्रदायिक समझौते के लिए ठोस कदम नहीं उठा रही है। उन्होंने इस बात का उल्लेख किया कि लखनऊ समझौता के लिए स्वयं कांग्रेस ने प्रयास किया था, किन्तु इस बात को भूल गए कि इस प्रयास में सबसे बड़ा हाथ स्वयं उन्हीं का था।

1927 में जिन्ना ने अपने साथी मुसलमानों को एक सम्मिलित चुनाव क्षेत्र में लिए तैयार किया। इस दिशा में उन्होंने सर्वप्रथम सेन्ट्रल लेजिस्लेटिव ऐसेम्बली के 28 मुस्लिम सदस्यों के हस्ताक्षर कराए जिसके आधार पर यह प्रस्ताव रखा गया कि मुसलमान सम्मिलित निर्वाचक मंडल सभी स्तर पर स्वीकार तभी करेंगे जबकि सिन्ध को बम्बई से अलग कर दिया जाए तथा बलुचिस्तान एवं उत्तर परिश्चम सीमान्त प्रान्तों में सुधार लाए जाएं, ताकि सारे प्रान्त एक से हो जाए। बंगाल और पंजाब का प्रतिनिधित्व जनसंख्या के आधार पर होना था तथा पहले की तरह केन्द्र में मुसलमान एक तिहाई प्रतिनिधि के रूप में रहते हैं।[29]

यह निर्णय ''दिल्ली मुस्लिम प्रस्ताव'' के नाम से जाना जाता है। इसे गाँधी जी के समक्ष रखा गया तथा इसके तुरन्त बाद जिन्ना ने गाँधी जी, मोतीलाल नेहरू एवं मदन मोहन मालवीय के साथ मिलकर देश का दौरा करने का प्रस्ताव रखा; ताकि इस पर सम्पूर्ण भारत की सहमति ली जाए। गाँधी जी तथा मोतीलाल नेहरू ने तो इसे स्वीकार कर लिया किन्तु मालवीय जी ने इसे अस्वीकार कर दिया।[30] हालांकि मई में कांग्रेस समिति ने इसे स्वीकार कर लिया था, किन्तु रूढ़िवादी हिन्दू प्रेस इस प्रस्ताव के प्रति आरम्भ से ही तीव्र दृष्टि रखते थे। कुछ रूढ़िवादी मुसलमानों ने भी इसे अस्वीकार कर दिया। यह प्रस्ताव सम्मिलित रूप से

लीग के समक्ष नहीं आया था। अतः मुहम्मद अली जिन्ना जैसे रूढ़िवादी मुसलमान ने इस प्रस्ताव का विरोध किया।

अब जिन्ना के समक्ष एक एवीन कठिनाई उत्पन्न हुई। इस बाधा ने उन्हें आन्दोलन की ओर मोड़ दिया। वे पुनः हिन्दू मुस्लिम एकता की ओर झुके और इसी उद्देश्य से साइमन कमीशन का बहिष्कार भी किया। 1928 के आरम्भ में जब तीसरा सर्वदलीय सम्मेलन हुआ तो जिन्ना इंगलैंड चले गए। जिन्ना के एक मित्र ने लिखा है कि एकता के मार्ग में ऐसे छोटे से मतभेद ने जिन्ना में अरूचि उत्पन्न कर दी। जिन्ना के एकता के प्रयास की सभी विफलताओं के लिए नेताओं को दोषी ठहराया। उन्होंने यह कहा कि यदि मोतीलाल नेहरू, मदन मोहन मालवीय तथा लाला लाजपत राय दिल्ली मुस्लिम प्रस्ताव से सहमत हो जाते तो एकता प्राप्त हो गयी होती और स्वशासन भी आ गया होता। जिन्ना निराश हो गए थे।[31]

किन्तु दिल्ली प्रस्ताव को जहाँ रूढ़िवादी मुसलमान तथा हिन्दुओं ने अस्वीकार कर दिया, वही प्रस्ताव ने संवैधानिक योजना तैयार करने की दिशा में अत्यधिक सहयोग दिया। दोनों पक्षों की एकता चाहने वाले नेताओं ने इस पर विचार करना आरम्भ किया। मई 1928 में सर्वदल सम्मेलन को अधिक विस्तृत रूप से तथा भारतीय संविधान का प्रस्ताव तैयार करने लिए एक कमेटी को नियुक्ति की गयी। इसी कमेटी के अध्यक्ष मोतीलाल नेहरू थे। इस कमेटी को तीन महीने बाद अपनी रिपोर्ट देनी थी। इसे नेहरू रिपोर्ट भी कहा जाता है। नेहरू रिपोर्ट प्रकाशित होने के दो महीने बाद जिन्ना इंगलैंड से वापस लौट आए थे। कांग्रेस के प्रस्ताव नेहरू रिपोर्ट के रूप में सामने आए जिसे सभी दलों की एक समिति ने तैयार किया था। दिसम्बर 1928 के अन्त में कलकत्ता के सर्वदलीय सम्मेलन में इस रिपोर्ट को अनुमोदन के लिए प्रस्तुत किया गया। अन्य बातों के अतिरिक्त नेहरू रिपोर्ट में यह सुझाव दिया गया था कि हिन्दुस्तान का ढांचा भाषावार प्रान्तीय स्वायत्तता के आधार पर बने महासंघ का हो। चुनाव का आधार संयुक्त मतदाता मंडल हो तथा केन्द्रीय और प्रान्तीय विधायिकाओं में धार्मिक अल्पसंख्यकों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में सीटें आरक्षित रहें।[32] रिपोर्ट में सिन्ध को बम्बई से अलग करने तथा उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रान्त में संवैधानिक सुधारों का सुझाव दिया गया था।

किन्तु कलकत्ता सम्मेलन में नेहरू रिपोर्ट पर सर्व सहमति नहीं हो सकी। एक ओर मुस्लिम सम्पद्रायवादियों में मतभेद था, तो दूसरी ओर लीग और खिलाफत वालों का एक भाग रिपोर्ट के अनेक प्रस्तावों को स्वीकार करने के लिए इस बात पर स्वीकार किया गया था कि मुहम्मद अली जिन्ना द्वारा प्रस्तावित तीन संशोधनों को मान लिया जाए। इनमें से दो प्रस्ताव दिल्ली प्रस्तावों की तीसरी और चौथी मांगों के समरूप थे– पहली और दूसरी मांगें तो नेहरू रिपोर्ट में ही मान ली गयी थी। जिन्ना के तीसरे संशोधन में यह नयी मांग की गयी थी कि अवशिश्ट अधिकार प्रान्तों के हाथ में रहे। मुस्लिम लीग के एक बड़े भाग, जिसका नेतृत्व मुहम्मद गाफी और आगा खां कर रहे थे तथा बहुत सारे मुस्लिम साम्प्रदायिक समूहों को यह संशोधन स्वीकार नहीं था। वे पृथक मतदाता मंडल की व्यवस्था छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे।[33] हिन्दू महासभा तथा सिख लीग ने रिपोर्ट के उन भागों पर अत्यधिक आपत्ति की, जिसका सम्बन्ध सिन्ध, उत्तर परिश्चम सीमान्त प्रान्त, बंगाल तथा पंजाब से था। उन्हें भी जिन्ना के संशोधन स्वीकार नहीं थे। जिन्ना के प्रस्ताव मान लिए जाते, तो केन्द्र के अधिकार अत्यधिक कम हो जाते और कांग्रेस नेता कमजोर केन्द्र नहीं चाहते थे।[34]

कलकत्ता सम्मेलन की प्रतिक्रिया यह हुई कि अधिकांश मुस्लिम साम्प्रदायवादी एक हो गए और जिन्ना ने भी यह मान लिया था कि वे इसी मार्ग पर चलेंगे।[35] यह निरूपित करते हुए कि नेहरू रिपोर्ट हिन्दू हितों का दस्तावेज है, जिन्ना ने विभिन्न समयों पर विभिन्न साम्प्रदायिक संगठनों द्वारा प्रस्तुत की गयी मांगों को मिलाकर एक दस्तावेज तैयार किया, जिसे जिन्ना की 14 सूत्री मांग के रूप में जाना जाता है। ये मांगे निम्नलिखित थी –

1. भारत में भावी संविधान का रूप संधीय हो जिसमें अवशिष्ट शक्तियाँ प्रान्तों के पास हो।
2. सभी प्रान्तों में एक स्वायत्त शासन अधिकार हो।
3. सभी प्रान्तों की विधान सभाओं और अन्य लोक प्रतिनिधि संस्थाओं में थोड़ी संख्या वाली जातियों का निश्चित रूप से उचित और काफी प्रतिनिधित्व रहे। जहाँ उनका बहुमत हो, उसे घटाकर अल्पमत न कर दिया जाए।
4. केन्द्रीय विधानमण्डल में मुसलमानों का प्रतिनिधित्व कम से कम एक तिहाई हो।
5. साम्प्रदायिक वर्गों का प्रतिनिधित्व पृथक निर्वाचन प्रणाली से हो, परन्तु कोई भी सम्प्रदाय जब चाहे वह संयुक्त निर्वाचन प्रणाली स्वीकार कर सकता है।
6. किसी भी प्रादेशिक पुनर्विभाजन द्वारा पंजाब, बंगाल तथा पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त में मुसलमानों के बहुमत पर कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए।
7. सभी सम्प्रदायों को अपने धार्मिक विश्वास की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए।
8. किसी भी विधान सभा अथवा लोक प्रतिनिधित्व संस्था में ऐसा कोई भी विधेयक स्वीकार नहीं किया जाए जिसका किसी भी सम्प्रदाय के तीन चौथाई सदस्य अपने सम्प्रदाय के हितों के विरूद्ध बताते हुए विरोध करें।
9. सिन्ध को बम्बई प्रान्त से अलग किया जाएं।
10. अन्य प्रान्तों में जिस प्रकार के सुधार किए जाएँ उसी प्रकार के सुधार सीमा प्रान्त और बलुचिस्तान में हो।
11. विधान में सभी नौकरियों में योग्यता की आवश्यकता के अनुरूप मुसलमानों को उचित भाग मिले।
12. मुस्लिम संस्कृति के लिए उचित संरक्षण तथा सरकारी सहायता मिले।
13. केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय मंत्रिमण्डल में कम से कम तिहाई मंत्री मुसलमान हों।
14. केन्द्रीय विधान मंडल को संविधान में कोई परिवर्तन करने का केवल तभी अधिकार दे जब भारतीय संघ की सभी इकाइयाँ उसे स्वीकार कर लें।

यह साम्प्रदायिक समझौता की दिशा में कोई कदम नहीं था। किन्तु साम्प्रदायिकता को खुले आम बढ़ावा देने वाला था। अतः यह पूर्णतः सफल नहीं रही। वस्तुतः इस नीति में आरम्भिक कमजोरियों निहित थी। कांग्रेस ने परोक्ष रूप से किसी सीमा तक यह स्वीकार कर लिया था कि साम्प्रदायिक नेता अपने-अपने समुदायों के हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं और इसका वास्तविक जीवन में अस्तित्व भी है। शिखर वार्ता की रणनीति के लिए आवश्यक था कि विधायिकाओं में सीटों को तथा सरकारी नौकरियों के मामलों में अल्पसंख्यकों को उदार होकर रियायत दी जाए। लेकिन हिन्दू मुस्लिम वर्ग में भी साम्प्रदायिकता थी, जिन्होंने ऐसा नहीं होने दिया। अतः जैसे-जैसे रियायतें बढ़ती गयी, साम्प्रदायिकता की भूख और भी बढ़ी। साम्प्रदायिकता के सहारे कई नेता उभर कर सामने आए। 1929 तक यही प्रक्रिया चलती रही। इनमें सबसे मजबूत रूप में मुहम्मद अली जिन्ना उभर कर सामने आए।

अब जिन्ना का पूरा सामाजिक आधार साम्प्रदायिक हो चुका था। स्थिति भी ऐसी हो चुकी थी कि वे यदि साम्प्रदायिकता के मार्ग से हट जाते तो उनका राजनीतिक प्रभाव ही समाप्त हो जाता। नेहरू रिपोर्ट के समय दिए गए उसके प्रस्ताव इस बात को सिद्ध करते हैं। इस प्रकार एक-एक कदम नीचे उतरते हुए उन्होंने अति प्रक्रियावादी साम्प्रदायिकों के आगे आत्मसमर्पण कर दिया, जिसका नेतृत्व आगा खां और एम. शमी कर रहे थे और अन्त में मुस्लिम साम्प्रदायिकता का झण्डा अपने हाथ में ले लिया। जब कांग्रेस ने 1930 में आन्दोलन चलाया तो जिन्ना राष्ट्रवाद की मुख्य धारा से और भी अलग हो चुके थे। इसके अतिरिक्त मुस्लिम जनता राष्ट्रवादी वामपंथी राजनीतिक की ओर तेजी से खिंच रही थी। ऐसी स्थिति में जिन्ना की समक्ष में नहीं आ रहा था कि वे क्या करें। वे अब अधिकतर इंग्लैण्ड में ही रहने लगे और पुनः 1936 में एक पूर्ण साम्प्रदायिक नेता के रूप में राजनैतिक मंच पर उभर कर आये।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. ताराचंद , भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास, खण्ड 3, पृष्ठ 525
2. वही, पृष्ठ 526
3. फिशर, लुई , लाइफ आफ महात्मा गाँधी, पृष्ठ 219
4. जयकर, एम.आर. : दि स्टोरी आफ माइ लाइफ, खण्ड 1, पृष्ठ 555
5. वही, पृष्ठ 567
6. लिमये, चंपा : जिन्ना की पत्नी प्रखर राष्ट्रवादी, पृ. 14
7. वही, पृष्ठ 15
8. कानजी, द्वारकादास : रट्टी जिन्ना, पृष्ठ 24-25
9. लिमये, चंपा : पूर्वोक्त, पृ. 16
10. पुलिटिकल प्रोसिडग्सि, कन्फिडेन्सियल फाइल नं० 1, 1923, गवर्नमेन्ट आफ बिहार एण्ड उड़ीसा, पुलिटिकल डिपार्टमेन्ट, स्पेशल सेक्सन, इण्डियन नेशनल कांग्रेस हेल्ड एट गया, 1922, पृ. 51
11. विपन चंद्र : राष्ट्रीय आन्दोलन में ठहराव के वर्ष (रविवार, 8-14 सितम्बर, 1985), पृ. 59
12. वल्पेर्ट, स्टेन्ली : जिन्ना आफ पाकिस्तान, पृष्ठ 78
13. पाण्णिकर, के. एम. और प्रसाद, ए. (सम्पा.) : डिवायिस आफ फ्रीडम-सेलेक्टेड स्पीचेज आफ पण्डित मोतीलाल नेहरू, पृ. 101
14. अफजल, एम. रफीक : कायदे-आजम मुहम्मद अली जिन्ना, 1924-30, पृ. 21 विपन चंद्र : राष्ट्रीय आन्दोलन में ठहराव के वर्ष (रविवार, 8-14 सितम्बर, 1985), पृ. 58
15. यंग इण्डिया, 31 अक्टूबर 1924
16. व्ही, 5 नवम्बर 1924
17. सीतारमैय्या, पट्टाभि : दि हिस्ट्री आफ इण्डियन नेशनल कांग्रेस (1885-1935) खण्ड-1, पृ. 270-72
18. बालपेर्ट, स्टेनली : जिन्ना आफ पाकिस्तान, पृष्ठ 85
19. पेटज, विलियम एस. : दि पुलिटिकल कैरियर आफ मुहम्मद अली जिन्ना,

(अनपब्लिस्ड थिसिस आफ साउथ एशिया रिजनल स्टडीज), पृ. 64

20. सैयद, एम. एच : मुहम्मद अली जिन्ना, पृ. 280
21. पेटज, विलियम एस : दि पॉलिटीकल कैरियर आफ मुहम्मद अली जिन्ना, पृ. 64
22. वही, पृष्ठ 64-65
23. सैयद, मतल्बुल हसन : मुहम्मद अली जिन्ना, पृ. 310
24. पेटज, विलियम एस : दि पॉलिटीकल कैरियर आफ मुहम्मद अली जिन्ना, पृ. 66-67
25. वही, पृष्ठ 70
26. वही, पृष्ठ 70
27. वही, पृष्ठ 71-73
28. सैयद, मतल्बुल हसन : मुहम्मद अली जिन्ना, पृ. 367
29. पेटज, विलियम एस. : दि पॉलिटीकल कैरियर आफ मुहम्मद अली जिन्ना, पृ. 76; विपन चन्द्र : नरपथी साम्प्रदायिकता का दौर (रविवार, 5-11 जनवरी, 1986), पृ. 56
30. वही, पृष्ठ 77
31. चमनलाल, दीवान (उद्धत) मतल्बुल हसन सैयद : मुहम्मद अली जिन्ना, पृ. 401-402
32. विपन चन्द्र : नरमपंथी साम्प्रदायिकता का दौर (रविवार, 5-11 जनवरी, 1986), पृ. 56
33. मित्रा, एन.एन. : इण्डियन क्वाटरली रजिस्टर, गवर्नमेन्ट आफ इण्डिया, 1928, भाग-प्रथम, पृ. 121-123
34. वही, पृष्ठ 124
35. विपिन चन्द्र : नरमपंथी साम्प्रदायिकता का दौर (रविवार), 5-11, जनवरी, 1986), पृ. 56
36. मित्रा, एन.एन. : दि इण्डियन क्वाटरली रजिस्टर, 1928, भाग - द्वितीय, पृ. 369-71

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

गुप्तों के काल में सूर्य-पूजा एवं शैव-धर्म का विकास : एक ऐतिहासिक विमर्श

• अमोल कुमार

सारांश – शैव एवं सूर्य की पूजा गुप्त काल में प्रतीक के रूप में शैव तथा सूर्य की पूजा होती थी। बाद में शैव एवं सूर्य देवता की मूर्तियाँ भी बनने लगी, जिनके पृथक स्रोत भी थे। भारत में मग ब्राह्णों ने शैव एवं सूर्य पूजा का प्रचार किया था तथा भगवान शिव की पूजा करने वाले को शैव और शिव से संबंधित धर्म को शैवधर्म कहा जाता है। अतएव गुप्त काल के आलेखों का अध्ययन हमें उस युग में व्याप्त सद्‌भावना का परिचय कराता है। गुप्तकाल में शैव एवं सूर्य की पूजा की प्रतिष्ठा प्राय: समान थी। गुप्त साम्राटों ने शैव एवं सूर्य के धर्मालम्बियों को भी प्रश्रय दिया जाता था। गुप्त काल में विभिन्न कारणों के फलस्वरूप सूर्य पूजा एवं शैव धर्म का विकास प्रचार किया गया था एवं समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया गया था।

शब्द कुंजी – शैवधर्म, सद्‌भावना, पुनरूदय, पुनरुत्थान

गुप्तों के काल में सूर्य एवं शैव धर्म का विकास गुप्तकाल सृजनशीलता, प्रगतिशीलता और समृद्धि का द्योतक प्रतीत कहा गया है लेकिन इसका आन्तरिक दृश्य, इससे भिन्न यथार्थ का परिचय कराता है। वैज्ञानिक ज्ञान की प्रगति जहाँ आंशिक तौर पर ही देशी परम्परा की देन थी वहीं कालिदास की कृतियाँ पुनरूदय एवं पुनरुत्थान की द्योतक नहीं बल्कि विकासमान साहित्यिक काव्यों तथा शैलियों के एक विशेष स्थान पर पहुँचने की सूचक है। शैवधर्म की गुप्तकाल में शैव सम्प्रदाय और उसके विभिन्न पहलुओं के अस्तित्व का साक्ष्य स्रोतों में उपलब्ध है। पुराणों में शिव को सर्वोच्च देवता का पद दिया गया है। शैव सम्प्रदाय को भी गुप्त राजाओं ने समर्थन दिया। नचना कुठार एवं नागौर के शिव मंदिर इसके प्रमाण है।[1] चूँकि पूर्व में ही दो सम्प्रदायों में विभक्त हो चुका था, अब उसके भी उपविभाजन हो गये। भक्ति, मूर्ति पूजा एवं अनेक देवी देवताओं वाले अपने विस्तारित देव समूह के कारण यह सम्प्रदाय ब्राह्मण धर्म के अधिक निकट आ गया और अपना आकर्षण खोता चला गया। पाँचवीं–छठी सदियों से महायान पंथ पर तांत्रिक प्रभाव बढ़ने से, बाद की सदियों में, वज्रयान नामक सम्प्रदाय का जन्म हुआ, जिसमें विभिन्न प्रकार के जादुई कर्मकाण्डों पर जोर दिया गया। फलत: यह समाज से दूर होता चला गया। जैन धर्म भी, सनातन परंपरा के प्रबल होने के कारण, इस काल में कोई विशेष आकर्षण नहीं उत्पन्न कर सका। गुप्तों के काल में सूर्योपासक थे।[2]

गुप्त काल में शिव और सूर्य के उपासक थे। सूर्य पूजा की परम्परा परवर्ती युग में भी चलती रही और आज भी किसी न किसी रूप में सूर्य एवं शिव की पूजा प्रचलित है। सूर्य की उपास नाट्टग्वेद काल से ही होती रही है। सूर्य को द्युस्थानीय देवता कहा गया है। वे सर्वाधिक

• प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग तिलाकामांझी भागलपुरविश्वविद्यालय भागलपुर

प्रत्यक्ष देवता हैं। उनके निर्वचन में यास्क ने गत्यर्थक सृ अथवा प्रेरणार्थक सू अथवा गमनार्थक सु + ईर धातु का निर्देश किया है। इस के अनुसार सूर्य वह है जो संचरण से संबद्ध है अथवा प्रेरणा देता है। पाणिनि के अनुसार सृ धातु से क्य प् प्रत्यय लगाकर सूर्य शब्द का निपातन होता है।[3]

अतएव इस गुप्त अभिलेखों में सूर्य पूजा का कई जगह उल्लेख मिलता है। सूर्य वैदिक कालीन देवता थे। किन्तु इस काल में भी इनकी पूजा प्रचलित थी। इस आलेख के अध्ययन से पता चलता है कि सूर्य के अभिलेखों में भास्कर, आदित्य, लोकार्क, वरूणस्वामी आदि के नाम मिलते है। सूंर्य मंदिरों के निर्माण के अतिरिक्त अनेक गुप्तकालीन सूर्य प्रतिमाएँ प्राप्त हुई है। इन मूर्त्तियों से लेखों में उल्लिखत सूर्य पूजा के प्रमाण की पुष्टि होती है। विद्वानों का मता है कि सूर्य पूजा का प्रचार भारत में हुआ। गुप्तकाल में शिव के बाद सूर्योपासना का स्थान था।[4]

शिव के बाद तीसरे प्रमुख देवता मास्करदेव थे। गुप्तकाल में सूर्योपासना का भी महत्वपूर्ण स्थान था, क्योंकि गुप्त अभिलेखों में सूर्य का कई जगह उल्लेख मिलता है। सूर्य वैदिक देवता है। किन्तु इस काल में भी इनकी पूजा प्रचलित थी। सूर्य मंदिरों के निर्माण के अतिरिक्त अनेक गुप्तकालीन सूर्य-प्रतिमाएँ प्राप्त हुई है। इनसे सूर्य पूजा के प्रमाण की पुष्टि होती है। गुप्तकालीन प्रतिमाओं में सूर्य को चार घोड़ों के स्थान पर सर्वप्रथम सात घोड़ों के रथ पर आरुढ़ अथवा दोनों हाथों में कमल लिये हुए स्वतंत्र रूप से उदीच्य वेश और अव्यंगधारी प्रदर्शित किया गया है। भुमरा मंदिर से प्राप्त एक गवाक्ष में सूर्य का अंकन बहुत ही सुन्दरता से किया गया है। इसमें सूर्य देवता, शक सम्राट की भाँति दिखायी दे रहे हैं। इससे सूचित होता है कि सूर्य की पूजा भी गुप्तकाल में अधिकाधिक लोकप्रिय होती जा रही थी।[5]

इस प्रकार शिव से संबंधित धर्म और शैव धर्म कहा गया है और उनके अनुयायियों और भक्तों को शैव। गुप्तकाल में वैष्णव धर्म के साथ-साथ शैव धर्म का उत्कर्ष तीव्र गति से हुआ। गुप्त सम्राट वैष्णव धर्म के अनुयायी थे परन्तु उनकी धार्मिक-सष्णिुता की भावना से शैव धर्म का समाज में यथोचित् प्रसार हुआ था। गुप्तकाल में शिव का सर्वप्रथम उल्लेख समुद्रगुप्त की प्रयाग-प्रशस्ति में मिलता है। उसमें पशुपति (शिव) की जटाजूट से पीतवर्णी जल चली गंगा नदी निकलने का उल्लेख हुआ है। गुप्त शासकों ने अपने राज्य में शिव भक्तों को ऊँचे पद दिये इस बात की पृष्टि गुप्तकालीन शिलालेखों से होती है। चन्द्रगुप्त बिक्रमादित्य के मंत्री वीरसेन शाब ने उदयगिरि पर एक शिव मंदिर का निर्माण करवाया। सम्राट कुमारगुप्त प्रथम के समय में ध्रुवशर्मा नामक ब्राह्ण के द्वारा भिलसदा में स्वामी महासेन के मंदिर में दान देने का वर्णन मिलता है। इनके अतिरिक्त गुप्तराजाओं एवं उनके सामन्तों के अनेक लेखों में भगवान शिव की स्तुति की गयी है।[6]

गुप्तकालीन तक्षण कला में भी शिव मूर्ति का मुख्य स्थान था। इस काल में एक मुख्य और चतुर्मुख दोनों प्रकार की शिवलिंग की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। उनमें भुमरा का शिव-मंदिर और नचना का शिव-पार्वती मंदिर प्रमुख है। गुप्तवंशियों ने अपने-अपने विचारों के अनुसार हिन्दू धर्म को संरक्षण प्रदान किया। यदि एक शासक-विष्णु-उपासक था तो दूसरा शिव का अनुयायी था, तीसरा मुरुग का पूजक था तो चौथा सूर्य का उपासक था। संभवतः सूर्य मंदिर की वही मुद्रा होगी। शैव धर्मप्त राजाओं की धार्मिक सहिष्णुता की भावना के कारण ही शैव धर्म का भी विकास इस काल में हुआ, जबकि गुप्तों का व्यक्तिगत धर्म वैष्णव धर्म था। गुप्त के समय में मथुरा में महेश्व रनाम का शैव सम्प्रदाय निवास कर रहा था।

शैव धर्म का एक और अनुयायी पृथ्वीसोण जो कुमारगुप्त प्रथम का सेनापति था, ने करमदण्डा नामक स्थान पर एक शिव की प्रतिमा स्थापित की। इस प्रकार से यह स्पष्ट हो जाता है कि गुप्त काल में वैष्णव धर्म के सामने शैव धर्म की अवहेलना नहीं की गयी।[7]

गुप्तकाल में भगवान शिव की मूर्तियां मानवीय आकार एवं लिंग के रूप में बनाई गई थी। मानवाकार शिव की मूर्तियों में कोसाम से प्राप्त मूर्ति महत्वपूर्ण है। शैव एवं वैष्णव धर्म के समन्वय को दर्शाने वाले भगवान हरिहर की मूर्तियों का निर्माण गुप्त काल में ही हुआ। त्रिमूर्ति पूजा के अन्तर्गत इस समय ब्रह्म, विष्णु एवं महेश की पूजा आरंभ हुई। वर्तमान पुराण के वर्णन के अनुसारा गुप्त काल में चार शैव सम्प्रदायों का प्रचलन था। सूर्य पूजा सूर्य देवता गुप्त काल में सूर्योपासक लोगों का भी सम्प्रदाय था। विक्रम संवत 529 के मंदसौर शिलालेख के प्रारंभिक कुछ श्लोकों में सूर्य भगवान की स्तुति की गई है। बुलन्दशहर जिले के 'माडास्यात' नामक स्थल पर सूर्य मंदिर होने का साक्ष्य प्राप्त है। मिहिरकुल के 'ग्वालियर अभिलेख' से मातृचेट नामक नागरिक द्वारा ग्वालियर में पर्वत श्रृंग पर एक प्रस्तर सूर्य मंदिर बनवाने के साक्ष्य मिले है। सूर्य के अनेक नामों में से अभिलेखों में 'लोकार्क' भास्कर आदित्य, वरुणस्वामी एवं मार्तणम मिलते है। सहिष्णुता की भावना के कारण ही शैव धर्म का भी विकास हुआ जबकि गुप्तों का व्यक्तिगत धर्म वैष्णव धर्म था। गुप्तों के समय में मथूरा में महेश्वर नाम का शैव सम्प्रदाय निवास कर रहा था।[8]

शिव पूजा के निमित्त "कौमुदी महोत्सव" का उल्लेख किया है। शिव-उपासक यह मानते थे कि उनके प्रत्येक दुःख का अन्त शिव-पूजन से हो जाता है। आज भी शिव का पूजन इसी विश्वास और श्रद्धा से होता है। उत्तर और मध्यभारत में "शिवरात्रि" विख्यात और जनस्वीकृति पर्व था। गहडवाल शासक इस पर्व के दिन दान दिया करते थे। शव उपासकों की यह अपूर्व निष्ठा थी कि उनके प्रत्येक दुःखों का अन्त शिव-पूजन से हो जाता है। आज भी शिव का पूजन इसी विश्वास और श्रद्धा से होता है। सारनाथ से प्राप्त अनेक गहडवाल कालीन शैव प्रतिमाओं से शिव के प्रति श्रद्धा और भक्ति प्रदर्शित होती है। हिन्दू मंदिर एक प्रतीक है अथवा यो कहें कि अनेक प्रतीकों का समन्वय है। मनुष्य सबसे विकसित प्राणी है और मंदिर उसी का प्रतिरूप है। इसीलिए मंदिर को पुरूप कहा जाता है। मनुष्य के शरीर के विभिन्न अंगों के नाम पाद से लेकर शिखा तक के अनुरूप ही मंदिर के अंगों का नामकरण किया जाता है। चरण, पाद, जंघा, ग्रीवा और मस्तक इत्यादि शब्द जो कि मानव शरीर के अंग हैं एवं जैविक कार्य करते हैं, मंदिर के स्थापत्य के विभिन्न अंगों को इंगित करने के लिए प्रयुक्त किये जाते हैं।[9]

सर्वप्रथम संध्योपासना तथा सूर्य पूजा करके तब अन्य देव की पूजा की जाती थी। मंदिर स्थापत्य ब्राह्मण धर्म का प्रमुख तत्व है जो कि चतुर्थ शताब्दी ई. से आज तक निरन्तर भारत की स्थापत्य कला का प्रमुख विषय बना हुआ है और जिसने भारतीय स्थापत्य कला के विकास, परिष्कार तथा मूल्यांकन को अवसर प्रदान किया है और उसका दूसरा आधा हिस्सा कई ब्राह्मणों को दान दिया, जिसने लोलार्क भगवान के समक्ष दान दिया था। इन नामों से सूर्य के विभिन्न रूप अनुमानित हैं। इनकी प्रतिमाएँ भी बनती थीं। यहाँ सूर्य प्रतिमाओं का वर्णन अप्रासंगिक होगा, परन्तु संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि पंचायत पूजा में भी सूर्य का स्थान था तथा इस युग तक इस देवता की पूजा समाज में बहुत लोकप्रिय एवं प्रचलित हो चुकी थी। गुप्तकाल में गर्भगृह के ऊपर शिखर तथा सामने मण्डप, अर्द्धमण्डप, महामण्डप आदि का विधान हुआ। गुप्तकाल में मंदिर वास्तु के शास्त्र का निर्माण हुआ। चूंकि गुप्त युग से

पूर्व विविध धार्मिक सम्प्रदायों, देवी–देवताओं, प्रतिमा पूजा आदि दिशा में प्रगति हो चुकी थी, अतः गुप्त युग में देवताओं के मानव रूप की अभिव्यक्ति के परिणामस्वरूप मूर्तियों का निर्माण और देवालयों का निर्माण भी आवश्यक रूप से हुआ। हिन्दुओं के वैष्णव व शैव मंदिर का विकास इसी काल में हुआ।[10] गुप्तकाल से लेकर मुगलकाल तक भारत के विविध क्षेत्रों में अलग–अलग सम्प्रदायों से संबंधित मंदिरों का निर्माण हुआ। धार्मिक वास्तु के अन्तर्गत मंदिर–निर्माण कला का एक महत्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन भारतीय साहित्य में मंदिर निर्माण स ंबंधी विविध उल्लेख प्राप्त होते हैं। मंदिर वास्तु के संदर्भ में 'अपराजितापृच्छा' में कहा गया है कि 'नगर की शोभा और विभूति के लिए, जन–जन को निरन्तर सत्य और मुक्ति की प्रेरणा के लिए, लोकधर्म के प्रतीक स्वरूप, कीर्ति, आयु और यश की वृद्धि के लिए और जनपद के कल्याण के लिए मंदिर का निर्माण किया जाता है।[11]

इस तरह गुप्तकाल में शैव सम्प्रदाय और उसके विभिन्न पहलुओं के अस्तित्व का साक्ष्य स्रोतों में उपलब्ध है। पुराणों में शिव को सर्वोच्च देवता का पद दिया गया है। शैव सम्प्रदाय को भी गुप्त राजाओं ने समर्थन दिया। नचना कुठार एवं नागौर के शिव मंदिर इसके प्रमाण है। बौद्ध धर्म चूँकि पूर्व में ही दो सम्प्रदायों में विभक्त हो चुका था, अब उसके भी उपविभाजन हो गये। भक्ति, मूर्ति पूजा एवं अनेक देवी देवताओं वाले अपने विस्तारित देव समूह के कारण यह सम्प्रदाय ब्राह्मण धर्म के अधिक निकट आ गया और अपना आकर्षण खोता चला गया। पाँचवीं–छठी सदियों से महायान पंथ पर तांत्रिक प्रभाव बढ़ने से, बाद की सदियों में, वज्र यान नामक सम्प्रदाय का जन्म हुआ, जिसमें विभिन्न प्रकार के जादुई कर्मकाण्डों पर जोर दिया गया। इस मंदिर के गर्भगृह में सूर्य की प्रतिमा को सात घोड़ों से युक्त रथ पर सवार दिखाया गया है। सूर्य के दाहिनी ओर चित्रगुप्त भगवान की एक खण्डित मूर्ति है जो कि लेखनी लिए हुए हैं। उन्हीं के नाम पर इस मंदिर का नाम चित्रगुप्त पड़ा। मंदिर की वाह्य भित्ति पर तीन पंक्तियाँ बड़ी प्रतिमाओं की व एक एक छोटी प्रतिमाओं की है। इन मूर्तियों में विभिन्न विषयों को उत्कीर्ण किया गया है।[12]

स्वामिनारायण अक्षरधाम मन्दिर के भक्तिद्वार मुख्य मंदिर के स्तम्भों, मण्डप एवं मंदिर के मंडोवर तथा शीर्ष पर शैव धर्म समबन्धित मूर्तियों का शिल्पांकन किया गया है। मंदिर परिसर में निर्मित यज्ञपुरुष कुण्ड एवं संगीतमय फव्वारे के चारों ओर संलग्न सोपानों पर बनाऐ गए लघु मंदिरों में भी शैव मूर्तियों का शिल्पांकन मनोहारी है। शैव प्रतिमाओं में उमा–महेश्वर, नटराज, गणेश तथा नन्दी प्रतिमाओं का आलेखन शिल्पी ने तन्मयता पूर्वक किया है। भगवान शिव की यह मूर्ति मुख्य मंदिर के ललाट बिम्ब पर शिल्पांकित है। ललितासन मुद्रा में अंकित चतुर्भुजी शिव के आयुध क्रमशः अक्षमाला, डमरू, त्रिशूल एवं वीरपूरक है। शिव जटामुकुट, पुष्प कुण्डल, कटिबन्ध आदि आभूषणों से सुसज्जित हैं। मूर्ति पादपीठ पर शिव वाहन नन्दी विराजमान है। भगवान शिव की यह मूर्ति इनके सौम्य रूप को वाहन कर रही है। शिव इस रूप में वाहन नन्दी पर बैठकर अपने गणों के साथ अकेले में विचरण करते हैं। शिव प्रतिमा के बांयी और अंजलि हस्त, द्विभंग मुद्रा में नायिका का अंकन है। नायिका के सिर पर गुम्फित केष राशि, गले में हार, कमर में करधनी तथा उत्तरी आभूषण एवं वस्त्र दृष्टिगत है।[13]

अतएव सूर्य पूजा फारस से भारतवर्ष में आयी तथा उसी के प्रभाव से यहाँ सूर्य के अनेक मंदिर बनाए गये, क्योंकि भारतीय शैव सम्प्रदाय में इसका उल्लेख नहीं मिलता है। सूर्य की पूजा सामान्यतया वैष्णव से सम्बन्धित है। इनका उद्देश्य तत्कालीन समाज का

चित्रण करना नहीं था, बल्कि समाज को एक आदर्श रास्ते पर चलने का उपदेश प्रदान करना था। परन्तु इतना कहा जा सकता है कि इनमें जो कुछ भी वर्णन प्राप्त होता है वह तत्कालीन परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में ही लिखा गया होगा। अतः इसके माध्यम से तत्कालीन सामाजिक अवस्था की कल्पना की जा सकती है। इसके अतिरिक्त तत्कालीन लोक साहित्य जिसके अन्तर्गत आख्यान, काव्य, नाटक आदि को तत्कालीन समाज के जानने के स्रोत के रूप में लिया जाता है।[14]

निष्कर्ष – इस आलेख से यह स्पष्ट होता है कि शैव एवं सूर्य की पूजा गुप्त काल में प्रतीक के रूप में शैव तथा सूर्य की पूजा होती थी। बाद में शैव एवं सूर्य देवता की मूर्तियाँ भी बनने लगी, जिनके पृथक स्रोत भी थे। भारत में मग ब्राह्मणों ने शैव एवं सूर्य पूजा का प्रचार किया था तथा भगवान शिव की पूजा करने वाले को शैव और शिव से संबंधित धर्म को शैवधर्म कहा जाता है। अतएव गुप्त काल के आलेखों का अध्ययन हमें उस युग में व्याप्त सद्भावना का परिचय कराता है। गुप्तकाल में शैव एवं सूर्य की पूजा की प्रतिष्ठा प्रायः समान थी। गुप्त साम्राटों ने शैव एवं सूर्य के धर्मालम्बियों को भी प्रश्रय दिया जाता था। गुप्त काल में विभिन्न कारणों के फलस्वरूप सूर्य पूजा एवं शैव धर्म का विकास प्रचार किया गया था एवं समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया गया था।

संदर्भ सूची –

1. डपाध्याय, वासुदेव, गुप्त अभिलेख, पृ. 70
2. उपरोक्त, पृ. 71
3. बंधोपाध्याय, राखालदास, गुप्तयुग, पृ. 81
4. वाजपेयी, संतोष कुमार,, गुप्तकालीन मूर्तिकला का सौदर्यात्मक अध्ययन, 1992, पृ. 145
5. बनर्जी, राखालदास, द इम्मीरियल गुप्त, प्लेट नं. 15
6. गुप्त, परमेश्वरीलाल, गुप्त साम्राज्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी द्वितीय संस्करण, 1991, पृ. 565
7. बनर्जी, गुप्त लेक्चर्स, पृ. 123
8. मिश्र, जयशंकर प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृ. 748
9. कनिंघम्, आर्केलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट, भाग-10, पृ. 52
10. उपरोक्त, गुप्त लेक्चर्स, पृ. 72
11. उपरोक्त, पृ. 73
12. बनर्जी, द एज ऑफ द इम्पीरियल गुप्ताज, पृ.12
13. बंधोपाध्याय, राखालदास, गुप्तयुग, पृ. 82
14. गुप्त, परमेश्वरीलाल, गुप्त साम्राज्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी द्वितीय संस्करण, 1991, पृ. 568

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

गोदान की प्रासंगिकता

• पंकज कुमार झा

सारांश - साहित्य का व्यापक उद्देश्य सामाजिक जीवन में व्याप्त कुरीतियों की आलोचना, परम्परा में आबद्ध रूढ़ियों से मुक्ति और जीवन-मूल्यों को सहेजने की चिंता में निहित है। आधुनिक हिन्दी कथा-साहित्य को नयी दिशा देने वाले प्रसिद्ध कथाकार प्रेमचंद के संपूर्ण कथा-साहित्य में यह चिन्ता व्याप्त है। प्रेमचंद के पूर्व का कथा-साहित्य जीवन-यथार्थ से दूर काल्पनिक, रहस्य, रोमांच और तिलिस्म के ताने-बाने से बुना एक ऐसे मनोरम वातावरण की सृष्टि करता है जो मानव-मन को रोमांचित तो अवश्य करता है परन्तु इसमें जीवन-यथार्थ की कुरूपता, शोषण, उत्पीड़न आदि का वास्तविक चित्र उपस्थित नहीं था।

मुख्य शब्द -साहित्य सामाजिक जीवन, कुरीतियां

कथाकार प्रेमचंद ने अपनी रचनाओं में सामाजिक जीवन-यथार्थ का चित्रण कर आम-आवाम की उन समस्याओं को उजागर किया जिससे देश की बड़ी आबादी का जीवन त्रस्त था। विडंबना यह है कि गोदान में वर्णित समस्याएँ आज भी बनी हुई हैं। जब तक समाज में जाति-भेद, छुआछूत, ऊँच-नीच, मेहनतकश जनता के श्रम का हरण, गरीबी और पूंजीवादी शोषण से समाज पूर्णतः मुक्त नहीं हो जाता, तब तक 'गोदान' की प्रासंगिकता बनी रहेगी।

आधुनिक हिन्दी उपन्यास साहित्य में 'गोदान' का प्रकाशन एक नया प्रस्थान है। कृषक-जीवन का इतना सूक्ष्म और विशद चित्रण इसके पूर्व हिन्दी के किसी अन्य उपन्यास में नहीं हुआ था। उपन्यास का शीर्षक भी उसे कृषक-जीवन से सम्बद्ध करता है। इसमें किस्सागोई के साथ जीवन-यथार्थ की अभिव्यक्ति के माध्यम से तत्कालीन सामाजिक परिवेश में कृषक-जीवन की दयनीयता को समग्रता से प्रस्तुत किया गया है। ''उपन्यासकार के रूप में प्रेमचंद की बड़ी सफलता इस बात में भी है कि उन्होंने अच्छी किस्सागोई को व्यापक रचना-दृष्टि के साथ जोड़ा है। उनके पहले ये दोनों तत्व अधिकतर अलग-अलग थे। स्वयं प्रेमचंद इस जोड़ को लंबे प्रयत्न के बाद ढाल सके। 'सेवासदन' से लेकर 'कर्मभूमि' तक किस्सा और दृष्टि में से एक या कभी-कभी दोनों मुखर हैं। 'गोदान' में पहुँचकर संतुलन पूरा हो जाता है और इसके साथ प्रेमचंद का जीवन भी।''[1] वास्तव में 'गोदान' का महत्व उपर्युक्त कारणों से उतना नहीं जितना उसे हिन्दी की 1936 तक की औपन्यासिक परम्परा और ब्रिटिशकालीन भारतीय जीवन व्यवस्था को अभिव्यक्त करने के कारण है।

'गोदान' का रचना-संतुलन ऐसा बेजोड़ है कि उसमें अनवरत संघर्ष, करूणा, सहानुभूति और ट्रैजिक अंत के बावजूद कहीं किसी एक के प्रति कड़वाहट नहीं आती, गहरा

• विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग, शोध-छात्रललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, कामेश्वरनगर, दरभंगा

असंतोष उमड़ता-घुमड़ता है तंत्र के प्रति। गांधी और मार्क्स को जैसे प्रेमचंद ने फेंट कर मिलाया हो। ऐसा विधान लेखक के गहरे रचनात्मक आत्मविश्वास का प्रबल साक्ष्य है।''[2]

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अपने आर्विभाव-काल से सन् 1936 तक हिन्दी उपन्यास ने जो-जो रूप धारण किये, उन सबकी चरमोपलब्धि 'गोदान' में दिखती है और इस प्रकार 'गोदान' हिन्दी उपन्यास के इतिहास में उल्लेखनीय महत्व रखता है। प्रेमचन्द ने उसमें अत्यन्त कौशल और कलात्मक ढंग से उपन्यास-साहित्य की पूरी परम्परा को समेट लिया है। इस प्रकार रचना-काल के पिछले 50-60 वर्षों के ब्रिटिशकालीन भारतीय-जीवन की धड़कने भी 'गोदान' में सुनायी पड़ती है।

''प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में समाज के विभिन्न वर्गों का चित्रण किया है। इनमें सबसे प्रमुख वर्ग है-किसानों का, जो मुख्यत: गांवों में रहता था और समूची आबादी का लगभग 85 प्रतिशत था। इसके बाद उन्होंने मध्यमवर्ग को अपने उपन्यासों का विषय बनाया। अभिजात वर्ग और नागरिक जीवन का चित्रण उन्होंने बहुत कम किया है, और जहाँ ऐसे स्थल आये हैं वहाँ उनका मन रमा नहीं है।''[3] हम गोदान पढ़कर तत्कालीन भारतीय-जीवन का वास्तविक चित्र प्राप्त कर सकते हैं। नि:संदेह आधी शताब्दी से अधिक की औपन्यासिक परम्परा और भारतीय-जीवन की गतिविधियाँ एक साथ 'गोदान' में अभिव्यक्त हुई हैं।

हिन्दी औपन्यासिक परम्परा की जो सशक्त एवं धनीभूत परिणति हमें 'गोदान' में दृष्टिगोचर होती है, उसका महत्व समझने के लिए उपन्यास के सम्बन्ध में हमें यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जब नवशिक्षित मध्यम वर्ग ने पौराणिक परम्पराओं, अन्धविश्वासों और वाह्याडम्बरों एवं अनैतिक आचार-विचारों के स्थान पर मानवोचित उदारता, जीवनगत सत्य के अन्वेषण और नवीन मूल्यों तथा मानदण्डों की स्थापना का पुनीत प्रयास किया तो यह गुरूतर भार उपन्यास साहित्य ने अपने ऊपर लिया।

''मुंशी धनपत राय (प्रेमचंद) जब हिंदी के उपन्यास-क्षेत्र में आये तब नवीन रूसी उपन्यासों का, जो सामाजिक तथा राजनीतिक क्रांति के उपरांत एक नये प्रकार की योजना करने और नयी संस्कृति को जन्म देने का प्रयोग कर रहे थे, प्रभाव लेकर आये। उन दिनों आर्य-समाज का सुधार-कार्य तो चल ही रहा था, संयोग से जोरदार राजनीतिक आंदोलन का सूत्रपात भी उसी समय हुआ। इन्हीं तीनों प्रवाहों का आधार लेकर मुंशी धनपतराय जी ने अपने उपन्यासों की रचना आरंभ की।''[4]

साहित्य के अन्य रूपों की अपेक्षा उपन्यास में जीवन की यथार्थता, सत्यता, आवश्यकताएँ, संभावनाएँ एवं स्वतंत्रता, व्यक्तित्व और मूल्यों का निरूपण अधिक होता है। समाज में प्रचलित सत्य की अनुभूति उसमें और भी धनीभूत हो उठती है। समाज जब करवट लेता है, उसमें जब बौद्धिक स्पन्दन होता है, तो उपन्यास उस स्पंदन का मानदंड बनता है और समाज की नयी मूर्ति गढ़ने में सहायक होता है। 'गोदान' में उन्होंने धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि सभी पक्षों को अभिव्यक्त किया है। तत्कालीन सामाजिक-परिवेश में एक ओर धर्म एवं समाज सुधारवादी आन्दोलन थे तो दूसरी ओर राजनीतिक और आर्थिक आन्दोलन थे। ब्रिटिश सरकार सुधारवादी आन्दोलनों के प्रति तो उदासीन थी, किन्तु दूसरे प्रकार के आन्दोलनों के साथ उसका तीव्र संघर्ष हुआ। इस प्रकार तत्कालीन भारतीय जीवन में भारी उथल-पुथल मची हुई थी। परतन्त्रता के बन्धनों से मुक्ति पाना तो देश का मुख्य लक्ष्य था ही परन्तु इसके साथ-साथ धार्मिक- साम्प्रदायिक, भाषा सम्बन्धी, आर्थिक आदि ऐसी अनेक समस्याएँ थीं, जिनसे राष्ट्रीय जीवन की गति प्रभावित होती थी। ऐसे उलझे हुए

सामाजिक-जीवन का जटिल चित्र 'गोदान' में चित्रित हुआ है।

'गोदान' की रचना परतन्त्र भारत में हुई थी। इसलिए प्रेमचंद के समक्ष अंग्रेजी शासन के शोषण के फलस्वरूप भारतीय जीवन की त्रासद स्थितियां थीं। वे इस राष्ट्रीय विपदा से विमुख नहीं हो सकते थे। उनके अन्य उपन्यासों में भी ये समस्याएं है, किन्तु उनमें उन्होंने उसके किसी एक पक्ष को लेकर अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। 'गोदान' ही उनका एक ऐसा उपन्यास है, जिसमें उन्होंने राष्ट्रीय इतिहास की चौमुखी व्यापकता को समग्रता के साथ अभिव्यक्त किया है। "उनके उपन्यासों में सामजिक जीवन का चित्र सामयिक आंदोलन के रंग में रंगा हुआ दिखाई पड़ता है। व्यक्तियों के सुख-दुःख की कथा वहीं तक है जहाँ तक वह किसी एक वर्ग का प्रतिनिधि है। जमींदार, रैयत, संन्यासी, दारोगा, क्रांतिकारी, विधवा, अछूत या ऐसे ही जो अन्य वर्ग समाज में इस समय हैं और नवीन आंदोलनकारियों की दृष्टि में उनकी जो एक समाज-सापेक्ष सत्ता है, उसी घेरे में प्रेमचंदजी के उपन्यास भी घूमते हैं।"[5] प्रेमचंद खोखलेपन के चित्रण तक ही अपने को सीमित रखने वाले रचनाकार नहीं थे। उन्होंने 'गोदान' में शोषण-मुक्त भारत का स्वप्न देखा है।

भारतवर्ष ही नहीं प्रायः सभी देशों में सबसे बड़ा वर्ग किसान-मजदूरों का होता है। अंग्रेजों ने अपने शासनकाल के प्रारंभ से ही जो आर्थिक नीति अपनायी थी, उसका ग्रामीण-जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा था। होरी का जीवन, उसका गृहस्थी एवं सामाजिक जीवन इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है ही, किन्तु 'गोदान' में पूरे अंग्रेजी शासन-काल के अन्तर्गत किसान का वास्तविक चित्र उभरकर आता है। तत्कालीन जीवन परिवेश में किसान का जन्म ही इसलिए होता था कि वह मर-मरकर कमायें, लेकिन स्वयं कुछ न खा सके। दोनों समय उसे भरपेट भोजन भी न मिल पाता था। सूदखोर महाजनों का फौलादी पंजा उसे दबोचे रहता था। उसकी कमाई का बहुत बड़ा भाग महाजनों का कर्ज चुकाने में खर्च हो जाता था। आपस के वैमनस्य, अशिक्षा, बंटवारे, उनकी अपनी मानसिक संकीर्णता, स्वार्थपरता आदि से उनकी दुर्दशा और अधिक बढ़ जाती थी। मुकदमेबाजी, थाना-पुलिस, कचहरी-अदालत द्वारा भी उनकी खूब लूट होती थी। प्रेमचन्द ने एक स्थान पर किसान को सबका 'नरम चारा' कहकर अंग्रेजी राज्य में हो रही उसकी दुर्दशा का भी उल्लेख किया है। पटवारी, जमींदारों के चपरासी, कारिन्दे, थानेदार, कान्सटेबिल, कानूनगो, तहसीलदार, डिप्टी मजिस्ट्रेट, कलक्टर, कमिश्नर दूसरे शब्दों में अंग्रेजी शासन की सारी प्रशासनिक मशीनरी किसान के पीछे पड़ी रहती थी। यहाँ तक कि डाक्टर, इन्सपेक्टर, विभिन्न महकमों के हाकिम, पादरी सभी किसान से रसद लेते थे।

जमींदार जब किसी बड़े अफसर को दावत देता था तो उसका भार किसानों पर ही पड़ता था। पिसना और कुटना जैसे उनकी तकदीर में लिखा था। कर्ज के कारण घर-द्वार तक के नीलाम होने की नौबत आ जाती थी। अनाज खलिहानों में पहुँचने से पहले ही महाजनों और कारिन्दों के यहाँ पहुँच जाता था। "प्रेमचंद शताब्दियों से पददलित अपमानित और उपेक्षित कृषकों की आवाज थे; पर्दे में कैद, पद-पद पर लांछित और असहाय नारी-जाति की महिमा के जबरदस्त वकील थे; गरीबों और बेकसों के महत्व के प्रचारक थे।"[6] अंग्रेजी प्रशासन और महाजनी सभ्यता मिलकर गरीब किसानों का खून चूस रहे थे। पूरे अंग्रेजी राज्य में किसानों की क्या दुर्दशा हो गयी थी, इसका विवरण प्राप्त करने के लिए 'गोदान' प्रामाणिक दस्तावेज है। किसान-जीवन में न कोई आशा रह गयी थी, न कोई उमंग। उसके जीवन का स्रोत सूख गया था, हरियाली मुरझा गयी थी । चेहरे पर खुशी नहीं, आँखों में ज्योति

नहीं, भविष्य अन्धकारमय जैसे सारी चेतना शिथिल हो गयी हो। भोजन केवल पेट भरने के लिए था, स्वाद के लिए नहीं। उनकी रसना जैसे मर चुकी थी। धेले-धेले के लिए बेईमानी, मुट्ठी भर अनाज के लिए रक्तपात। शर्म और इज्जत तक बिकने लगी थी।

कृषक जीवन के पतन की यह परारकाष्ठा थी। 'गोदान' से पहले और उसके बाद शायद ही कोई दूसरा ऐसा हिन्दी उपन्यास है, जिसमें परतन्त्र भारत की गरीबी और लाचार किसान का इतना सजीव चित्रण हुआ है।

महाजनी-सामन्तवादी व्यवस्था के साथ-साथ 'गोदान' में पूंजीवादी व्यवस्था का शोषण भी चित्रित है। यह पूंजीवादी व्यवस्था अंग्रेजी राज्य की देन थी, जिसके शिकंजे में धीरे-धीरे भारतीय समाज फँसता गया। प्रेमचंद ने उसे उसके वास्तविक रूप से पहचान लिया था। पूँजीवादी बड़े-बड़े ऊँचे सिद्वान्तों की बात करते थे। उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लिया, जेल गये, खद्दर पहना, किन्तु अपना स्वार्थ, आराम और रसिकता अब भी न छोड़ सके थे। जुआं, घुड़दौड़, ऐयाशी, विदेशी शराब, हाकिमों की दावतें देने में उनके धन का काफी अंश निकल जाता था।

वे एक ओर यदि सेवा और त्याग रचते थे, तो दूसरी ओर रिश्वतें देते थे, व्यापार में तरह-तरह की बेईमानी करते थे, अपने ही बनाये हुए सिद्धान्तों की हत्या करते थे। वे समझते थे कि दौलत से सम्मान मिलता है और दौलत से ही नारी के हृदय पर विजय प्राप्त की जा सकती है। ये अधिकतर आत्मसेवी, भोगी और विलासी थे। धन-लोलुपता के कारण ही उनका मजदूरों के साथ संघर्ष होता था। पूंजीवाद की प्रतिमूर्ति खन्ना हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी पूंजीवाद का रूप हमारे सामने है। खन्ना और आज के पूंजीपति में वही अन्तर है, जो स्वतन्त्रता से पहले और बाद में भारतवासी में है।

वास्तव में 'गोदान' तक आते-आते भारत की आर्थिक व्यवस्था ऐसी हो गयी थी, जिसके अन्तर्गत कुछ मुट्ठी भर लोगों के पास आवश्यकता से अधिक धन था और वे मौज की जिन्दगी बिताते थे। जबकि देश की बड़ी आबादी मर-खपकर भी सुख से वंचित थी। उन्हें भरपेट रोटी भी मयस्सर नहीं हो पाती थी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के आधी सदी से अधिक समय बीत जाने के बावजूद यह समस्या आज भी ज्यों की त्यों बनी हुई है।

प्रेमचन्द ने तत्कालीन भारत के आर्थिक और राजनीतिक पक्षों के साथ ही सामाजिक प्रवृत्तियों को भी 'गोदान' में व्यक्त किया है। गाँवों में अशिक्षा, अन्धविश्वास और अन्य परम्पराएँ तो थीं ही, जातिवाद का उस समय कितना कठोर बन्धन था, इसे भी 'गोदान' में उजागर किया है। ग्रामीण जीवन में गोबर, झुनिया, मातादीन तथा सिलिया की जीवन स्थितियाँ हमें स्तब्ध कर देती है। इस प्रकार के प्रश्नों के साथ ऊँच-नीच की भावना, देश की परम्परागत कठोर वर्ण-व्यवस्था आदि सामाजिक समस्याओं का चित्रण 'गोदान' में हुआ है।

प्रेमचंद ने अपने समय की परिस्थितियों को देखते हुए ब्राह्णों को 'धर्म का लुटेरा' कहा है। बिरादरी का जबरदस्त भय समाज में बना हुआ था। बिरादरी से पृथक जीवन की कल्पना ही असंभव थी। शादी-व्याह, मुण्डन-छेदन, जन्म-मरण सब कुछ बिरादरी के हाथ में था। इस सम्बन्ध में मातादीन का प्रसंग और हरखू के कथन में इस समस्या का मार्मिक चित्रण है। हरखू कहता है-''तुम हमें ब्राम्हन नहीं बना सकते, मुदा हम तुम्हें चमार बना सकते हैं। हमें ब्राम्हन बना दो, हमारी सारी बिरादरी बनने को तैयार है। जब यह समरथ नहीं है तो फिर तुम भी चमार बनो, हमारे साथ खाओ-पिओ, हमारे साथ उठो-बैठो। हमारी इज्जत लेते हो तो अपना धरम हमें दो।''[7] मातादीन के मुँह में हड्डी का टुकड़ा डाला जाना उस समय

की परिस्थितियों शोषण के विरूद्ध संघर्ष और प्रतिरोध का चित्रण है।

वास्तव में प्रेमचंद समाज की मर्यादाओं का झूठा स्वांग देख रहे थे। उन्होंने यह भी देखा था कि समाज ढोंगी साधु-महात्माओं, झाड़-फूंक वाली मानसिकता, खानपान और छुआछूत पर टिका हुआ है। देश और समाज को आज भी आशाराम बापू जैसे ढोंगी संत-महात्मा धोखा दे रहे हैं, प्रकान्तर से आज भी समाज-व्यवस्था वैसी ही बनी हुई है।

प्रेमचंद ने धर्म और समाज से सम्बन्धित अन्य अनेक ऐसी तथ्यों की ओर संकेत किया है, जो उनके जीवन-काल में ही उत्पन्न हो गये थे और जिनका 'गोदान' में उल्लेख हुआ है। कहा जा सकता है कि प्रेमचंद ने 'गोदान' में धर्म और समाज की नीति की सराहनीयता और खोखलापन दोनों पक्षों का चित्रण किया है।

हम जानते हैं कि राजनीतिक क्षेत्र में राष्ट्रीय आन्दोलन जिस प्रकार नवोत्थान की भावना से प्रेरित था, उसी प्रकार सामाजिक दृष्टि से नवोत्थान की भावना से प्रेरित होकर नवनिर्माण के कार्य में संलग्न था। सामाजिक-दृष्टि से नवोत्थान का सबसे उज्जवल पक्ष था-नारी सम्बन्धी भावना। भारतवर्ष में पश्चिम जैसा नारी-आन्दोलन नहीं छिड़ा, स्त्रियों की मध्ययुगीन दीन-दशा दूर करने की प्रेरणा तो यहाँ की संस्कृति से ही प्राप्त हुई, जिसे पहले आर्यसमाज ने और फिर महात्मा गाँधी के राष्ट्रीय आन्दोलन ने शक्ति प्रदान किया।

एक ओर अशिक्षित कुसंस्कारों से दबा हुआ भारतीय नारी-समाज था, दूसरी ओर नवशिक्षित महिला-समाज भी था जो पश्चिम का अन्धनुकरण करने में जीवन की सार्थकता समझता था। नारी के दोनों रूप भारतीय सांस्कृतिक-परम्परा के विरूद्ध थे। समाज सुधारकों को उसका 'तितली' रूप पसन्द नहीं था। उसे उसका मधु-मक्खी रूप अधिक प्रिय और देश की सांस्कृतिक-परम्परा के अनुरूप लगता था। कर्तव्यपरायणता, सेवा, त्याग, संयम ये ही अधिकार के स्रोत और शक्ति के उद्‌गम माने गये हैं। सेवा का अभाव विवाह-विच्छेद और अविश्वास के रूप में माना जाता था। दम्पति के जीवन की नौका अविश्वास की आँधी और तूफान में डूब सकती थी। स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध का जहाँ तक प्रश्न है, प्रेमचंद पूर्णतः आदर्शवादी और श्रेष्ठ भारतीय परम्पराओं के पोषक हैं। दया, श्रद्धा और त्याग से पूर्ण नारी-जीवन के स्थान पर संघर्ष, संग्राम, कलह, हिंसा, प्रतिशोध अधिकार-चर्चा वाला नारी रूप उन्हें पसन्द नहीं था। उनकी दृष्टि में पुरुष के लिए क्षमा, दया, त्याग, अहिंसा जीवन के उच्चतम आदर्श हैं। जबकि नारी इस आदर्श की प्राप्त कर चुकी है।

वर्तमान समय में आधुनिक जीवन-दृष्टि के अनुसार अब नारी के लिए न तो वैवाहिक-जीवन और न मातृत्व ही आवश्यक समझा जाता है। यह विचार कि मातृत्व के बिना नारी-जीवन अपूर्ण रह जाता है, कुण्ठित हो जाता है, केवल भावुकता पर आधारित है। इसका नारी-जीवन के मनोविज्ञान या उसके शरीर से कोई सम्बन्ध नहीं है। मातृत्व का अपना दिव्य आनन्द है, इससे इनकार नहीं किया जा सकता। फिर भी इस आनन्द की प्राप्ति के लिए किसी स्त्री को बाध्य करना आज न्याय संगत नहीं प्रतीत होता है। ''गोबर-झुनिया और मतई-सिलिया का विवाह अन्तर्जातीय विवाह की दिशा में एक कदम जरूर है। पर लात खाकर भी झुनिया को गोबर के साथ, अपमानित होकर भी सिलिया को मतई के साथ संबंध निभाना है। यह अपनी भारतीय परंपरा का आदर्श है। इसे प्रेमचंद की सीमा भी कहा जा सकता है।''[8]

मातृत्व को अत्याधिक महत्व देने की प्रवृत्ति के पीछे सामाजिक एवं धार्मिक परम्पराएँ और संस्कारों का आग्रह है। माताएँ अविवाहित नारियों की अपेक्षा अधिक सुखी

रहती हैं, इसका भी कोई ऐसा प्रमाण नहीं है जो हर समय और हर देश में उपलब्ध होता हो। मातृत्व-पद प्राप्त नारियों के जीवन में भी घुटन और वेदना देखी जाती है। सन्तानविहीन नारी भी यदि चाहे तो अपने जीवन को व्यापक बना सकती है। स्वतन्त्र भारत के संविधान और नारी की आर्थिक स्वतन्त्रता ने इन परम्परागत रूढ़ विचारों को झुठला दिया है। आज नारी का अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व है, वह पुरुष की छायामात्र, उसके चरणों की दासी नहीं रह गई है। वह अब इतनी सक्षम बन चुकी है कि अपने जीवन को अपनी इच्छा के अनुसार जी सकती है।

सच तो यह है कि प्रेमचंद ने एक रचनाकार के रूप में 'गोदान' के माध्यम से तत्कालीन सामाजिक परिवेश में व्याप्त उस कुरूपता का अनुभव किया था, जिससे भारतीय जन-जीवन पीड़ित था। अंग्रेजी राज्य की संवेदनहीनता और शोषण उनके मन को कचोटता था। उन्होंने अपने चारों ओर के अपार मानव-समूह को राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक आदि सभी प्रकार की पाशविकता में पिसते देखा, मनुष्य को भौतिक और मानसिक रूप से बिखरते और टूटते देखा। ऐसे वातावरण में रहते हुए वे अपनी व्यथा व्यक्त किए बिना न रह सके, किन्तु साथ ही मनुष्य के मनुष्यत्व में आस्था रखते हुए उन्होंने ऐसा आदर्श प्रस्तुत किया जो मनुष्य को सुखी बना सकता है, मनुष्यता को ऊपर उठाकर वे जीवन को स्वर्णिम बनाना चाहते थे। इसलिए 'गोदान' में उन्होंने जीवन की कुरूपता का चित्रण अपने आदर्श के पार्श्व में किया है।

'गोदान' में प्रेमचंद ने उपन्यास के सभी तत्वों का निर्वाह किया है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से लेकर प्रेमचंद तक हिन्दी उपन्यासों में जीवन के जो खण्डचित्र मिलते हैं, उनका समग्र संकलित रूप 'गोदान' में उपस्थित है। 'गोदान' को उस युग की कलात्मक समीक्षा अथवा उस युग तक के विभिन्न विचारों का श्रेष्ठ कलात्मक समन्वय कहा जा सकता है।

प्रेमचंद सामाजिक जीवन में व्याप्त निराशा को दूर करना चाहते हैं, वे नया मनुष्य गढ़ना चाहते हैं। वह नया मनुष्य जो सेवा-भाव से ओतप्रोत है, जो प्रकृति का पुजारी है, जो अपने प्राकृतिक रूप में जीवनयापन करता है, जो हँसता, रोता और क्रोध करता है। इस मनुष्य का जीवन आनन्दमय है, सुखमय है, स्वच्छन्द है। जहाँ कुत्सा, ईर्ष्या और जलन के लिए कोई स्थान नहीं है। उन्हें सामाजिक रूढ़ियों और विश्वासों में कोई आस्था नहीं है। इस नये मनुष्य में मानव-धर्म की स्फूर्ति है, जो जीवन, क्रीड़ा, चहक और प्रेम तथा सेवाभाव में ईश्वर का रूप देखता है। जो मानवधर्मी है, कर्मयोगी है, ऐसा मनुष्य ही जीवन को सार्थक, ऊँचा और पवित्र बना सकता है। वह दार्शनिक सिद्धान्तों के सूक्ष्म तात्विक विवेचन के गोरखधन्धों में न पड़कर उसका व्यावहारिक पक्ष ग्रहण कर मानव जाति के भेद-भाव को मिटाकर भ्रातृ-भाव को दृढ़ कर और किसी भी रूप में किसी का शोषण न करना ही जिसका पुनीत कर्त्तव्य है, जिसका जीवन परिष्कृत और जिसमें आत्मशक्ति है, ऐसा मनुष्य ही संसार में नया आदर्श स्थापित कर सकता है। 'गोदान' में प्रेमचंद ने उस दिन की कल्पना की है, जब 'देवत्व' पशुत्व पर विजय प्राप्त करेगा, समाज, देश और मानव-जाति का कल्याणकारी रूप प्रकट होगा।

एक सम्पूर्ण युग की औपन्यासिक परम्परा और भारतीय-जीवन की समग्रता, जीवन-चिन्तन, विचारादर्श का 'गोदान' एक विराट चित्र है। 'गोदान' में वर्णित समस्याएँ वर्तमान जीवन व्यवस्था में आज भी विद्यमान है। जातिगत भेदभाव, राजनीतिक, आर्थिक प्रश्न आज भी उपस्थित है, इन बिन्दुओं पर 'गोदान' आज भी प्रासंगिक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास- रामस्वरूप चतुर्वेदी प्रकाशक-लोकभारती प्रकाशन, 15ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद-1 चतुर्थ संस्करण: 1984, पृष्ठ-167
2. वही, पृष्ठ-167
3. हिन्दी साहित्य का विकास-सं०-डॉ० नगेन्द्र प्रकाशक- मयूर पेपरबैक्स, ए-95, सेक्टर-5, नोएडा-201301
   द्वितीय मयूर पेपरबैक्स, संस्करण-1991, पृष्ठ-576
4. साहित्यालोचन- ले० श्यामसुंदर दास प्रकाशक-इंडियन प्रेस (पब्लिकेशंस) प्राइवेट लिमिटेड, प्रयाग (इलाहाबाद), 19वीं संस्करण: सं० 2043, पृष्ठ-119
5. वही, पृष्ठ-119
6. हिन्दी साहित्य उद्‌भव और विकास- हजारी प्रसाद द्विवेदी प्रकाशक-राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 8 नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-110002, तृतीय संस्करण: 1985, पृष्ठ-250
7. गोदान-प्रेमचंद प्रकाशक-सरस्वती प्रेस, 2/43, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, संस्करण :1988, पृष्ठ-208
8. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास- बच्चन सिंह प्रकाशक-लोकभारती प्रकाशन, दरबारी बिल्डिंग, एम.जी. रोड, इलाहाबाद, संशोधित संस्करण-2006, पृष्ठ-201

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

स्त्री विमर्श के आईने में मन्नू भण्डारी के उपन्यासों में वैवाहिक दृष्टिकोण

• राजेश कुमार सिंह

सारांश – हिन्दी उपन्यास पर स्त्री–विमर्श का गहरा प्रभाव पड़ा है और धीरे–धीरे यह प्रभाव बढ़ता जा रहा है। कृष्णा, सोबती, मन्नू भण्डारी, उषा प्रियंवदा आदि ने स्त्री–जीवने का प्रामाणिक अंकन प्रारम्भ किया था जो बाद के उपन्यासों में और घनीभूत हुआ है। मृदुला गर्ग के उपन्यासों (कठगुलाब) चितकोबरा एवं मिलजुल मन, में स्त्री–शक्ति चेतना का रचनात्मक अंकन हुआ है। उन्होंने 'कठगुलाब' में नारी मुक्ति विषयक अपने प्रौढ़ चिंतन का परिचय देते हुए नारी शोषण के सभी रूपों और नारी के सामर्थ्य का समुचित चित्रण किया है। हिन्दी की आधुनिक महिला कथाकारों में मन्नू भण्डारी का नाम विशिष्ट है। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व में नारी मन को टटोलने की अद्‌भुत क्षमता है। उनकी दृष्टि सूक्ष्म है जो कुछ उन्होंने अनुभूत किया– अपने आस–पास देखा, उस सबको अपने उपन्यासों की विषय वस्तु बनाया है। नारी जीवन की अन्तर्मुखी स्थितियाँ परिवेशगत विद्रूपताओं को उभारने और अंकित करने के साथ ही वे नारी मुक्ति के लिए संदेश देती रही है। वे चाहती है कि नारी के प्रति समाज का दृष्टिकोण बदले। नारी मुक्ति के संदर्भ में कही जा रही बातों पर अमल किया जाय, तब सामाजिक परिवर्तन होगा और नारी स्वतंत्र हो सकेगी। प्रस्तुत शोधपत्र में इस बात को रखने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द – स्त्री विमर्श, समास्या, स्वरूप

वास्तव में स्त्रियों की समस्या और स्वरूप को लेकर बातें तो बहुत सी है, जो की जा सकती है पर स्त्री जिस परम्परा का शिकार है वह सदियों से हजारों शाखाओं, प्रशाखाओं में कटती, छटती, बंटती, संकुचित, परिवर्तित, परिवर्धित होती हुई इस मुकाम पर पहुँची है। उसे गुरुओं, पिताओं, पतियों, भाईयों और बेटों ने ही नहीं मांओ, दादियों, परदादियों ने भी बनाया है एक पूरी की पूरी जीवन सामूहिकता जिसने स्त्री के वर्तमान को बाखूबी बड़ी ही शिद्‌दत से गढ़ा है। मेरा संकेत स्त्री–विमर्श की तरफ है जो 21वीं शताब्दी में अपनी पूरी जवानी में है। मन्नू भण्डारी के वैवाहिक सम्बन्ध पर विचार करने के पूर्व उसकी पृष्ठभूमि की एक झलक देखना उपन्यासों में आवश्यक महसूस होता है क्योंकि स्त्री–विमर्श, दलित विमर्श की अपरिहार्यता महसूस की गई। सबसे बड़ा मसला समानता का है। "पुरूषों के समक्ष स्त्रियों की, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षिक समानता का आन्दोलन जिसे कुछ वर्ष पहले तक 'नारीवादी' कहा जाता था। अंग्रेजी में इसके लिए Feminism शब्द प्रचलित है। इस दृष्टि से इसके लिए 'नारीवाद' नाम ही ज्यादा सार्थक है।[1] इस आन्दोलन की जड़े मुख्यत: ग्रेंट ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका में 18वीं शताब्दी के मानवतावाद और औद्योगिक क्रान्ति में थी।

साहित्यिक विधाओं में उपन्यास साहित्य एक यथार्थधर्मी विधा है इस विधा में

• शोधार्थी जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर, म.प्र.

समाज की सामाजिक, धार्मिक, पारिवारिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण किया जाता है। मानव जीवन एवं समाज के प्रश्नों से उपन्यास साहित्य द्वारा सम्पूर्णता से सर्वेक्षण किया जाता है। स्वाधीनता के पश्चात भारतीय जीवन का जो लेखा-जोखा है, मुख्यत: नारी जीवन की जो वास्तविकताएँ है उसका सही और सटीक आंकलन सन 1960 के पश्चात उपन्यास साहित्य में मिलता है। पूर्ववर्ती उपन्यासों की अपेक्षा आधुनिक उपन्यासों में नारी विमर्श ज्यादा सम्पन्न नजर आते हैं।

हिन्दी उपन्यास की विशाल पगयात्रा में नारी को केन्द्र में रखने के तीन चरण बहुत ही आसानी से देखे जा सकते हैं इसका पहला चरण सुधारवादी है, दूसरा चरण यथार्थवादी है और तीसरा चरण स्त्रीवादी है। समकालीन हिन्दी उपन्यासों में स्त्रीवादी प्रतिबिम्ब जो दृष्टिगोचर हो रहा है उसके भी तीन चरण है। पहला चरण अवमानना का है दूसरा विश्व दमन और यौन शोषण अधिकारों से बचने का है और तीसरा चरण कामकाजी स्त्री की स्थिति जो घर से बाहर निकलती है, पुरूषों के हजारों लाखों हमले को सहती है पर अपने अधिकारों को अडिग होकर समाज व्यवस्था वही दृढ़ता से माँग करती है। महिला कथाकारों ने नारी जीवन से नारी जीवन से जुड़े इन तमामों पहलुओं और इन सबके बीच अपनी नई राह बनाती हुई पितृसत्तात्मक व्यवस्था को चुनौती देती हुई नारी की मुखर पीड़ा को पूरी संवेदनशीलता के साथ नारी कथाकारों ने अपनी कहानियों, उपन्यासों में बाखूबी चित्रित किया है। हर पीढ़ी का जीना तो अपने वर्तमान में ही होता है। वर्तमान में ही अपने अस्तित्व को झकझोरती लड़ाइयाँ लड़ी जाती है। लड़ाई का तर्क जहाँ कहीं से भी उदित हो रहा हो लड़ाई की हिंसा वर्तमान का ही अंग है। यह हिंसा सामाजिक परिदृश्य पर इस समय उग्र स्तर से दिखाई दे रही है।[2]

हिन्दी कथा साहित्य को महिला लेखन के माध्यम से समृद्धि करने वाली लेखिकाओं में मन्नू भंडारी का नाम शीर्ष पर है। वह नारी विमर्श से जुड़े महत्वपूर्ण मुद्दों को औपन्यासिक फलक पर प्रस्तुत करती है। मन्नू भण्डारी ने उपन्यास साहित्य ज्यादा नहीं रचा है पर जो भी रचा है उसमें नारी जीवन की वास्तविकता इतनी बारीकी से पिरोया है कि वह पाठक के ह्रदय को बहुत ही आसानी से छू लेती है। उनकी औपन्यासिक कृतियों पर दृष्टि डाले तो एक इंच मुस्कान (1961), आपका बंटी (1971), महाभोज (1979), स्वाक्षी (1982), मलवा (1971)[3] 'कलवा को छोड़कर अन्य सभी उपन्यासों में नारी जीवन से सम्बन्धित अनेक जटिल प्रश्नों को उठाया है। मन्नू भंडारी के सभी उपन्यासों में नारी अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करती समाज व पुरूष यातना को झेलती हुई उत्तर आधुनिकता के मूल्यों से टकराती तथा पुरूष में एकाधिकारों में अपना दखल दर्ज करने में सक्षम है। मन्नू भण्डारी ने अपने उपन्यासों में नारी विमर्श का जो स्वर उठाया है वह उनके अपने अनुभव की जमीन से उपजा है। लेखिका ने नारी की जिस पीड़ा दमन का अनुभव किया है, उन्मुख आकाश में विचरने के लिए जिन सुख स्वप्नों की परिकल्पना किया है उसे मन्नू भण्डारी ने अपने लेखन में अभिव्यक्ति प्रदान किया है। मन्नू भण्डारी ने नारी विमर्श का महत्वपूर्ण पक्ष स्त्री-देह का उन्मुक्त चित्रण एवं यौन सम्बन्धों की उन्मुक्तता की अभिव्यक्तिकरण की विशेष आलोचना किया है- ''देह की मुक्ति अगर किसी के लिए सेक्स की मुक्ति का पर्याय हो यानी कि स्त्री को एक साथ कई जगह सेक्स सम्बन्ध रखने की छूट हो तो इससे मेरी असहमति है, कम से कम इस देश में तो यह सम्भव भी नहीं क्योंकि इसके लिए एक सम्बन्धहीन जीवन अनिवार्य है और आज तक तो हमारे देश का स्त्री विमर्श न पति परिवार निरपेक्ष है न संतान निरपेक्ष हो इतनी छूट तो उसके लिए अनिवार्य है कि एक या पति के साथ

सम्बन्ध गड़बड़ाने पर वह उसे छोड़कर दूसरे के साथ सम्बन्ध जोड़ने पर कईयों के साथ सेक्स सम्बन्ध साथ-साथ चलने वाली स्थिति कम से कम मुझे तो स्वीकार्य नहीं क्योंकि सम्बन्धों की भी अपनी एक नैतिकता होती है, एक गरिमा होती है।[4] नारी-विमर्श के माध्यम से मन्नु भंडारी के रचित उपन्यासों में नारी मुक्ति, उसकी सुरक्षा और अधिकारों के संदर्भ में एक गंभीर चिंतन को व्यापक धरातल प्रदान किया है।

स्त्री और पुरुष सृष्टि के निर्माण में दो परस्पर पूरक तत्त्व है। इसलिए "समाज वृक्ष के सघन मूल का पहला अंकुर स्त्री-पुरूष और उनकी संतान में पनपा इसे निर्मूल कर देना संभव नहीं हो सकेगा।[5] क्योंकि "नारी पृथ्वी है और पुरुष बीजरूप, नारी जल है और पुरूष अग्नि। अग्नि और जल के संयोग से ही सृष्टि का कार्य होता है।[5] समाज निर्माण की यह व्यवस्था विवाह सम्बन्ध से ही पूर्ण होती है भारतवर्ष में विवाह के सम्बन्ध को अति पवित्र बन्धन माना जाता है और इस सम्बन्ध को अत्यन्त सम्मान और आदर की दृष्टि से देखा जाता है और यह आदर सम्मान वैदिक युग से लेकर वर्तमान तक विवाह संस्था को मिलता रहा है।

आधुनिक या वर्तमानकाल की नारी विवाह के जन्म-जन्मान्तर के सम्बन्धों को नहीं मानती है अतः अब विवाहों में नवीन मूल्य विकसित हो रहे हैं जैसे वर्तमान समय में प्रेमविवाह, विधवा विवाह, विजातीय विवाह, परिव्यक्तता विवाह का चलन वर्तमान समय में बड़ी ही तेजी से बढ़ रहा है। शिक्षा के व्यापक प्रचार प्रसार के कारण नारी अब जाति, वर्ग, आयु के बन्धनों में बंधने के लिए तैयार नहीं है। विवाह के प्रति नारी का दृष्टिकोण अब बिल्कुल बदल गया है। हिन्दी उपन्यासों में विवाह सम्बन्धी के प्रथाओं जैसे बहुविवाह, अनमेल विवाह, विधवा का उसके देवर के साथ विवाह का विरोध प्रदर्शित करती है। वही दूसरी तरफ प्रेम विवाह, विधवा विवाह, परिव्यक्त विवाह को हवा दे रही है। मन्नू भण्डारी ने अपने उपन्यासों में विवाह सम्बन्ध को नये पुराने सम्बन्धों के संदर्भ को उठाया है- मेरे ख्याल में तुम भारत के सन्दर्भ में विवाह संस्था के भविष्य के बारे में जानना चाहते हो तो इतना समझ लो कि सारे आधुनिकीकरण के बावजूद कुछ सदियों तक तो इसे कोई खतरा नहीं है। लेकिन इसके स्वरूप को जरूर बदलना होगा, इसके परम्परागत दकियानूसी रूप ने तो इसे परिवार में पुरूष के वर्चस्व का आधार बना रखा है जिसमें स्त्री के लिए विवाह सम्बन्ध नहीं, मातृ बन्धन बनकर रह गया है अब आज की आधुनिक नारी इस बन्धन को स्वीकार करने को तैयार नहीं परिणाम तलाक की बढ़ती संख्या ऐसी स्थिति में विवाह की जरूरत पर ही प्रश्न उठने लगे है।[6] बदलते सामाजिक परिवेश में नारी ने स्वयं को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में घोषित करने का जो साहस दिखाया है उसका उदाहरण मन्नू भण्डारी के उपन्यासों की नारी पात्र अमला, रंजना, शकुन मिनी आदि है। एक इंच मुस्कार उपन्यास की नारी पात्र 'अमला' पति किशोरी बाबू द्वारा विवाह में एक वर्ष बाद ही 17 वर्ष की उम्र में त्यागी परिव्यक्ता नारी है। अमला के मन में विशेषकर विवाह के प्रति विरोध का भाव है, क्योंकि विवाह ने उसे आन्तरिक पीड़ा दिया है। पिता जी जब उसे पुर्नविवाह के लिए कहते हैं तो अमला दृढ़ स्वर में जबाब देती है- 'मैं किसी से विवाह करना नहीं चाहती किसी से भी नहीं। मैं इतनी निर्बल और निरीह नहीं हूँ कि जीवन बिताने के लिए कोई सहारा चाहिए।[7] अमला अपना अकेलापन विवाह द्वारा दूर नहीं करती बल्कि विवाह बंधन से मुक्त रहकर मुक्त आसंग से मुक्ति तलाशने लगती है। अमला के सम्पर्क में आये हर पुरुष को अपना साधन बनाती है पर वह विवाह बंधन स्वीकार नहीं करती। इसीलिए वह अपने मित्र अमर को सदैव विवाह के लिए रोकती है- हो सकता है रंजना तुम्हारे जीवन की पूरक हो तुम्हें उससे प्यार हो फिर भी मैं यही

कहूँगी उससे विवाह मत करना... मैं सोचती हूँ विवाह केवल एक बन्धन है एक फन्दा है जो प्यार का गला घोंट देता है विवाह कर लोगे तो मर जाओगे, वह मर जायेगी, तुम लोगों का प्यार मर जायेगा, तुम्हारे जीवन में रह जायेगा एक मानसिक तनाव और उसके जीवन में रह जायेगी अविरल अश्रुधारा।[8] अमला को एक ऐसे जीवन की आकांक्षा है जो जल की एक उन्मुक्त धारा हो... खेलो, पहाड़ों, जंगलों पर समान निष्ठा से बहती जल की धारा, चाहे कैलाश हो चाहे अमर हो या कोई और हो। उसके लिए जब समान है। वह सबके लिए समान है। समान बनकर ही रहना चाहती है, किसी एक की होकर नहीं रहना चाहती रह भी नहीं सकती। 'वह अन्जानी, अनदेखी, दिशाओं में बहना चाहती है, दूर-दूर निरूद्देश्य सी लक्ष्यहीन सी।[9]

अमला अपना मानसिक संतुलन खोकर उन्मुक्त आसंग का शिकार बनकर जल में रहकर भी प्यासी की प्यासी रही। विवाह बन्धन को स्वीकार न करके अमला को क्या मिला वह अपने अहं को मार न सकी, जबकि अहंकार ने ही अमला को मार दिया- वह पत्नी भी बनी है, प्रेयसी भी और मित्र भी पर न वह किसी के जीवन को संवार सकी, न कोई उसके जीवन को सँवार सका और सारे सम्बन्ध एक असफल प्रयोग की तरह मन पर बोझ सा छोड़कर टूटते चले गये।[10] वह स्वयं स्वीकार करती है उसका जीवन उसका चरित्र अमला जैसी नारियों का मार्गदर्शन अवश्य करेगा। पर मानवजीवन की मूलभूत आवश्यकता होने के कारण विवाह संस्था को नकारा नहीं जा सकता है। लेकिन विवाह के पर होने वाले भद्देपन और शोषण को बर्दाश्त भी नहीं किया जाना चाहिए।

आपका बंटी उपन्यास की प्रमुख 'नारी पात्र' शकुन' के जीवन का सत्य है कि नारी की जायज महत्वाकांक्षा और आत्मनिर्भरता पुरूष के लिए चुनौती बन जाती है। नतीजे में दाम्पत्य तनाव उसे अलगाव तक ला छोड़ता है। जो शकुन का यही बल्कि भारतीय समाज में निरन्तर अपनी जगह बनाती फैलाती और अपना कद बढ़ाती आधुनिक नारी का सत्य है। डॉ. निर्मला जैन भी बेटी के चरित्र से अधिक शकुन के चरित्र को जटिल और प्रभावक मानती है।[11] मानसिक पीड़ा असंख्य दर्द, द्वन्द्व सहने से अच्छा यही होगा कि पुर्नविवाह करके एक नवीन जीवन की शुरूआत की जाय। शकुन भले ही एक माँ या पत्नी है पर वह रूढ़ियों का डटकर विरोध करती है पर जब सवाल उसके व्यक्तित्व का आता है तो वह मूल्यों में बंधना पसंद करती है वैवाहिक मूल्यों को वह नकार नहीं पाती क्योंकि उसके अन्दर भी एक नारी भावना मौजूद रहती है। जो घर परिवार और एक सच्चा जीवन साथी चाहती है- औरत कहीं की कहीं पहुँच जाय। फिर भी पुरूष का साथ उसके लिए कितना जरूरी है- पर वह साथ हो सही अर्थों में।[12]

शकुन अजय से तलाक लेकर पुनः वह डॉ. जोशी से विवाह कर लेते है जो उसने अजय में नहीं पाया वह डॉ. जोशी में पाती है। स्वामी उपन्यास की नारी पात्र 'मिनी' है जो सामाजिक परंपराओं और संस्कारों के कारण आत्मधिकार और पापबोध वाली कुल बधु नहीं बनती और न ही पति के चरणों में झुककर अपने किए की क्षमता मानती है वह भारतीय नारी की भूमिका को आदर्श पत्नी रूप देती है प्रेमिका पतिनित्व के अर्न्तद्वन्द्व को झेलते हुए अंत में पतित्व को चुनती है। मिनी 'माया' मणिबाबू में यहाँ बड़े ही लाड़ प्यार में चली स्वतंत्रता सोच वाली है। नरेन्द्र मणिबाबू से मिलने आया करता था। जिसकी तरफ वह आकृष्ट हो जाती है, पर निर्णायक क्षण घनश्याम में साथ विवाह के प्रस्ताव के समय आता है। मणिबाबू, घनश्याम और नरेन्द्र में व्यक्तित्व से पूर्णतः परिचित थे। मिनी को समझाते हुए कहते है- मिनी तू घनश्याम से शादी करना वही तुम्हारे लिए सही पात्र है....। तेरे मन की बात

मैं जानता हूँ। तू नरेन्द्र वह तुझे प्यार कर सकता है पर निभा घनश्याम ही सकेगा।[13] मिनी के मामा की मृत्यु हो जाती है अब मिनी अकेली रह जाती है। वह सब कुछकर सकती है पर अपने मामा की बात को वह टाल नहीं सकती है। पूरे रीति रिवाज के साथ मिनी का विवाह घनश्याम के साथ हो जाता है।

महाभोज उपन्यास की 'नारी पात्र' इस तरह की है जो रूढ़ि बन चुकी परम्पराओं में ही जीवन सुखी से जीती है, जिन्हें अपने घर परिवार एवं पति से बेहद लगाव होता है, जिनका अपना निजी व्यक्तित्व घर एवं पति के आगे कुछ भी नहीं होता है। जिन्हें सिर्फ अपने घर एवं पति में सुख-दुःख से ही सरोकार होता है।

निष्कर्षतः अन्त में कहा जा सकता है आज वर्तमान समय में स्त्री-विमर्श अपनी जवानी पर है। जिस तरफ भी देखिये इसकी चर्चा चल रही है। स्त्री विमर्श के आईने में कई महिला कथाकार है जो इस विमर्श को ऊँचाई पर ले जा रही है। वास्तव में स्त्री विमर्श के जड़ में पूरा का पूरा स्त्री समाज है। जो सतत समता, त्याग की मांग कर रही है। मन्नू भण्डारी, ममता कालिया, शिवानी, शशिप्रभा शास्त्री, कृष्णा सोबती, राजी सेठ, उषा प्रियंवदा, मृदुला गर्ग, नाजिरा शर्मा, मृणाल पाण्डेय आदि प्रमुख महिला हस्ताक्षर है जिन्होंने स्त्री विमर्श को नई ऊँचाई प्रदान किया है। मन्नू भण्डारी एक ऐसी हस्ताक्षर है जिनके उपन्यासों में स्त्री विमर्श की मधुर झंकार स्पष्ट सुनाई पड़ती है। वैवाहिक दृष्टिकोण से मन्नू भण्डारी के उपन्यास अद्वितीय है। परंपरागत रीति-रिवाजों के बन्धनों में बंधे पात्र जैसे 'मिनी' (स्वार्थ) पूरी शिद्दत से भारतीय संस्कृति की रक्षा करते है, पर पूरे खुले स्वरूप में अमला जैसे पात्र अपने अहं को तो नहीं मार पायी पर अहंकार ने अमला को जरूर मार दिया। मन्नू भण्डारी देह की स्वतंत्रता को स्त्री-विमर्श का मर्ग नहीं मानती उसे ओछा बताती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. डॉ. अमरनाथ, हिन्दी आलोचना की परिभाषिक शब्दावली, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012, पृष्ठ सं.-385
2. डॉ. उमा शुक्ल, डॉ. माधुरी छेड़ा, आधुनिक कथा साहित्य में नारीः स्वरूप और प्रतिभा, अरविन्द प्रकाशन, एस.एल. मार्ग परेल बम्बई, प्रथम संस्करण, 1995 पृ. 1
3. हिन्दी का गद्य साहित्य 'रामचन्द्र तिवारी' विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2012, पृष्ठ-262-63
4. वही, पृष्ठ-173-174
5. सं. हरिनारायण, कथादेश पत्रिका जनवरी-2009, पृष्ठ-174-175 दिल्ली
6. महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियाँ, पृष्ठ-117
7. सीमोन दा वोडवार (अनुवाद डॉ. प्रभा खेतान) स्त्रीः उपेक्षिता, पृ.-77
8. मन्नू भण्डारी, राजेन्द्र यादव, एक इंच मुस्कान, पृ.-37
9. वही, पृष्ठ-118
1. वही पृष्ठ-38
11. वही पृष्ठ-124
12. डॉ. वंशीधर, डॉ. राजेन्द्र मिश्र, मन्नू भण्डारी का श्रेष्ठ सर्जनात्मक साहित्य, पृष्ठ-7
13. मन्नू भंडारी, आपका बंटी, पृष्ठ-110
14. मन्नू भण्डारी, स्वामी, पृष्ठ-27-28

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

प्रतिभा के धनी "नन्दलाल बोस" का नारी चित्रण

• निशा गुप्ता

सारांश – विश्वभारती को चलाने और शोभावर्धन के लिए रवींद्रनाथ ठाकुर ने कुछ महान चित्रकारों को चयनित किया था। नन्दलाल बोस भी उन्हीं प्रतिभाओं में से एक थे। उनकी शिल्प सुलभ समदृष्टि ने उनके जीवन को सादगी प्रदान की। विश्व भारती में ये मास्टर मोशाय के नाम से प्रसिद्ध थे। ये हमेशा खद्दर का गेरूए रंग का कुर्ता पाजामा पहना करते थे। इन्हें भारत के सर्वश्रेष्ठ आधुनिक चित्रकारों में माना जाता है। इनके विषय मूलरूप से भारतीय पौराणिक कथाओं, गॉवों और नारी से सम्बन्धित थे। कला की शिक्षा माँ क्षेत्रमणि देवी से मिट्टी के खिलौने आदि बनाते देखकर मिली। बंगाल के कुम्भकार ही इनके पहले गुरू थे। वास्तव में ये विलक्षण प्रतिभा के धनी थे।

मुख्य शब्द – विश्व भारती, प्रेरणा स्त्रोत, कल्पना, मुखर, रूपाकृति

नन्दलाल बोस का जन्म 3 दिसम्बर 1882 ई0 में मुंगेर जिला बिहार में हुआ था। इनके पिता का नाम पूर्णचंद बोस था। ये एक कुशल आर्किटेक्ट थे तथा महाराजा दरभंगा की रियासत के मैनेजर थे। इन्होने 1905 से 1910 के बीच कलकत्ता गवर्नमेंट कॉलेज ऑफ आर्ट में अवनीन्द्र नाथ टैगोर से कला की शिक्षा प्राप्त की थी।

15 वर्ष की आयु में नन्दलाल बोस उच्च शिक्षा के लिए बंगाल गए। उस समय बिहार और बंगाल अलग–अलग नहीं थे। कला के प्रति उनका रूझान प्रारम्भ से ही था। नन्दलाल बोस अजन्ता के भित्ति चित्रों से काफी प्रभावित हुए थे। ये कलाकारों के उस ग्रुप में शामिल हो गये थे जो पारंपरिक भारतीय संस्कृति को जिन्दा रखना चाहते थे।

इन्होने संविधान की मूल प्रति का डिजाईन बनाया था। इनके प्रसिद्ध चित्रों में डांडी मार्च, संथाली कन्या, सती का देह त्याग इत्यादि है। इन्होने कई पुस्तकें भी लिखी है – रूपावली, शिल्पकला, शिल्पचर्चा। स्वतन्त्रता आन्दोलन में भी इन्होने बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया। गॉधी जी, सुभाषचन्द्र बोस, जवाहर लाल नेहरू को नन्दलाल अतीव प्रिय थे। इन्होने राष्ट्रीय पुरस्कारों जैसे भारत रत्न और पदम् श्री के प्रतीक भी बनायें।

नई दिल्ली स्थित नेशनल गैलरी ऑफ मॉडर्न आर्ट में इनकी 7000 कलाकृतियॉ संग्रहित है। इन्होने अपनी चित्रकारी के माध्यम से तत्कालीन आन्दोलनों के विभिन्न स्वरूपों, सीमाओं और शैलियों को चित्रकृतियों के रूप में उभारा। इनकी चित्रकला में एक जादू था। इन्होने अपने विद्यार्थी जीवन में ही ऐतिहासिक तथा पौराणिक चित्रों की मौलिक रचना की, जिन चित्रों को उन्होने गिने–चुने अमीरों को न बेचकर अपने गॉव के साधारण व्यक्तियों को चार–चार आने में ही बेच दिया।[1]

भारतीय कला को एक नया स्वरूप प्रदान करने वाले चित्रकार आचार्य नन्दलाल बोस केवल एक चित्रकार ही नहीं बल्कि नयी पीढ़ी के प्रेरणा स्त्रोत भी है। इनके चित्रों के विषय शुद्ध भारतीय है साथ ही इन्होने कृतियों में विषय की गहराई को उभारने के प्रयास भी

• एसोसिएट प्रोफेसर, जे.के.पी. पीजी. कॉलेज मुजफ्फरनगर।

किये। इन्होंने प्रकृति को अपने चित्रों के आधार के रूप में स्वीकार किया है तथा इन चित्रों में नारी आकृति को कभी पेड़ों में छिपा हुआ तो कभी प्रकृति को नारी रूप की रहस्यमयी छवि को उभारने का प्रयास करते हुए चित्रित किया है।

"यौवन में शबरी" नामक नारी चित्र में नारी आकृति को एक पेड़ पर चढ़ा हुआ दिखाया है। इस चित्र में नारी आकृति का बाह्य रेखांकन यद्यपि अजन्ता से प्रभावित है तो भी मांस पेशियों के अंकन से देहिक यथार्थ को निकट लाने का प्रयास किया है। इसी प्रकार चित्र "जंगल में नारी" नामक चित्र में चित्रित नारी आकृति पेड़ के नीचे खड़ी दिखाई गयी है। "जंगल में नारी" नामक इस चित्र में नारी आकृति को अजन्ता जैसी कोमलता और गति देने का प्रयास किया है परन्तु देह के घुमाव में अति रेख दिखाई पड़ता है अर्थात् कमर में ऊपर का अंग सामने की ओर तथा कमर से नीचे का अंग पृष्ठ भाग जान पड़ता है परन्तु इसके कारण चित्र के कलागत गुणों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है।

नन्दलाल बसु ने अपनी कमनीय कल्पना तथा उपयोगी सूझ-बूझ के माध्यम से प्रकृति को नारी रूप के साथ चित्र फलक पर अंकित किया है। इन्होने नारी रूप को घरेलू कामकाज करते हुए तथा पशु-पक्षियों के साथ भी अंकित किया है। 'सुजाता' शीर्षक नामक चित्र में नारी आकृति को दूध दूहते हुए चित्रित किया गया है। चित्र में नारी रूपाकृति का लयात्मक अंकन है। हाथ पतले चित्रित है तथा पीठ को अनावृत दिखाने का प्रयास भी किया गया है। बालों का अंकन तथा बाँह का रेखांकन और अलंकरण तथा हाथ की अंगुलियों का अंकन आदि सभी में आकृति नारी की है, परन्तु इसके भाव पुरूषोचित दिखाई पड़ते है। इस चित्र में यथार्थ और लयात्मकता का मिश्रण हो गया है।

इन्होने नारी आकृति को कला के विषय में पौराणिक युग से उतारकर आधुनिक युग की पृष्ठभूमि पर प्रतिष्ठित किया है। इनके नारी चित्रों में रेखाओं का प्राणमय अंकन देखते ही बनता है। आलोचकों के कथानुसार उनकी कृतियाँ कला के इतिहास में एक क्षण है, सदा प्रवाहमान निरन्तर गतिशील धारा नहीं है।[2] चित्र 'माँ और बच्चा' में भी इन्होने नारी आकृति को रेखाओं के माध्यम से चित्रित किया है। इस चित्र में अंकित नारी रूपाकृति के देह का अंकन भी रेखाओं के माध्यम से स्पष्ट रूप से दिखाया गया है। वस्त्रों का अंकन भी गहरी रेखाओं द्वारा किया है जिससे इनमें पारदर्शी प्रभाव दिखाई दे रहा है। नारी आकृति के हाथ कलात्मक रूप से अंकित है तथा वक्षस्थल, नितम्ब व पैरों को वस्त्रों के पारदर्शी प्रभाव के कारण स्पष्ट दिखाया है। यद्यपि चित्र में नारी रूप अजन्ता से प्रभावित होने पर भी इसमें अजन्ता की लयात्मकता का अभाव अनुभूत होता है।

इनके चित्रों में साधारण नारी का वास्तविक जीवन भी स्वस्थ रूप से मुखर हुआ है। जैसे चित्र 'ससुराल जाते हुए' में वास्तविक लोक जीवन की अभिव्यक्ति को पूरी कुशलता से केवल एक दृश्य में दिखाने का प्रयास किया है। इस चित्र में नारी आकृति को यथार्थ रूप में अंकित किया है तथा वस्त्रों के अंकन से भी गति को दर्शाया गया है।

इनके हिन्दू धर्म व पौराणिक विषयों पर आधारित चित्रों में नारी रूप का कलात्मक व सुन्दर चित्रण हुआ है। इन्होने अपने चित्रित रूपों में ब्राह्य रूप के साथ-साथ उसके आन्तरिक गुणों पर भी बल दिया।[3] शायद यहीं कारण रहा कि इनके चित्रों में नारी रूप अति सौम्य व सुन्दर तथा लयात्मक दिखाई देते है। चित्र 'बैठी मुद्रा में बुद्ध' में नारी रूप अति सुन्दर व सौम्य चित्रित है साथ ही नारी आकृति को अलंकारित करने के साथ-साथ देह का अंकन भी सुन्दर व कलात्मक रूप से किया गया है। नारी रूपाकृति के पेट पर नाभि को दर्शाने से

उसके रूप का सौन्दर्य और अधिक प्रभावशाली हुआ है तथा वस्त्रों के अंकन से भी नारी आकृति के सौन्दर्य उभारने का पूर्ण प्रयास किया गया हे। चित्र 'नौका विहार' में भी नारी आकृति का सुन्दर चित्रण है। नारी रूप के हाथ व देह का अंकन लयात्मक है तथा वस्त्रों के अंकन से गति का आभास होता है।

नन्दलाल बोस रंगो के नहीं बल्कि रेखाओं के धनी थे। ये अपने रंगो के स्वयं सृजक रहे। इन्होने अजन्ता की रेखाओं से प्रभावित होकर अंकन किया है जैसे चित्र 'वीणा वादिनी' में नारी आकृति का अंकन गहरी रेखाओं से किया गया है तथा हाथ-पैरो का अंकन सम्पूर्ण रूप से अजन्ता से प्रभावित है। केश तथा चेहरा, नयन-नक्श तथा मुद्रा से भी अजन्ता की नारी आकृति का आभास होता है। चित्र 'बुद्ध का कपिल वस्तु आगमन' में चित्रित नारी रूप भी अजन्ता के नारी रूप से प्रभावित नजर आता है। हाथ तथा अंगुलियों की बनावट व नयन-नक्श के साथ-साथ हाव-भाव भी अजन्ता की रूपाकृतियों जैसे चित्रित है। भृकुटि और नेत्र अजन्ता से प्रभावित व अलंकरण में भी अजन्ता के प्रभाव का पुट दिखाई पड़ता है। नारी आकृति को ऊपर से कुछ अनावृत चित्रित किया गया है।

इनके नारी चित्र बंगला शैली का प्रतिनिधि कहे जा सकते है जिसके अंकन में अजन्ता के पारम्परिक लक्षणों का प्रभाव रहा है। जैसे नेत्रों की बनावट, भौह, ठोड़ी आदि का अंकन और रेखा प्रवाह भी प्रमुख है। इन्होने अधिकांशतः नारी रूप को ऊपर से अनावृत ही अंकित किया गया है। जैसे चित्र 'पुष्प ले जाते हुए नारी' में भी नारी आकृति के ऊपर से अनावृता रूप में दिखाया है। वस्त्रों का अंकन गहरी रेखाओं के माध्यम से किया गया है, जिसमें वक्षस्थल, पेट व पैरो का अंकन स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा है। यहां भी पारम्परिक देह गठन और रेखा प्रवाह देखा जा सकता है तथा रंगो के प्रयोग में कलात्मकता और विरोधाभास भी है। इसी प्रकार चित्र 'शिव और पार्वती' नामक चित्र में भी नारी आकृति ऊपर से अनावृता के रूप में चित्रित है। अलंकरण तथा वस्त्रों का अंकन उसके रूप के सौन्दर्य तथा लयात्मकता को और भी बढ़ा रहा है। चित्र में अंकित नारी के देह का अंकन अजन्ता के नारी रूप जैसा ही है जो कि नन्दलाल के नारी चित्रण की मुख्य पहचान भी है।

परम्परा के पोषक भी बसु नये आयामी चित्रण के पक्षधर भी रहे है। यथार्थ अंकन उन्हें प्रिय नहीं था फिर भी उन्होने कई चित्रों के यथार्थ रूप से ही नारी रूपाकृति का अंकन किया है। इस प्रकार के चित्रों में सुन्दर रूप के अंकन पर ध्यान न देकर दैहिक परिणामों का यथार्थ अंकन किया गया है। जैसे चित्र 'सँथाली नृत्य' शीर्षक चित्र में नारी आकृति को यथार्थ रूप में चित्रित किया गया है। चित्र में चित्रित नारी रूप ऊपर से अनावृत तथा संथाल नृत्य की मुद्रा में अंकित है। नारी आकृति लयात्मक रूप के स्थान पर पुष्ट एवं स्थूल रूप में अंकित है। नारी रूपाकृति में वक्ष अंकन पर अधिक ध्यान दिया गया है जो नारी के चेहरे और देह में अन्तर का आभास करते है।

भारतीय चित्रकला के क्षेत्र में इन्हें युग प्रर्वतक कहा जा सकता है। देवी-देवताओं तथा महापुरूषों के चित्रों में मानवीय तत्वों की अभिव्यक्ति में किसी को इतनी सफलता नहीं मिली जितनी इन्हें मिली है।[4] सरस्वती तथा काली आदि के चित्रों में ये तत्व पूर्ण रूपेण परिलक्षित होते है। प्रस्तुत चित्र 'काली' में शिव की तांड़व मुद्रा और नारी देह के उन्नत वक्ष, साथ ही क्षीण कटि का सुन्दर मिश्रण दिखाई पड़ता है। चित्र 'सरस्वती' शीर्षक में भी वहीं रूप सौम्य और सहज रूप में अंकित किया गया है।

इनकी चित्रकारी के विषय अधिकाशतः पौराणिक तथा धार्मिक कथा में एवं बुद्ध

जीवन से लिये गये है। साथ ही इन्होने नारी रूप को अलंकरण आदि से अति सुन्दर रूप में चित्रित किया है। जैसे चित्र 'सती और शिव' नामक चित्र। नारी आकृति जो कि पार्वती है, शिव की गोद में लेटी दिखाई गयी है। नारी रूप के हाथ तथा चेहरे का अंकन अजन्ता के नारी रूप जैसा ही है। वस्त्रों के अंकन से नारी रूप को अधिक सुन्दर व प्रभावित दिखाने का प्रयास किया गया है।

नन्दलाल बोस की व्यापक सहानुभूति कल्पना की उड़ान अंकन विधान की बहुमुखी प्रतिभा तो सारे भारत में अद्धितीय है। इनकी शैली बहुत ही अलंकारिक है। उसमें मध्यकालीन भारतीय मूर्तियों का प्रभाव, वस्त्राभूषण आदि के अंकन से स्पष्ट हो जाता है। जैसे चित्र 'अनुपमा' इसी प्रकार का चित्र है जिसमें नारी रूप को मूर्ति जैसा अंकित किया गया है। चित्र में चित्रित नारी रूप देवी का है, जिसमें वक्षस्थल उभरा व कमर को अत्याधिक पतला अंकित किया गया है। वस्त्रों को भी लयात्मक रेखाओं द्वारा अंकित किया गया है। पुरूष आकृति का अत्यन्त कलात्मक रेखांकन और गतिमानता के समकक्ष अन्नपूर्णा की स्थिर मुद्रा आकर्षण बन गयी है। समस्त चित्र में रेखांकन की अलंकारिता और रेखांकन से ही अत्यधिक गतिमानता का प्रभाव उत्पन्न हो रहा है। इसी प्रकार 'अर्द्धनारीश्वर' नामक चित्र में नर और नारी चित्रण एक साथ दिखाने की कल्पना पौराणिक है। इस चित्र में भारतीय शास्त्रीय मूर्तिकला का प्रभाव स्पष्ट दिखता है। मुखाकृति का अंकन नन्दलाल बोस की परिचय शैली में ही है।

नारी रूपाकृति के दैहिक अंकन में भंगिमाओं के जितने विविध रूप बसु महोदय ने दिखाये है उतने किसी अन्य कलाकार ने नहीं दिखाये हैं। इनके कुछ नारी चित्रों की विषय-वस्तु में लोक जीवन साकार होता है। सँथाली, युगल, दुकानदार, किसान, बच्चो को गोद में लिए माता आदि चित्रों में जीवन्त होता नारी रूप आश्चर्यजनक है। इनके तूलिका अंकन, रंग योजना और प्रतीक चित्रण में भी लोक प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है जिसमें रचा-बसा नारी रूप भी परिलक्षित होता है। नन्दलाल बोस के चित्रों में भारतीय आत्मा पूर्णरूप से उतरी है। शिल्प में उनका मर्मबोध इतना गहरा और प्रदीप्त है जो अनागत काल के लिए भारतीय शिल्प इतिहास में भास्कर सहश रहेगा।[5]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. शर्मा, लोकेश चन्द्र, भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास
2. वाचस्पति गैरोला, भारतीय चित्रकला
3. अग्रवाल, डा. गिर्राज किशोर, आधुनिक भारतीय चित्रकला
4. सक्सैना, एन., भारतीय चित्रकला
5. अग्रवाल, डा. आर.ए., कला विलास

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

अध्यात्म शक्ति के द्वारा त्रिविध दु:खों का निवारण

• प्रत्यूश वत्सला द्विवेदी

सारांश - भारतीय दर्शन में अध्यात्म को विशेश महत्त्व दिया गया है। इसके द्वारा कोई भी मनुष्य सहज में सांसारिक दु:खों से निवृत्ति पाकर परमानन्द को प्राप्त करता हुआ मोक्ष को प्राप्त कर सकता है। अतएव सभी विद्याओं में अध्यात्म विद्या को सर्वश्रेष्ठ बतलाया गया है। भारतीय शास्त्रों में अध्यात्म विद्या की अतिशय प्रशंसा की गई है। गीता में कहा गया है कि विद्याओं में, मैं अध्यात्मविद्या हूँ। अतएव इसके द्वारा आत्मतत्त्व का ज्ञान हो जाने पर मानव आत्मज्ञानी हो जाता है और तब वह शोक सागर के पार हो जाता है।

मुख्य शब्द - पुरश्चरण, परवर्ती, मनोवांछित, निरोगता, वैश्विक, निर्वचन, अनुशीलन, उपार्जित, पारंगत, आत्मसाक्षात्कार, आसक्ति।

भारते दिव्य शक्तिः सदा भ्राजते,
यत्र सत्यं शिवं सुन्दरं शोभते।
प्राप्त तस्या प्रसादं जनो नन्दति
वर्द्धतां भारतं भूतले सर्वदा।।[1]

भारत में तीन प्रकार की शक्तियाँ मान्य हुई हैं- (1) आध्यात्मिक, (2) आदिभौतिक एवं (3) आदिदैविक। इन तीन प्रकार की शक्तियों में आध्यात्मिक शक्ति सर्वश्रेष्ठ है। यह सभी प्रकार के दु:खों को दूर करने में सर्वथा सक्षम है। यही कारण है कि समस्त विद्याओं में आध्यात्म विद्या सर्वश्रेष्ठ मानी गई है। श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में भगवान् श्रीकृष्ण स्पष्ट रूप से कह रहे हैं -

"आध्यात्म विद्या विद्यानाम्"[2]

अर्थात् "विद्याओं में मैं आध्यात्म विद्या हूँ।" भारत में वैदिक वाङ्मय से लेकर आज तक के साहित्य में इस आध्यात्मिक शक्ति को देखा जा सकता है। वेदों में ऐसे अनेक मन्त्र है, जो आध्यात्म शक्ति से परिपूर्ण है। जिनकी साधना से मनुष्य विविध प्रकार के दु:खों से निवृत्ति प्राप्त कर सकता है। वैदिक गायत्री मंत्र अपनी अनेक मौलिक विशेषताओं के कारण सम्पूर्ण विश्व में प्रतिष्ठित है। गायत्री शब्द का अर्थ है - "गायन्तं प्रायते = गायत्री। अर्थात् जो गायन करने वाले (जप करने वाले) की रक्षा करती है वह गायत्री है। भारत में ऐसे अनेक महापुरुष हुये हैं, जिन्होंने गायत्री के पुरश्चरण के द्वारा मनोवांछित फल प्राप्त किये हैं। आज भी यदि कोई श्रद्धा और विश्वासपूर्वक गायत्री की साधना करता है तो उससे मनोवांछित फल प्राप्त कर सकता है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि किसी भी मन्त्र की सिद्धि में श्रद्धा और विश्वास परम कारण है। जैसा कि मन्त्र पारिजात में कहा गया है -

"श्रद्धा विश्वासाभ्यां मन्त्र सिद्धि।"[3]

यहाँ यह ध्यातव्य है कि मन्त्र की सिद्धि के लिये योग्य गुरू की अनिवार्यता है।

• असिस्टेंट प्रोफेसर संस्कृत विभाग, डी.बी.एस. कालेज, कानपुर

साधक को चाहिये कि वह योग्य गुरू के श्री चरणों में बैठकर मन्त्र विज्ञान की दीक्षा ले। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि ज्ञान प्राप्ति के लिये और विशेष रूप से अध्यात्म साधना के लिये गुरू का विशेष महत्व है। हमारे देश में गुरु को अत्यधिक महत्व दिया गया है –

गुरुर् ब्रह्म गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः
गुरुर्साक्षात् परब्रह्, तस्मै श्री गुरुवे नमः।।[4]

परवर्ती व भारतीय वाङ्मय में भी गुरु को अतिशय महत्व दिया गया है। हिन्दी साहित्य के प्रख्यात् कविरत्न रामचरितमानस के प्रणेता गोस्वामी तुलसीदास रामचरित मानस की प्रथम चौपाई में गुरु के चरण कमलों में लगी हुयी धूलि की वन्दना करते हैं ''वन्दौ गुरु पद पदम परागा'' यहाँ यह ध्यातव्य है कि गोस्वामी तुलसीदास गुरु के चरण कमलों में लगी हुई धूलि की वन्दना करते हैं। इसी प्रकार वे रामचरितमानस में एक दूसरे स्थान पर लिखते है –

''जै गुरु चरण रेनू सिर धरहिं,
ते जतु सकल बिभव बस करहिं।।[5]

भारतीय वाङ्मय में अनेक स्थानों पर गुरु की महिमा का बखान हुआ है। विद्या ग्रहण करने वाले शिष्य को कभी भी अपने गुरु की निन्दा नहीं करनी चाहिये। कहा गया है कि गुरु की कुबड़ाई करने वाला अगले जन्म में गधे की योनि को प्राप्त करता है और निन्दा करने वाला कुत्ते की योनि को प्राप्त कर लेता है।

''परिवादात् खरो भवति श्वावै भवति निन्दक निन्दकः।।''[6]

यह भी कहा गया है कि जहाँ पर गुरु की निन्दा हो रही हो वहाँ कान बन्द कर लेने चाहिये, अथवा वहाँ से उठकर चले जाना चाहिये, गुरु की निन्दा को नहीं सुनना चाहिये।

''गुरोर यत्र पररवादो निन्दा वाऽपि प्रवर्तते।
कर्णौ तत्र पिधातव्यौ गन्तव्यं व ततोऽन्यतः।।''[7]

इससे यह सिद्ध होता है कि मानव जीवन में गुरु का विशेष महत्व है। बिना गुरु की कृपा से श्रेष्ठ विद्याओं, सिद्धियों और सफलताओं को नहीं पाया जा सकता है। इस संसार सागर को पार करने के लिये गुरु की कृपा अनिवार्य है। रामचरित मानस में भी कहा गया है –

''गुरु बिनु भव निधि तरइ न कोई,
जौ बिरंचि संकर सम होई।।''

वेदों में कहा गया है कि माता–पिता और गुरु ईश्वर के समान मानना चाहिये। मातृ देवो भव, पितृ देवो भव' आचार्य देवो भव। श्रेष्ठ मन्त्रों की 'सिद्धि के लिये गुरु के श्री चरणों में बैठकर दीक्षा लेनी चाहिये। कहा भी गया है – ''गुरु शुश्रूशया विद्या'' अर्थात् गुरु की सेवा के द्वारा विद्या सम्भव है।

वैदिक वाङ्मय में ऐसे अनेक मन्त्र हैं, जो सिद्ध हो जाने पर मनुष्य को पूर्ण सफलता प्रदान करने में सक्षम हैं। उदाहरण के लिये कठिन रोगों से छुटकारा पाने के लिये निम्नलिखित मृत्युंजय मंत्र अत्यधिक प्रसिद्ध है –

ऊँ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम्
उर्वारुकमिव बन्धानान् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।।

इसी प्रकार धन सम्पत्ति प्राप्त करने के लिये श्री सूक्त का मंत्र अत्यधिक सहायक है। मानव जीवन के विविध लक्ष्यों की प्राप्ति में पुरुष सूक्त के मंत्र विशेष सहायक है।

परवर्ती वाङ्मय में ऐसे अनेक मंत्र हैं जो कि श्रद्धा और विश्वासपूर्वक जपने से मनोवांछित फलों को देने वाले हैं। नवार्ण मन्त्र की साधना से मनुष्य अपनी समस्त कामनाओं को पूरा कर सकता है। यह मन्त्र इस प्रकार है –

"ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे"

इस नर्वाण मन्त्र की साधना से कवित्व शक्ति भी बढ़ती है और माता दुर्गा की कृपा प्राप्त होती है। लौकिक विविध सम्पत्तियों और सुन्दरता को प्राप्त करने के लिये माता दुर्गा की श्रद्धा और विश्वासपूर्वक उपासना करनी चाहिये। श्रीमद्भागवद् में कहा गया है "देवीं दुर्गां श्री कामा:।" इसी प्रकार तेजस्वी और निरोग होने के लिये भगवान सूर्य की उपासना करनी चाहिये जैसे कि कहा गया है –

"तेजस्कामो विभावसुम्"[8]

निरोगता के लिये भगवान् सूर्य का यह मन्त्र विशेष लाभदायक है –

"ऊँ ह्रीं तिग्म् रश्मये आरोग्यदाय सूर्यायै: स्वाहा।"

सौभाग्य, आरोग्य विविध सुखों शत्रु विजय सौन्दर्य और विमल यश प्राप्त करने के लिये अगला स्तोत्र के निम्नलिखित मंत्र की साधना करनी चाहिये। "देहि साभौग्य आरोग्यम् देहि मे परं सुखम्। रूपं देहि जये देहि यशो देहि द्विशो जहि।"

वैश्विक बीमारियों और महामारी से छुटकारा प्राप्त करने के लिये दुर्गा सप्तशती अमोघ साधन है। स्नान ध्यान आदि से पवित्र होकर शुद्ध गौ घृत से दीपक जलाकर अगरबत्ती और धूपबत्ती से धूपित कर दुर्गा सप्तशती के शुद्ध पाठकर महामारी से बचा जा सकता हैं यहाँ विशेष ध्यातव्य यह है कि किसी योग्य आचार्य के द्वारा दुर्गा सप्तशती के समस्त मन्त्रों का श्रद्धा और विश्वासपूर्वक श्रवण करना चाहिये ताकि पाठ में अशुद्धि न होने पाये। यदि कोई साधक श्रद्धा और विश्वासपूर्वक दुर्गा सप्तशती का पाठ करता है तो उसे अवश्य ही सिद्धि प्राप्त होगी। दुर्गा सप्तशती में अनेक स्थानों पर सम्पूर्ण विश्व के कल्याण के लिये प्रार्थना की गई है। उदाहरण के लिये निम्नलिखित मन्त्र का अवलोकन करें।

देवि प्रपन्नार्ति हरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोखिलस्य
प्रसीद विश्वेश्वरी पाहि विश्वं त्वमीश्वरी देवी चराचस्य।।[9]

यहाँ सम्पूर्ण विश्व की रक्षा के लिये माता दुर्गा से प्रार्थना की गई है। दुर्गा सप्तशती में अनेक ऐसे मन्त्र हैं जो विविध प्रकार की कामनाओं में सक्षम है। इस प्रकार दुर्गा सप्तशती अनेक मन्त्रों और तन्त्र-साधना का सिद्धि मन्त्र है। संस्कृत के छोटे-छोटे मन्त्र भी विशेष शुद्धि प्रदान करने वाले हैं। 'ह्रीं' शक्ति साधना का प्रमुख मन्त्र है। "श्री देव्य अथर्व शीर्ष" के पाठ से भी पाठक अपनी कामनाओं को पूरा कर सकता है। श्री देव्य अथर्व शीर्ष' में ह्रीं मन्त्र का इस प्रकार निर्वचन किया गया है "वियतीकारसंयुक्तं वीति होतृ समन्वितम् अर्द्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाध्कम्" अर्थात् वियत् = ह् इसमे ई जोडें वीतिहोतृ अर्थात् अग्नि = र् जोड़ें, ई और अनुस्वार जोड़ने से ह्रीं पद की सिद्ध होती है। यह ह्रीं मन्त्र सभी प्रकार की कामनाओं को पूर्ण कर देने वाला है। माता दुर्गा के अनेक रूप हैं, जिनमें महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती प्रमुख है। विविध प्रकार के रोगों के निवारण के लिये निम्नलिखित मन्त्र विशेष रूप से प्रसिद्ध है –

रोगानशेशानपंहसि तुष्टा रुष्टा तु कामानि सकलान भीष्टान्
त्वामाक्षितानां न विपन्नराणां त्वामश्रित्रा ह्यश्रयतां प्रयान्ति।।[10]

भगवान् शिव विद्या और ज्ञान के देवता हैं। श्रीमद्भागवद् में कहा गया है विद्या और ज्ञान के लिये भगवान शिव की साधना करनी चाहिये –

"विद्या कामाः गिरिशं तथा ज्ञान मिक्षेत्तुशंकरात्"[11]

भगवान शंकर को सभी में आदि गुरु माना गया है, वे प्रायः समस्त विद्याओं के जनक हैं। इसी प्रकार भगवान शिव की कृपा प्राप्त करने के लिये 'ऊँ नमः शिवाय' यह मन्त्र विशेष महत्व रखता है। सभी प्रकार की मनोकामनाओं को पूर्ण कर देने वाला राम और सीता का यह मन्त्र अतिशय प्रसिद्ध है "राम रामाये नमः श्री सीतायै नमः" श्रद्धा और विश्वासपूर्वक इस मन्त्र का जप करने से भगवान राम और सीता की कृपा प्राप्त होती है। भगवान श्री कृष्ण का निम्नलिखित मन्त्र अतिशय प्रसिद्ध है 'ऊँ नमो भगवते वासुदेवाये'। राम भक्त हनुमान शीघ्र ही प्रसन्न होकर भक्तों को मनोवांछित फल को देते हैं। मंगलवार को हनुमान चालीसा और सुन्दरकाण्ड का पाठ करने से यह प्रसन्न हो जाते हैं। हनुमान का निम्नलिखित साबर मन्त्र सिद्ध है। इसे दीपावली और होली पर हवन करके सिद्ध कर लेना चाहिये –

"ऐ हनुमान बारह वर्ष को ज्वान
हाथ में लड्डू मुख में पान
हाथ मारत आव बाबा हनुमान
मेरी भक्ति गुरु की शक्ति
फुरे मन्त्र ईश्वरी वाचा।"

इसी प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय मन्त्र, तन्त्र एवं यन्त्र विज्ञान अत्यधिक समृद्ध है। इसके अध्ययन अनुशीलन और साधना के द्वारा साधक सिद्धि प्राप्त कर पुरुषार्थ चतुष्ट्य को सहज में प्राप्त कर सकता है। भारतीय साधना के क्षेत्र में दान का विशेष महत्व है। यहाँ उपार्जित धन की तीन गतियाँ बतलाई गई हैं – दान, भोग और नाश। इन तीन गतियों में दान का सर्वाधिक महत्व है। पाश्चात्य संस्कृति में भोग को महत्व दिया गया है परन्तु भारतीय संस्कृति में दान को सर्वाधिक महत्व दिया गया हैं , रामचरितमानस में कहा गया है –

"सो धन धन्य प्रथम गति जाकी।।"[12]

मनुस्मृति का कथन है कि सामान्य व्यक्ति को दिया गया दान सामान्य फल वाला है, अर्थात् सामान्य व्यक्ति को दिया गया एक रुपये का दान एक ही रुपये का फल देगा। कुछ पढ़े–लिखे व्यक्ति का दान एक रुपये का दो रुपये होगा। अध्ययनशील व्यक्ति को दिया गया दान एक लाख गुना फल देगा और ज्ञान में पारंगत विद्वान को दिया गया दान अनन्त फल वाला होगा।

सममब्राह्मणे दानं द्विगुणं ब्राह्मणब्रुवे,
प्राधीते शतसाहस्रमनन्तं वेदपारगे।।"[13]

किये हुये कर्म और दान का फल अनिवार्य रूप से प्राप्त होता है, परन्तु इस विषय में अतिविचित्र ईश्वरी विधान है। अर्थात् फल तो अवश्य ही प्राप्त होगा परन्तु कब, कहाँ, कैसे प्राप्त होगा यह किसी को भी ज्ञात नहीं। इस प्रकार का विधि का विधान भी सर्वथा उचित है। यदि यह निश्चित हो कि आज दिये गये दान का कल एक लाख गुना हो जायेगा और लोगों को इसका पक्का विश्वास हो जाये तो संसार के सभी बैंक खाली हो जायें अर्थात् कल एक लाख गुना हो जाने के विश्वास से सभी लोग अपना सब कुछ दान कर सकते हैं, परन्तु ईश्वर की यह विचित्र माया है कि लोगों को इस पर पूरा विश्वास नहीं होता परन्तु यह तो सुनिश्चित है कि फल की प्राप्ति अवश्य होगी। परन्तु यह निश्चित नहीं है कि फल की प्राप्ति कब, कहाँ, कैसे होगी, इसीलिये गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं –

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेशु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भुर्भा ते संगोऽस्त्वकर्मणि।।"[14]

इसीलिये भारत में निष्काम कर्मयोग को अत्यधिक महत्व दिया गया है। कर्म फल की अनिश्चितता के विषय में एक महत्वपूर्ण दृष्टान्त है। एक ही क्षेत्र में दो परिवार निवास करते है। एक परिवार में पूजा-पाठ आदि विविध धार्मिक अनुष्ठान किये जा रहे हैं, परन्तु वहाँ विपत्तियाँ सर्वदा मड़राती रहती हैं। अतएव वह परिवार दुखों को भोगने के लिये विवश रहता है, वहीं यदि दूसरा परिवार है जो निरन्तर पाप कर्मों में संलिप्त रहता है। उस परिवार की दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति होती चली जाती है। अतएव लोगों में यह सन्देह होना अनिवार्य है कि जब सत् कर्मों से कल्याण नहीं हो रहा है तो सत्कर्मों और पूजा-पाठ से क्या लाभ। इससे तो वे पापी और दुराचारी ही ठीक है जो पाप और दुराचार करते हुये भी उसका फल नहीं भोग रहे हैं। इस सम्बन्ध में वेद पुराणों और शास्त्रों का यह स्पष्ट अभिमत है कि मनुष्य को किये गये शुभ और अशुभ अर्थात् पाप और पुण्य का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है -

"अवश्यमेव भोगतव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्"[15]

परन्तु फल प्राप्ति की सीमा निश्चित न होने के कारण मनुष्य ईश्वर की माया से मोहित होने के कारण इस रहस्य को नहीं समझ पाता है। इसीलिये मनुस्मृति में कहा गया है कि मनुष्य को असफलता या असमृद्धि को देखकर अपने अन्दर आत्महीनता या अवसाद की भावना नहीं लानी चाहिये। मृत्युपर्यन्त श्रेष्ठ कार्यों में सिद्धि के लिये प्रयत्न करना चाहिये। लक्ष्य या फल को दुर्लभ नहीं मानना चाहिये।

मनुष्य में ईश्वर प्रदत्त एक ऐसी अद्भुत शक्ति है जो उसके द्वारा संकलित समस्त कामनाओं को पूरा कर देती है।

यथा संकल्पपितांष्चेयह सर्वान् कामान् समष्नुते।।

इस प्रकार पूर्व वर्णित दो परिवारों में फल प्राप्ति की जो विपरीत स्थिति है उसका कारण यह है कि जो परिवार वर्तमान में पूजा-पाठ और मन्त्र जाप कर रहा है उसे वर्तमान में उसका फल नहीं प्राप्त हो रहा है, यह उसके पूर्व जन्मों में किये गये पाप कर्म ही हैं, जिनका फल उसे वर्तमान में भोगने पड़ रहे हैं और दूसरा परिवार जो इस समय पाप कर्म कर रहा है और विविध प्रकार के सुखों को भोग रहा है उसके पूर्व जन्म में किये गये पुण्यों का फल है वह परिवार जो वर्तमान में पाप कर रहा है, अगले किसी भी जन्म में उसको उन पापों का फल अवश्य ही भोगना पड़ेगा। इसलिये इस विषय में भ्रमित नहीं होना चाहिये। पुण्य कर्मों पूजा-पाठ और मन्त्र साधना आदि का फल यदि उसे यहाँ नहीं प्राप्त हो रहा है तो इसमें उसके पूर्व जन्म में किये पाप ही कारण हैं जब उसके पापों के भोग समाप्त हो जायेंगे तो उसके पुण्य फलों के भोग का समय आ जायेगा और वह सुखादि भोगों को प्राप्त कर लेगा इसका प्रत्यक्ष उदाहरण यह है कि एक जीवात्मा धनाढ्य घर में जन्म लेकर प्रारम्भ से ही सुखों का भोग करने लगता है और कोई जीवात्मा अपने पाप कर्मों के कारण किसी दरिद्र, गरीब परिवार में जन्म लेता है और प्रारम्भ से ही गरीबी के कष्टों को भोगता हुआ कष्टमय जीवन यापन करता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत में आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आदिदैविक इन तीन प्रकार की शक्तियों में आध्यात्मिक शक्ति को विशेष महत्व दिया गया हैं। वैदिक वाङ्मय पुराणों और स्मृतियों में आध्यात्मिक शक्ति की महत्ता प्रतिपादित हुई है। हमारे भारत देश की अध्यात्म विद्या पर विशेष आस्था है। अध्यात्म विद्या की साधना से कोई भी साधक सहज में ही आत्मसाक्षात्कार कर सकता है। यह विद्या मोक्ष के मार्ग को प्रशस्त करने

में सर्वथा सक्षम है। आधुनिक युग में जहाँ, पाश्चात्य देश भौतिक उपलब्धियों की होड़ में लगे हुये हैं, वहीं आज भी हमारे देश में आध्यात्मिक मूल्यों का विशेष आदर है। यहाँ कर्म फलों की आसक्ति का आदर नहीं है। अपितु निष्काम कर्मयोगके प्रति आदर दिखलाया गया है। श्रीमद्भगवद्गीता का यह कथन कि कर्मफल में आसक्ति न रखकर जो व्यक्ति ईमानदारी के साथ अपने कर्तव्य का पालन करता है वह संन्यासी और योगी है। इसके विपरीत जो अपने कर्तव्य का ईमानदारी के साथ पालन नहीं करता है वह सन्यासी और योगी नहीं है।

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।
स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः।।"[16]

अतएव यह स्पष्ट है कि मानव जीवन की सम्पूर्णता के लिये आध्यात्म मार्ग से बढ़कर और कुछ नहीं है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. तत्वपारिजात 3/17
2. श्रीमद्भगवद्गीता 10/32
3. मन्त्र पारिजात 3/23
4. मन्त्र पारिजात से उद्धृत
5. रामचरितमानस
6. मनुस्मृति 2/201
7. मनुस्मृति 2/200
8. श्रीभागवतम् 3/3
9. दुर्गासप्तशती 11/3
10. दुर्गासप्तशती 11/29
11. श्रीमद्भागवत्गीता
12. श्रामचरितमानस से उद्धृत
13. मनुस्मृति 7/85
14. श्रीमद्भागवत्गीता 2/47
15. तत्वपारिजात 7/17
16. श्रीमद्भागवत्गीता 6/1

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

समस्तीपुर जिला के ताजपुर प्रखण्ड का शस्य प्रतिरूप और उत्पादकता : एक भौगोलिक अध्ययन

● विभा रानी

सारांश-कृषि उत्पादकता, कृषिगत क्षेत्र से प्राप्त यह शुद्ध लाभ है, जिसके अन्तर्गत उत्पादन की मात्रा, क्षेत्रीय आधार पर गहनता तथा प्रसार को प्रदर्शित करती है। अर्थात् किसी भी प्रति इकाई कृषि क्षेत्र की उत्पादकता में उससे प्राप्त शुद्ध लाभ एवं उस इकाई का क्षेत्रीय विस्तार दोनों सम्मिलित है। कृषि उत्पादकता के स्तर का निर्धारण कृषि उत्पादन के उद्देश्य से प्राकृतिक संसाधनों का मानव-निर्मित अवस्थापनात्मक संरचना द्वारा की गई शोषण प्रक्रिया से होता है।

मुख्य शब्द - शस्य प्रतिरूप, प्रखण्ड, उत्पादकता

भूमि संसाधन उपयोग में कृषि क्षमता अथवा कृषि उत्पादकता का अध्ययन कृषि स्तर के क्षेत्रीय प्रतिरूप को समझने के लिए अपरिहार्य है। वास्तव में इसके द्वारा विकास की अवस्था के अनुसार क्षेत्रों का विश्लेषण करके जनसंख्या एवं उसके पोषण स्तर में पायी जाने वाली विषमता को दूर किया जा सकता है। प्रायः कृषि क्षमता एवं कृषि उत्पादकता दोनों समानार्थी है। इनका प्राथमिक संबंध प्रति हेक्टेयर उत्पादन से है जो सभी प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक कारकों के अन्तर्सम्बन्धों का प्रतिफल होता है। यहाँ उल्लेखनीय है कि प्राकृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक कारक गत्यात्मक होते हैं। अतः इनके द्वारा प्रतिफलित कृषि उत्पादकता भी परिवर्तनशील होती है, इसलिए यह कहा जा सकता है कि विभिन्न प्राकृतिक एंव मानवीय प्रयासों के अन्तर्सम्बन्धों से प्रभावित प्रति इकाई कृषि क्षेत्र से प्राप्त अधिकतम शुद्ध लाभ कृषि क्षमता या कृषि उत्पादकता है।

कृषि उत्पादकता, कृषिगत क्षेत्र से प्राप्त यह शुद्ध लाभ है, जिसके अन्तर्गत उत्पादन की मात्रा, क्षेत्रीय आधार पर गहनता तथा प्रसार को प्रदर्शित करती है।[1] अर्थात् किसी भी प्रति इकाई कृषि क्षेत्र की उत्पादकता में उससे प्राप्त शुद्ध लाभ एवं उस इकाई का क्षेत्रीय विस्तार दोनों सम्मिलित है। कृषि उत्पादकता के स्तर का निर्धारण कृषि उत्पादन के उद्देश्य से प्राकृतिक संसाधनों का मानव-निर्मित अवस्थापनात्मक संरचना द्वारा की गई शोषण प्रक्रिया से होता है।

भूमि संसाधन उपयोग के अन्तर्गत विश्व के अनेक विद्वानों ने विभिन्न सांख्यिकीय विधियों से कृषि उत्पादकता का निर्धारण किया है। इस विधियों में प्रति इकाई उपज एवं कोटि गुणांक विधि पर आधारित विधि, प्रति श्रम लागत इकाई उत्पादन पर आधारित विधि, कृषि लागत आय पर आधारित विधि एवं भूमि की पोषक भार वहन क्षमता पर आधारित विधि आदि कृषि क्षमता के मापन की उल्लेखनीय विधियाँ है।

केण्डाल (1939) ने प्रति हेक्टेयर उपज तथा कोटि गुणांक पर आधारित विधि द्वारा

● शोधार्थी, विश्वविद्यालय भूगोल विभाग,ल.ना.मि.वि., दरभंगा

कृषि-उत्पादकता का अध्ययन किया है।[2] स्टैम्प (1958) ने अन्तर्राष्ट्रीय तुलना हेतु 20 देशों की नौ शस्यों के आधार पर कृषि-क्षमता निर्धारण में इसी विधि का प्रयोग किया है।[3] मो० शफी ने सन् 1960 में उत्तर प्रदेश के सन्दर्भ में केण्डाल विधि को ही अपनाया है।[4] गांगुली (1938) ने शस्य-उपज-सूची विधि को अपनाया।[5] इसमें उन्होंने अध्ययन इकाई में नौ शस्यों को चुना तथा अपने सूत्र के आधार पर प्रत्येक शस्य की उपज सूची की गणना की है।

अति निम्न उत्पादकता जम्मू कश्मीर, राजस्थान मरूभूमि, तेलंगाना तथा कर्नाटक के पठारी भागों में पायी जाती है जबकि निम्न उत्पादकता हिमाचल प्रदेश, अर्द्ध मरूस्थलीय भाग, उड़ीसा, आन्ध्र प्रदेश एवं कर्नाटक के कुछ भागों में पायी जाती है। मध्यम उत्पादकता शिवालिक भावर-तराई क्षेत्र, तमिलनाडु, उड़ीसा के तटीय क्षेत्र तथा पूर्वी कर्नाटक में पायी जाती है। उच्च उत्पादकता उत्तरी भारत के मैदानी भाग, आन्ध्र प्रदेश एवं तमिलनाडु के तटवर्ती भाग तथा गुजरात के क्षेत्र में पायी जाती है। अति उच्च उत्पादकता पंजाब, हरियाणा, पश्चिम बंगाल, असम घाटी तथा भारत के विभिन्न भागों में छिटपुट मिलती है।

कृषि उत्पादकता के निर्धारण में सुरेन्द्र सिंह (1994) का प्रयास भी सराहनीय है। इन्होंने प्रति हेक्टेयर उत्पादित शस्यां का मूल्यांकन रूप्ये में निकालकर 1988 से 1990 के औसत की गणना के आधार पर भारत को सात वर्गों - प्रति हेक्टेयर रू. 1750 से अधिक, रू० 1500 से 1750, रू. 1250 से 1500, रू. 100 से 1250, रू. 750 से 1000, रू. 500 से 750 तथा रू. 500 से कम उत्पादित शस्यों के मूल्य वर्गों में विभक्त किया। स्पष्ट है कि उत्तरी मैदान, पश्चिम बंगाल, दक्षिणी तटवर्ती भाग तथा गुजरात मैदान में प्रति हेक्टेयर अधिक मुद्रा की प्राप्ति होती है जबकि अल्प मुद्रा की प्राप्ति राजस्थान, मध्य तथा दक्षिणी भारत के पठारी भाग में है। शेष भारत में मध्यम मूल्य की प्राप्ति होती है। दोनों विधियों के आकलन में आंचलिक अन्तर पाया जाता है।

कृषि उत्पादकता निर्धारण की ये विधियाँ किसी क्षेत्र विशेष तथा समय विशेष के लिए उपयोगी होती है। शस्यों का उत्पादन, उनकी सापेक्षित महत्ता और मूल्यों में मांग के अनुसार परिवर्तन निरन्तर होता रहता है। प्रत्येक क्षेत्र विशेष में कोई फसल विशेष महत्वपूर्ण हो सकती है, उसका मूल्य भी अधिक हो सकता है परन्तु वही फसल अन्य क्षेत्र में नगण्य हो सकती है तथा उसका मूल्य भी कम हो सकता है। अतः किसी एक विधि को सर्वमान्य स्वीकार नहीं किया जा सकता। भारत तथा विश्व के विभिन्न भागों में कृषि उत्पादकता निर्धारण हेतु इन्हीं विधियों में आंशिक संशोधन करके विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने अध्ययन प्रस्तुत किये हैं।

शस्योत्पादन कृषि निष्पादन की विभिन्न प्रक्रियाओं का प्रतिशत है। कृषि में विभिन्न प्रक्रियाओं के फलस्वरूप शस्यों के पारस्परिक प्रतिरूप उत्पादन एवं प्रकार में व्यापक अन्तर आ जाता है। अतः शस्य प्रतिरूप का विश्लेषण मिट्टी के स्वरूप, उत्पादकता उपयोग दक्षता एवं विकास सम्भावनाओं को स्पष्ट करने में सहायक होता है। शस्यों के वितरण प्रारूप को शस्य स्परूप की संज्ञा भी दी जाती है। यह सभी शस्यों के प्रतिशत से ज्ञात किया गया है जो भौतिक, आर्थिक, सामाजिक, तकनीकी तथा प्रशासनिक इत्यादि कारणों से प्रभावित होता है। अध्ययन क्षेत्र के आर्थिक, सांस्कृतिक एवं भौतिक विकास का मूलाधार कृषि है, परन्तु यहाँ निर्वाहक कृषि का प्रचलन है। तालिका 3.6 के अनुसार 1413 फसली के 95.13 प्रतिशत भाग पर खाद्यान्न उत्पादन किया गया है। न्यायपंचायत शाहपुर बघौनी, ताजपुर, भोरोखड़ा, फतेहपुरवाला, रहीमाबाद एवं कस्बेआहर में खाद्यान्न के अन्तर्गत प्रयुक्त क्षेत्रफल का

प्रतिशत क्रमशः 97.24, 96.38, 95.06, 94.49, 93.35 तथा 93.21 है, जिससे स्पष्ट है कि क्षेत्र में व्यावसायिक फसलों का उत्पादन अत्यल्प क्षेत्रफल पर किया जाता है। कुल बोये गये क्षेत्रफल के मात्र 6.03 प्रतिशत भाग पर वाणिज्य फसलोत्पादन किया जाता है जिसमें 3.88 प्रतिशत भूमि पर गन्ना तथा 1.29 प्रतिशत भूमि पर आलू उत्पन्न किया जाता है। व्यावसायिक अल्प शस्योत्पादन का प्रमुख कारण है कि प्रत्येक भाग में क्षेत्रीय आपूर्ति की फसलों का उत्पादन कर लिया जाता है जिससे शस्य आर्थिक तंत्र में अधिक भिन्नता नहीं मिलती है। वस्तुतः अध्ययन क्षेत्र के शस्य प्रतिरूप की विशेषता उनका क्षेत्रीय विशिष्टीकरण है। खरीफ एवं रबी अध्ययन क्षेत्र की महत्वपूर्ण ऋतुक फसलें हैं।

खरीफ :- ग्रीष्म ऋतु में उगायी जाने वाली फसलों को खरीफ कहा जाता है। यह अध्ययन क्षेत्र का कृषि की दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण मौसम है, क्योंकि इस समय कुल कृषि योग्य भूमि के लगभग के लगभग 4/5 भाग पर कृषि की जाती है। यह जून से प्रारम्भ होकर नवम्बर तक चलता है। तालिका 3.7 के आधार पर समस्त खरीफ शस्यों का विश्लेषण किया गया है जिससे अनेक प्रकार के कृष्य स्वरूप परिलक्षित होते हैं। शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल के 62.02 प्रतिशत भूमि का उपयोग धान्य फसलों के उत्पादन में किया जाता है। अधान्य जैसे तिलहन, गन्ना तथा सब्जियों के उत्पादन हेतु 34.25 प्रतिशत भूमि प्रयुक्त हुई है। पशुओं के चारे जैसे बजड़ी, बरसीम आदि हरे चारे के उपयोग में केवल 3.73 प्रतिशत भूमि प्रयुक्त हुई है। अध्ययन क्षेत्र में खरीफ के अन्तर्गत बायी जाने वाली प्रमुख फसलें निम्नलिखित है -

तालिका 3.5

ताजपुर प्रखंड : विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित

सिंचाई के साधन	कुल सिंचित क्षेत्रफल का प्रतिशत 2001
नहर	18
नलकूप	66
कुआँ	05
तालाब एवं अन्य	11

स्रोत - जिला सांख्यिकी कार्यालय, समस्तीपुर।

तालिका 3.6

Food Grain Production Area

ताजपुर प्रखण्ड : खाद्यान्न उत्पादन में प्रयुक्त क्षेत्रफल (2011)

मुख्य ग्राम पंचायत	कुल खाद्यान्न क्षेत्रफल का योग	सम्पूर्ण बोया गया क्षेत्रफल	खाद्यान्न क्षेत्रफल का प्रतिशत
ताजपुर	1336	1850	72.25
शाहपुर बघौनी	1920	2310	83.12
भेरोखड़ा	1790	2218	83.72
रहीमाबाद	1507	1911	78.90
कस्बे आहर	1292	1720	75.18
फतेहपुर वाला	1653	2040	81.05
योग	9498	12049	78.5

स्रोत - जिला सांख्यिकी कार्यालय, समस्तीपुर।

धान - अध्ययन क्षेत्र की सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है जो सम्पूर्ण बोये गये क्षेत्रफल के 35.16 प्रतिशत तथा खरीफ के अन्तर्गत बोये गये क्षेत्रफल के 72.36 प्रतिशत भाग पर उगाया जाता है। मानचित्र 3.7 से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा तथा उत्तम मिट्टी

के फलस्वरूप धान के अन्तर्गत कृषि योग्य क्षेत्रफल का अधिकांश भाग प्रयुक्त होता है। क्षेत्र में निजी नलकूपों द्वारा सिंचाई की सूविधा के कारण धान की गहन कृषि की जाती है। इस क्षेत्र में कृषक मजदूरों की उपलब्धता तथा कृषि यंत्रों की पर्याप्ता धान की उत्तम कृषि में सहायक है।

गन्ना – अध्ययन क्षेत्र के सम्पूर्ण बाये गये क्षेत्रफल में 3.12 प्रतिशत खरीफ के अन्तर्गत बोये गये क्षेत्रफल के 6.54 प्रतिशत भाग पर गन्ने की कृषि की जाती है। अध्ययन क्षेत्र में गन्ने की कृषि कार्य में पर्याप्त भिन्नता पायी जाती है।

अरहर – खरीफ की दलहन फसलों में अरहर का सबसे अधिक महत्त्व है। 0.05 प्रतिशत सम्पूर्ण बोये गये क्षेत्रफल या 0.10 प्रतिशत खरीफ में बोये गये क्षेत्रफल का अरहर की खेती होती है।

तालिका 3.7

शस्य प्रतिरूप – खरीफ

फसल	क्षेत्रफल हेक्टेयर में	सम्पूर्ण बोये गये क्षेत्रफल का प्रशित	खरीफ के अन्तर्गत बोये गये क्षेत्रफल में
(अ) धान	4255	35.16	72.36
मक्का	246	5.26	11.30
गेहूँ	663	15.60	8.18
(ब) दलहन			
अरहर	42	1.00	2.00
उड़द, मूँग, मसूर	53	1.25	2.45
(स) तिलहन	21	0.50	1.01
सब्जियाँ	195	4.60	8.25
गन्ना	106	2.50	7.12
कुल खाद्यान्य	5722	48.12	95.25
पशु आहार	213	1.65	31.35
खरीफ का कुल क्षेत्रफल	5945	49.77	100.00

स्रोत – खरीफ चिट्ठा ताजपुर, फसली (सन् 2011)

मक्का – खाद्यान्न में मक्का का विशेष स्थान है क्योंकि पैदावार की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है। विकसित तथा शहरी क्षेत्रों के निकट इसे जायद की फसल के अन्तर्गत रखते हैं। वस्तुतः यह अब सभी क्षेत्रों में खाद्यान्न की आपूर्ति हेतु बोया जाता है। जहाँ पर सिंचाई की सुविधा है, वहाँ इसे पहले उगाया जाता है, पुनः उसी खेत में धान बोया जाता है। जहाँ पर सिंचाई की असुविधा है, यहाँ खरीफ की फसल के साथ बोया जाता है।

प्रखण्ड के सम्पूर्ण बाये गये क्षेत्रफल 5.26 प्रतिशत तथा खरीफ में बाये गये क्षेत्रफल के 11.30 प्रतिशत भू–भाग पर मक्का की कृषि की जाती है। सबसे अधिक मक्का ग्राम पंचायत भेरोखड़ा में बोया जाता है।

रबी :– रबी अध्ययन क्षेत्र की दूसरी प्रधान शस्य ऋतु है। यह अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से मई प्रथम सप्ताह के मध्य तक प्रभावी है। इस मौसम में शीत एवं संतुलित सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

तालिका–3.8 के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि सम्पूर्ण बोये गये क्षेत्रफल को 42.58 प्रतिशत भाग पर रबी फसलों का उत्पादन होता है। रबी के अन्तर्गत बोये गये कुल

क्षेत्रफल के 88.63 प्रतिशत भाग पर खाने योग्य अन्न तथा 13.25 प्रतिशत भाग पर दलहन और शेष 11.35 प्रतिशत भाग पर सब्जियाँ तथा पशु आहार बोया जाता है। रबी के प्रमुख फसलें निम्न है –

गेहूँ – धान के बाद गेहूँ क्षेत्र की दूसरी प्रधान शस्य है। इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण बोये गये क्षेत्रफल का 38.12 प्रतिशत तथा रबी में बोये गये क्षेत्रफल का 74.24 प्रतिशत भूमि प्रयुक्त होती है। गेहूँ की कृषि के लिए उचित सिंचाई एवं उर्वरक मिट्टी की आवश्यकता होती है। गेहूँ के नये किस्मों के अविष्कार एवं कृत्रिम उर्वरकों के प्रयोग में गेहूँ की उत्तम पैदावार की जाती है। फलतः अनेक क्षेत्रों में गेहूँ व्यावसायिक फसल का स्थान प्राप्त कर लिया। प्रमुख खाद्यान्न होते हुए भी ग्रामीण क्षेत्रों में दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु गेहूँ का विक्रय भी किया जाता है जिससे अन्य फसलों की अपेक्षा गेहूँ की उपज पर अधिक ध्यान दिया जाता है। इस क्षेत्र का संपूर्ण भाग सामान्य कृषि का क्षेत्र है।

तालिका 3.8

ग्राम पंचायतवार : विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल

मुख्य ग्राम पंचायत	मक्का	उर्द	गन्ना	गेहूँ	जौ	चना	मटर	मसुर	आलू	सरसों
ताजपुर	52	3	65	712	10	36	63	25	36	13
शाहपुर बघौनी	58	4	67	828	10	39	78	38	53	10
भेरोखड़ा	42	2	103	1066	01	26	69	30	33	31
रहिमाबाद	43	3	72	596	06	30	54	44	39	09
कस्बेआहर	48	4	52	708	14	29	48	84	39	10
फतेहपुर वाला	51	4	130	744	03	07	55	11	22	08
योग	294	20	489	4654	51	167	367	232	222	81

स्रोत : खरीफ फसल ताजपुर प्रखण्ड फसली सन् (2013)

तालिका 3.9

ग्राम पंचायतवार : विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल प्रतिशत मे

मुख्य ग्राम पंचायत	मक्का	उर्द	गन्ना	तिल	गेहूँ	जौ	चना	मटर	आलू	सरसों	मूंग	मसूर
ताजपुर	22.72	15.38	13.29	7.70	15.30	19.61	21.56	17.17	21.21	16.05	..	10.77
शाहपुर बघौनी	18.10	30.78	13.70	30.46	17.80	19.61	23.35	21.25	23.83	12.34	41.18	16.37
भेरोखड़ा	17.13	.	21.06	..	22.91	16.68	15.56	18.80	14.86	38.27	17.65	12.93
रहिमाबाद	7.15	15.38	17.72	15.38	12.81	11.76	17.38	14.72	17.56	11.16	11.72	18.96
कस्बेआहर	31.20	38.46	10.65	38.46	15.20	27.46	17.36	13.80	17.56	12.34	11.76	36.21
फतेहपुर वाला	13.00	..	26.68	..	15.98	5.88	4.79	14.98	9.97	9.84	17.59	4.76

जौ तथा बेआर – बेअर का कोई स्पष्ट शस्य प्रतिरूप नहीं प्राप्त होता है। इसके अन्तर्गत प्रायः

मोटे आनाज तथा एक साथ कई फसल एक ही खेत में बोयी जाती है। रबी के अन्तर्गत बोये गये सम्पूर्ण क्षेत्रफल के मात्र 0.40 प्रतिशत पर जौ की कृषि की जाती है। जौ का प्रचलन लगभग समाप्त प्राय: होता जा रहा है। खाद्यान्न की दृष्टि से इसका महत्व बहुत कम है। अब लोग इसका अधिक प्रयोग पशुओं के लिए करते हैं।

चना – रबी फसलों के अन्तर्गत चना क्षेत्र की दूसरी महत्वपूर्ण कृषि है। इसके लिए सिंचाई की अल्प आवश्यकता पड़ती है। असिंचित क्षेत्रों में भी चना की कृषि की जाती है। सम्पूर्ण रबी के 2.72 प्रतिशत क्षेत्रफल पर चना बोया जाता है। क्षेत्रीय स्तर पर थोड़ी भिन्नता पायी जाती है।

तालिका 3.10

शस्य प्रतिरूप – रबी

फसल	क्षेत्रफल (हे0 में)	सम्पूर्ण बोये गये क्षेत्रफल का प्रतिशत	रबी के अन्तर्गत बोये गये क्षेत्रफल का प्रतिशत
धान्य	–	–	–
गेहूँ	4654	36.95	75.82
जौ	51	0.40	0.83
बेझर	5	0.04	0.08
दलहन			
चना	167	1.33	2.72
मटर	367	2.91	5.98
मसूर	232	1.84	3.78
कुल खाद्यान्न	5476	43.47	89.21
तिलहन			
सरसों	90	0.71	1.47
अलसी			
आलू	3.22	2.56	5.25

स्रोत – कृषि विभाग जिला मुख्यालय समस्तीपुर रबी चिट्ठा ताजपुर प्रखण्ड

मटर – मटर अध्ययन क्षेत्र की दलहन फसलों में प्रमुख हैं। सम्पूर्ण बोये गये क्षेत्रफल में मटर का 2.91 प्रतिशत है तथा रबी के अन्तर्गत बोये गये क्षेत्रफल में 5.98 प्रतिशत भाग मटर का है। ग्राम पंचायत स्तर पर सर्वाधिक 78 हेक्टेयर, क्षेत्रफल भेरोखड़ा तथा अल्प 42 हेक्टेयर ग्राम पंचायत ताजपुर में बोया जाता है। ग्राम पंचायत स्तर पर इसकी कृषि में सामान्य भिन्नता पायी जाती है। सबसे कम 13.02 प्रतिशत ग्राम पंचायत रहीमाबाद तथा सर्वाधिक 25.26 प्रतिशत फतेहपुर वाला में बोया जाता है।

तिलहन :– रबी की तिलहन फसलों में सरसों एवं अलसी प्रमुख है। अध्ययन क्षेत्र में रबी की तिलहन फसलों की कृषि कम की जाती है। मात्र 8.82 प्रतिशत सम्पूर्ण बोये क्षेत्रफल तथा 1. 28 प्रतिशत रबी के क्षेत्रफल का तिलहन की कृषि में प्रयुक्त होता है।

तालिका 3.11

शस्य प्रतिरूप – रबी

फसल	1990	1995	2000	2007	2013
धान	57.55	62.25	64.35	72.00	76.65
गन्ना	7.95	6.67	9.85	10.10	9.65
उड़द मूंग	5.30	4.95	2.35	2.85	4.15
मक्का	6.43	6.00	8.15	11.00	9.15
मरूआ	13.72	9.45	9.15	2.85	0.52
अन्य	9.05	10.38	6.45	1.20	0.88
योग प्रतिशत	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00

स्रोत – कृषि विभाग, समस्तीपुर ।

जायद – अध्ययन क्षेत्रों में जायद की फसलों पर कम ध्यान दिया जाता है। सम्पूर्ण बोये गये क्षेत्रफल के मात्र 1.23 प्रतिशत भाग पर जायद की कृषि की जाती है। जायद की कृषि में प्रमुख रूप से मूंग, उर्द, सनई, सोयाबीन, शकरकन्द को सम्मिलित किया गया है जबकि सब्जियाँ अधिक उगाई जाती है। ग्राम पंचायत कस्बेआहर एवं रहीमाबाद में क्रमशः 72 हेक्टेयर और 128 हेक्टेयर, इसके अतिरिक्त शाहपुर बघौनी तथा भेरोखड़ा ग्राम पंचायत में क्रमशः 85 हेक्टेयर 72 एवं 68 हेक्टेयर भूमि जायद की उपज में प्रयुक्त होती है। शहरी क्षेत्रों में सन्निकट वाले भागों में अपेक्षाकृत अधिक जायदी फसल बोयी जाती है।

अन्य – फसलों में आलू एवं पशुओं के चारे के उत्पादन में लगे क्षेत्रफल को सम्मिलित किया गया है। आलू इस समय बहुत महत्वपूर्ण आधार पर हो गया है। इसकी खेती निजी आवश्यकता पूर्ति हेतु प्रत्येक गाँव में की जाती है। वस्तुतः यह क्षेत्र की क्रमागत शस्य हो गयी है। शस्य प्रतिरूप के इस वर्ग के अन्तर्गत उन्हीं फसलों को सम्मिलित किया गया है जिनका कोई निर्धारित शस्य प्रतिरूप नहीं है। इसमें पशुओं का चारा भी प्रमुख है। सम्पूर्ण क्षेत्र में 260 हेक्टेयर भूमि ही रबी के अन्तर्गत पशु आहार में प्रयुक्त होती है जो सम्पूर्ण बोये गये क्षेत्रफल का 1.76 प्रतिशत तथा रबी के क्षेत्रफल का 4.3 प्रतिशत भाग है।

संदर्भ–ग्रंथ सूची

1. Thakur Binda : Land Utilization and Urbanisation, Deep and Deep Publications, New Delhi P. 93
2. ओझा प्रभांशु : ग्रामीणों के सामाजिक–आर्थिक उत्थान हेतु उठाए गए कदम, कुरूक्षेत्र, सितम्बर 2016, P. 31-34
3- Stemp L.D. : The land of Britain, Its use and Misuse 1962 P. 426
4. Shafi M. : Land Utilization in Eastern U.P. AMU, Aligadh (1960) P. 112
5. Pandey M.N. : Land Utilization in Rural Environs of Samastipur (Unpublished Thesis) P. 50

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

कोरोना वायरस-एक महामारी

• मंजरी अवस्थी

सारांश – कोरोना वायरस यानी कोविड 19 से बचने के लिए आप नियमित रूप से अपने हाथ साबुन और पानी से अच्छे से धोएं जब कोरोना वायरस से संक्रमित कोई व्यक्ति खांसता या छींकता है तो उसके थूक के बेहद बारीक कण हवा में फैलते हैं, इन कणों में कोरोना वायरस के विषाणु होते हैं। संक्रमित व्यक्ति के नजदीक जाने पर ये विषाणुयुक्त कण सांस के रास्ते आपके शरीर में प्रवेश कर सकते हैं। अगर आप किसी ऐसी जगह को छूते हैं, जहां ये कण गिरे हैं और फिर उसके बाद उसी हाथ से अपनी आंख – नाक या मुंह को छूते हैं तो ये कण आपके शरीर में पहुंचते हैं, ऐसे में खांसते और छींकते वक्त टिश्यू का इस्तेमाल करना, बिना हाथ धोए अपने चेहरे को न छूना और संक्रमित व्यक्ति के संपर्क में आने से बचना इस वायरस को फैलने से रोकने के लिए बेहद महत्वपूर्ण हैं।

मुख्य शब्द – कोरोना, महामारी, संक्रमण

प्रस्तावना – कोरोना वायरस संक्रमण के कारण बूढ़ों और पहले से ही सांस की बीमारी (अस्थमा) से परेशान लोगों, मधुमेह और हृदय रोग जैसी परेशानियों का सामना करने वालों के गंभीर रूप से बीमार होने की आशंका अधिक होती है, कोरोना वायरस का इलाज इस बात पर आधारित होता है कि मरीज के शरीर को सांस लेने में मदद की जाए और शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाया जाए ताकि व्यक्ति का शरीर खुद वायरस से लड़ने में सक्षम हो जाए, कोरोना वायरस का टीका बनाने का काम अभी चल रहा है, अगर आप किसी संक्रमित व्यक्ति के संपर्क में आते हैं तो आपको कुछ दिनों के लिए खुद को दूसरों से दूर रहने की सलाह दी जा सकती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी लोगों के लिए एहतियात बरतने के तरीकों के बारे में जानकारी जारी की है। संक्रमण के लक्षण दिखने पर व्यक्ति को अपने स्थानीय स्वास्थ्य सेवा अधिकारी या कर्मचारी से संपर्क करना चाहिए, जो लोग बीते दिनों कोरोना वायरस संक्रमित व्यक्ति के संपर्क में आए हैं, उनकी जांच की जाएगी, अस्पताल पहुंचने वाले सभी मरीज जिनमें फ्लू (सर्दी जुकाम और सांस लेने में तकलीफ) के लक्षण हैं, स्वास्थ्य सेवा अधिकारी उनका परीक्षण करेंगे। परीक्षण के नतीजे आने तक आपको इंतजार करने और दूसरों से खुद को दूर रखने के लिए कहा जाएगा। कोरोना वायरस से सावधानी रखना आवश्यक है। कोरोना वायरस का संबंध वायरस के ऐसे परिवार से है, जिसके संक्रमण से जुकाम से लेकर सांस लेने में तकलीफ जैसी समस्या हो सकती है। इस वायरस को पहले कभी नहीं देखा गया है। इस वायरस का संक्रमण दिसंबर में चीन के वुहान में शुरू हुआ था। डब्लू.एच. ओ. के मुताबिक, बुखार, खांसी, सांस लेने में तकलीफ जैसे लक्षण प्राथमिक तौर पर देखे जाते हैं। अभी तक इस कोरोना वायरस के उपचार के लिए किसी प्रकार वैक्सीन नहीं विकसित किया जा सका है। वर्ल्ड वाइड फंड फॉर नेचर ने अपने बयान में कहा है, इस स्वास्थ्य संकट को एक खतरे की घंटी के रूप में लिया जाना चाहिए

• सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र शासकीय कन्या महाविद्यालय, इटारसी

ताकि संकटग्रस्त जानवरों को पालतू बनाने और उनके अंगों को खाद्य पदार्थों के रूप में और औषधीय गुणों के चलते उनके दोहन को रोका जा सके, हालांकि, चीनी सरकार ने स्पष्ट किया है कि ये प्रतिबंध फौरी तौर पर रहेगा। चीन की तीन सरकारी संस्थाओं ने अपने संयुक्त बयान में कहा है, सभी प्रजातियों के वन्य जीवों को पालने, एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने और बेचने पर इस घोषणा से लेकर राष्ट्रीय महामारी की स्थिति खत्म होने तक प्रतिबंध लगाया जाता है, चीन ने इसी तरह का प्रतिबंध साल 2002 में सार्स वायरस के फैलने पर लगाया था, लेकिन संरक्षको के मुताबिक, इस बैन के कुछ महीनों बाद ही चीन में वन्य जीवों का व्यापार धड़ल्ले से होने लगा। चीन में जानवरों के व्यापार को लेकर जांच करने वाली संस्था इन्वॉयरनमेंट इंवेस्टिगेशन एजेंसी से जुड़े डेबी बैंक्स बताते हैं, इस इसे एक अवसर के रूप में देखते हैं जिससे वन्य जीवों के पालन, प्रजनन, पालतू बनाए जाने और मांस के साथ-साथ औषधीय गुणों के लिए भी इस्तेमाल पर पूरी तरह से प्रतिबंध लगाया जा सके। विशेषज्ञ मानते हैं कि एविएन इंफ्लूएंजा और बर्ड फ्लू की वजह से कई जंगली पक्षियों की प्रजातियों के संरक्षण में मदद मिली है।

उद्देश्य –

1. कोरोना से संक्रमित लोगो की जानकारी प्राप्त करना।
2. कोरोना के प्रमुख लक्षण की जानकारी प्राप्त करना।
3. कोरोना से बचाव के लिए सरल उपाय खोजना।
4. कोरोना से सुरक्षा के लिए उपाय खोजना।
5. कोरोना संक्रमण के बारे में जानकारी प्राप्त करना।

इस मसले पर काफी समय से चर्चा जारी थी। राष्ट्रीय टास्क फोर्स ने व्यापक चर्चा के बाद इस बारे मे फैसला लिया है। यह पाया गया कि कोरोना से संक्रमित लोगों में सूंघने और स्वाद महसूस करने की क्षमता मे कमी आई है, इसे अब संक्रमण के लक्षणो में शामिल कर लिया गया है। देश में कोरोना मरीजों की संख्या 30 जनवरी से 15 अप्रैल के बीच निम्नवत् पाई गई है।

तालिका क्र. 01

देश में कोरोना मरीजों की संख्या

विवरण	30 जनवरी	15 फरवरी	29 फरवरी	15 मार्च	31 मार्च	15 अप्रैल
मरीज बढ़े	1	2	0	111	1283	10973
कुल मरीज	1	3	0	114	1397	12370
कुल मोंते	0	0	0	2	35	442
मोतें बढ़ी	0	0	0	2	33	387
	30 अप्रैल	15 मई	31 मई	15 जून	30 जून	16 जुलाई
मरीज बढ़े	22493	85784	190609	152417	242766	414202
कुल मरीज	34863	50921	190609	152417	242766	414202
कुल मोतें	1154	2754	5408	9915	17410	25100
मोते बढ़ी	732	1599	2655	4507	7495	7690

संदर्भ – दैनिक भास्कर 17 जुलाई 2020

देश में कोरोना मरीजों की संख्या 15 मई से 15 जुलाई के बीच निम्नवत् पाई गई है।

कोरोना मरीजों की संख्या (15 मई से 15 जुलाई)

15 मई				15 जून				15 जुलाई			
राज्य	मरीज	वृध्दिदर	मृत्युदर	राज्य	मरीज	वृध्दिदर	मृत्युदर	राज्य	मरीज	वृध्दिदर	मृत्युदर
महाराष्ट्र	29100	7.5%	37%	महाराष्ट्र	110744	3.6%	37%	महाराष्ट्र	267665	3%	4%
तमिल नाडू	10108	9.7	0.7	तमिल नाडू	46504	5.7	1.03	तमिल नाडू	147324	3%	4%
गुजरात	9932	4.9	0.1	दिल्ली	42829	6.1	3.27	दिल्ली	115346	1	2.99
दिल्ली	8895	5.8	1.4	गुजरात	24104	2.5	6.25	कर्नाटक	44077	8	1.92
राजस्थान	4747	4.7	2.6	उत्तरप्रदेष	14091	4.1	2.96	गुजरात	43723	2	4.7
मध्यप्रदेष	4595	5.4	5.2	राजस्थान	12981	2.8	232	उत्तरप्रदेष	39724	4	2.4
उत्तर प्रदेष	4057	3.7	2.3	प.बंगाल	11935	4.8	4.22	तेलंगाना	37745	4	0.99
प.बंगाल	2461	6.7	9.1	मध्यप्रदेष	10935	1.9	4.25	आंध्रप्रदेष	33019	7	1.24
आंध्रप्रदेष	2307	3.2	2.1	हरियाणा	7722	8.4	1.30	प.बंगाल	32838	5	2.96
पंजाब	1932	1.7	1.7	कर्नाटक	7213	3.6	1.21	राजस्थान	25806	2	2.04

कोरोना वायरस के लक्षण और बचाव के तरीके – कोरोना वायरस का मुख्य लक्षण तेज बुखार है। बच्चों और वयस्कों में अगर यह 100 डिग्री या इससे अधिक पहुंचता है तभी यह चिंता का विषय है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक कोरोना वायरस से संक्रमित होने पर 88 फीसदी को बुखार, 68 फीसदी को खांसी और कफ, 38 फीसदी को थकान, 14 फीसदी को शरीर और सिर मे दर्द, 18 फीसदी को सांस लेने में दिक्कत, 11 फीसदी को ठंड लगना, 4 फीसदी मे डायरिया के लक्षण दिखते हैं। नाक बहना कोरोना वायरस का लक्षण नहीं माना जा रहा है। एक बात ध्यान देने वाली है कि कई ऐसे मामले मिले हैं जिनमें कोरोना के कोई लक्षण नजर नहीं आये है। इसलिये आपको सावधान रहने की जरूरत है।

कोरोना वायरस के लक्षण और बचाव के तरीके –

1. क्या है कोरोना वायरस – कोरोना वायरस का संबंध वायरस के ऐसे परिवार से है, जिसके संक्रमण से जुकाम से लेकर सांस लेने में तक तकलीफ जैसी समस्या हो सकती है। इस वायरस को पहले कभी नहीं देखा गया है। इस वायरस का संक्रमण दिसंबर मे चीन के वुहान में शुरू हुआ था। विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक, बुखार खांसी, सांस लेने में तकलीफ इसके लक्षण हैं। इस वायरस को फैलने से रोकने वाला कोई टीका नहीं बना है।
2. कोरोना बीमारी के लक्षण – इस बीमारी के लक्षण फ्लू से मिलते जुलते है , संक्रमण के फल स्वरूप बुखार, जुकाम, सांस लेने में तकलीफ, नाक बहना और गले में खराश जैसी समस्या उत्पन्न होती है। यह वायरस एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में फैलता है इसलिये इसे लेकर सावधानी बरती जा रही है। कुछ मामलों में कोरोना, वायरस घातक भी हो सकता है। खास कर अधिक उम्र के लोग जिन्हे पहले से अस्थमा, डायरिया और हार्ट की बीमारी है।
3. कोरोना बचाव के उपाय – स्वास्थ्य मंत्रालय ने कोरोना वायरस से बचने के लिये दिशा निंदोष जारी किये हैं। इनके मुताबिक, हाथों को साबुन से धोना चाहिये अल्कोहल आधारित हैंडवॉश का इस्तेमाल भी किया जा सकता है। खांसते और छींकते समय नाक और मुँह को टिश्यू पेपर से ढककर रखें। जिन व्यक्तियों में कोल्ड और फ्लू के लक्षण हो उनसे दूरी बनाकर रखें। अंडे और मांस के सेवन से बचे। जानवरों के संपर्क में आने से बचें।

कोरोना की पहचान –

1. तेज बुखार आना – अगर किसी व्यक्ति को सूखी खांसी के साथ तेज बुखार है तो

उसे एक बार जांच करानी चाहिये। यदि आपका तापमान 99.0 डिग्री और 99.5 डिग्री फारेन हाइट है तो उसे बुखार नही मानेंगे। अगर तापमान 100 डिग्री फोरेन हाइट या इससे उपर पहुंचता है तो यह चिंता का विषय है।

2. कफ और सूखी खांसी – पाया गया है कि कोरोना वायरस में कफ होता है मगर संक्रमित व्यक्ति को सूखी खांसी आती है।

3. सांस लेने में समस्या – कोरोना वायरस से संक्रमित होने के 5 दिनों के अंदर व्यक्ति को सांस लेने में समस्या हो सकती है। सांस लेने की समस्या फेफडो में फैलते कफ के कारण होती है।

4. फ्लू कोल्ड जैसे लक्षण – डब्ल्यू. एच. ओ. के अनुसार कोरोना वायरस से संक्रमित होने पर कभी तेज बुखार,खांसी लेने मे दिक्कत के अलावा फ्लू और कोल्ड जैसे लक्षण भी हो सकते है।

5. डायरिया और उल्टी – कोरोना से संक्रमित लोगो मे डायरिया और उल्टी के भी लक्षण देखे गये है। करीब 30 प्रतिशत लोगों मे इस तरह के लक्षण पाये जाते है। सूंघने और स्वाद की क्षमता में कमी आती है।

कोरोना वायरस मृत्युदर

क्रमांक	बच्चों की उम्र	प्रतिशत
1.	9 साल तक के बच्चों में	0 प्रतिशत
2.	10 – 39 वर्ष के लोगों मे	0 से 2 प्रतिशत
3.	40 – 49 वष के लोगों मे	0 से 4 प्रतिशत
4.	50 – 59 वर्ष तक के लोगों में	1.3 प्रतिशत
5.	60 – 69 वर्ष तक के लोगों मे	3.6 प्रतिशत
6.	70 – 79 वर्ष तक के लोगों मे	8 प्रतिशत
7.	80 से ज्यादा वर्ष के लोगों में	14.8 प्रतिशत

कोरोना वायरस से बचाव के लिए उपाय –

1. मास्क – कोरोना से बचने के लिये मास्क पहनना जरूरी है। कई सोधों में इस बात का दावा किया गया है कि मास्क पहनने से कोरोना वायरस के संक्रमण को रोका जा सकता है। इस समय मास्क पहनना न भूलें। एक रिपोर्ट के अनुसार अगर किसी कोरोना वायरस के मरीज ने मास्क पहना है तो उससे वायरस के संक्रमण की संभावना बहुत कम हो जाती है। इसलिये घर से निलते समय सबसे पहले मास्क जरूर पहने
2. गागल – एक रिपोर्ट के अनुसार कोरोना वायरस का संक्रमण आंखो के द्वारा भी फैल सकता है। इस समय घर से बाहर जाते समय गॉगल पहनना न भूलें।
3. कैप – कई शोधों ने दावा किया है कि कोरोना बालो से भी फैल सकता है। इस से बचने के लिये कैप पहननी चाहिये। इस मौसम मे कैप आपको गर्मी के मौसम के साथ साथ कोरोना वायरस से भी बचाने का काम करेगी।
4. गुनगुना पानी पिये – गुनगुना पानी पीने से डायजेस्टिव सिस्टम मजबूत होता है। अगर आपका डायजेस्टिव सिस्टम मजबूत रहेगा तो आपको कोई भी वायरस आसानी से अपनी चपेट में नहीं ले पायेगा इसलिये इस समय प्रयास करें कि गुनगुना पानी का सेवन किया जाये।
5. काढ़ा – कोरोना से बचने का सबसे अच्छा तरीका है। दिन भर मे दो से तीन बार

काढ़े का सेवन किया जाये। कई शोधो में इस बात का दावाकिया है कि काढ़े का सेवन करने से इम्यून सिस्टम मजबूत रहता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. https://www.who.int

2. https://www.icmr.gov.in

3. https://mohfw.gov.in

4. दैनिक जागरण पेपर इटारसी

5. दैनिक भास्कर पेपर इटारसी

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

पर्यावरण और संस्कृति पर कोविड-१९ का प्रभाव

• दलीप सिंह

सारांश – लॉकडाउन की विस्तृत कार्ययोजना बनाकर प्रकृति को बचाने के लिए एक सर्वोतम मॉडल के रूप में प्रयोग किया जा सकता है, जिसने देश-दुनिया की आवो-हवा को बदलकर रख दिया है। दूर-दूर तक साफ आसमान, हवा एवं ध्वनि प्रदूषण का कही नामोनिशान नही, साफ नदियों का जल एवं वातावरण में फैली रहने वाली धुन्ध आज नदारद है, जिससे एक उम्मीद की किरण नजर आती है। अन्त में श्स्वस्थिर मानुषेभ्य: उर्ध्वम जिकातु भेषजम्, सम्नो अस्ति द्विपदे, सम चतुश्पदे, ओम शान्तिः शान्तिः शान्तिः" यानि सभी मनुष्य समृद्ध हो, सभी वनस्पतियां और जीव-जन्तु फले-फूले, सभी मनुश्यों में सद्भावना हो, सभी जीव-जन्तुओं में परस्पर प्रेम हो, हर तरफ शान्ति, शान्ति और शान्ति हो। इन सबके लिए हमें सहयोगी बनना होगा, तभी जल, जंगल और जमीन जन-जन को सुख एवं शांति दे पायेंगे और इसके लिए हमे वेदों और पुराणों में कही गई बातों को रूढ़िवादिता और अंधविश्वास से जोड़ने के बजाय उसकी उपयोगिता को समझना होगा, तभी हम सुखी और खुशहाल जीवन निर्वाह कर सकते हैं।

मुख्य शब्द - पर्यावरण, संस्कृति, लॉकडाउन, प्रदूषण

प्रस्तावना- संसार की सभी संस्कृतियां प्रकृति के साथ और आधार लेकर विकसित हुई, जिसके कारण प्रकृति और संस्कृति में इतना गहरा सम्बन्ध है कि दोनों को एक दूसरे से अलग करके नही देखा जा सकता है। सृष्टि से लेकर मानव शरीर पंच-तत्त्वात्मक द्रव्यों; भूमि, आकाश, वायु, अग्नि और जल से बना हुआ है। इन पंच-तत्वों के अलावा उन तमाम उपादानों, अंगों-उपांगों की भी स्तुति की गई है, जो किसी न किसी रूप में जीवनोपयोगी है; जैसे; वर्शा, वनस्पति, पेड़-पौधे, वन्य-जीव, सूर्य की रोशनी, पर्वत-पहाड़, तालाब, झील, समुद्र, पशु-पक्षी, मनुष्य, कीड़े-मकोड़े मिलकर पर्यावरण की रचना करते हैं। अतः संरक्षण प्रदान करने के लिए वेदों में इनकी स्तुति की गई है और देवता मानकर धार्मिक भावना के साथ जोड़ा गया है ताकि वे लोक-आस्था का विषय बने रहें। प्रकृति में इन सबकी मात्रा और रचना कुछ इस प्रकार से व्यवस्थित एवं नियंत्रित है कि धरती का सन्तुलन लाखों-करोड़ों वर्षों से बना हुआ है। इनमें एक के अभाव में भी जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। विकास आज मानव केन्द्रित हो गया है, जिससे पर्यावरण सन्तुलन बिगड़ रहा है। मनुष्य ने प्राकृतिक नियंत्रण के अनेक उपाय खोज निकाले हैं, परन्तु विकास प्रक्रिया एक सीमा तक ही सम्भव है।[1] महात्माँ गाँधी ने कहा था कि "यह धरती अपने प्रत्येक निवासी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए यथेष्ट साधन उपलब्ध करती है परन्तु व्यक्ति के लालच की पूर्ति नही कर सकती है।"[2]

हमारी पुरातन संस्कृति में प्रकृति प्रेम एवं प्रकृति के संरक्षण की भावना इस तरह से

• असिस्टेंट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष राजनीति विज्ञान विभाग राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालयअगस्त्यमुनि (रुद्रप्रयाग) अगस्त्यमुनि, जनपद- रुद्रप्रयाग पिनः 246421 (उत्तराखण्ड)

घुली-मिली है कि उसे एक दूसरे से अलग करके नहीं देखा जा सकता। यही वजह है कि भारतीय मनीषियों ने प्रकृति एवं प्राकृतिक शक्तियों-सूर्य, वायु, वृक्ष, वनस्पति, पृथ्वी, चन्द्रमा, अग्नि आदि को देवता स्वरूप माना।[3] पर्यावरण सुरक्षा एवं सन्तुलन को धार्मिक आधार प्रदान कर उसे हमारे जीवन के अनिवार्य अंग के रूप में वर्णित किया गया है। पर्यावरण से जुड़े सभी पदार्थों, वन एवं वनस्पतियों को देवत्व का पद प्रदान कर, उनके प्रति न केवल आदर भाव प्रदर्शित कर पर्यावरण सुरक्षा को सुनिश्चित आधार प्रदान किया गया है, अपितु उसे धार्मिक आस्था से जोड़कर निरंतर संरक्षण एवं संवर्द्धन का मार्ग भी प्रशस्त किया है।[4] इस प्रकार हमारी सभ्यता एवं संस्कृति के आदि ग्रन्थ ऋग्वेद में जीवन की पूर्णता एवं सुखी-स्वस्थ जीवन के लिए उपयोगी समस्त प्राकृतिक पदार्थों को जीवन के अभिन्न अंग के रूप में निरूपित करते हुए उनकी मानवीय संदर्भों में उपादेयता प्रतिपादित की गई है। 'पर्यावरण' शब्द का उल्लेख किए बिना यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि प्राकृतिक पदार्थ हमारे वास्तविक मित्र व जीवनदाता है, उनके अस्तित्व के बिना धरती पर मानव के अस्तित्व की कल्पना नही की जा सकती। प्रकृति हमारे लिए हर दृष्टि से उपादेय होने के साथ ही आदरणीय व वंदनीय हैं। पर्यावरण-संरक्षण एवं पर्यावरण सन्तुलन की इससे बढ़कर उदात्त कल्पना, वेदो को छोड़कर विश्व के किसी भी साहित्य में देखने को नही मिलती है।[5]

भारतीय दर्शन में पर्यावरण - हमारी संस्कृति में प्रातः काल उठकर पृथ्वी पर पैर रखने से पूर्व उसका अभिवादन करते हुए कहा गया है कि "समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डिते। विशुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्श क्षमस्व मे"।[6] समुद्ररूपी वस्त्रों को धारण करने वाली, पर्वतरूपस्तनों से मण्डित भगवान विष्णु की पत्नी पृथ्वी देवि, आप मुझे पैर रखने के लिए क्षमा करें। "पृथ्वी सगंधा सरसास्तथापः सपर्शी च वायुर्ज्वलितं च तेजः। नभः सशब्दं महता सहैव कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।"[7] गंधयुक्त पृथ्वी, रसयुक्त जल, स्पर्शुक्त वायु, प्रज्वलित तेज, शब्दसहित आकाश एवं महत्तत्व, ये सभी मेरे प्रातःकाल को मंगलमय करे। धरती माँ संतान के विकास की सभी प्रक्रियाओं को अपार धैर्य, कुशलता एवं तत्परतापूर्वक पूर्ण करती है। इस प्रक्रिया में किंचित् विलम्ब भी हमारी सारी गतिविधियों को प्रभावित किए बिना नहीं रहती हैं, परन्तु संतान की माता के प्रति सत्त एवं क्रूर निर्ममता ऐसी घातक प्राकृतिक विषमताओं का प्रादुर्भाव कर रही हैं, जो किसी के लिए भी शुभ नही कहा जा सकता है।[8] भारतीय संस्कृति की विशेषता रही है कि जो भी हमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से देता है, वह हमारे लिए आराध्य एवं देवतुल्य है। भूमि से जुड़ने के साथ मनुष्य पर्वतों, जल, वनों, वन्य जीव आदि से जुड़ा और ये सब मानव श्रद्धा के पात्र रहे हैं। कालिदास ने हिमालय को देवतात्मा केवल काव्य के मोह में नहीं कहा। हिमालय हमारी धार्मिक और सांस्कृतिक चेतना का आधार है, वह भारत भूमि का मुकुट है और अनेक नदियों का उद्गम स्थल भी, जिसने देश को उर्वर बनाए रखा। वह तपोनिष्ठों का ही आवास नहीं, औषधियों का भंडार भी है। पौराणिक गाथाओं में उसकी महिमा अनेक रूपों में गाई गई है। इसके मूल में हिमालय का अपार सौन्दर्य, शांत और रहस्यमय वातावरण रहा है जो मन में दिव्यता का भाव जगाते हैं। सम्भवतः इसीलिए वेदों में कहा गया है कि वे मन को प्रबुद्ध करते है और उनकी पवित्र गोद में नदियों के संगम पर ज्ञानी को बुद्धि उपजती है।[9] इसी से हिमालय का संरक्षण सम्भव है।

लोक आस्था में वन - लोक-आस्था और लोक-विश्वास के अतिरिक्त धार्मिक ग्रंथों में वनों की महिमा, गुण एवं उपयोगिता वैज्ञानिक कसौटी पर खरी उतरती है। कुछ वृक्षों

को पुरातन पुरुषों की तरह सम्मान दिया जाता है। कुछ वृक्ष केवल वंदनीय ही नहीं होते है, अपितु अपने औशधीय गुणों से भी परिपूर्ण होते है,[10] वैदिक ग्रंथों में अश्वन्ध, तुलसी, आँवला, हरड़, बहेड़ा की बड़ी महिमा है। इसके पत्ते, फल, छाल सभी रोगनाशक है। रक्त विकार, कफ, वात, पित्त, दाह, वमन, शोथ, अरूचि, विशदोष, खासी, विशज्वर, हिचकी, उरःक्षतः, नशारोग, कृमि, कुष्ठ, त्वचावर्ण, अग्नि, दग्धवर्ण आदि अनेक रोगों में इनका प्रयोग होता है।[11] कहा भी गया है कि "नाक्षरो मंत्रहीनो, न मूलं च अनौषधय,अर्थात ऐसा कोई अक्षर नही है जो मंत्र न हो और ऐसी कोई जड़ नही है जो औषधि न हो। कुछ वृक्ष जैसे; आम, पंया, पीपल आदि शांतिकारक होते हैं, इसलिए यज्ञ में समिधा के निमित्त इनकी लकड़ियों का प्रयोग किया जाता है। इस तरह इन वृक्षों के साथ हमारा गहरा और आत्मीय रिश्ता हैं।[12] मानवीय संस्कृति व सभ्यता का विकास इन्हीं वनों, नदियों एवं घाटियों के इर्द-गिर्द हुआ है। नदियां हमारे अस्तित्व को बनाये रखने के लिए अमृत तुल्य जल देती हैं, इसलिए ये हमारी सांस्कृतिक धरोहर हैं। वायु और जल पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिए नितांत आवश्यक हैं।[13] जल के बिना जीवन और जीवन के बिना श्रृष्टि की कल्पना भी नही की जा सकती है।

भारतीय परम्परा में प्रकृति- भारतीय परम्परा में प्रकृति को कभी भी भोगवादी नही माना गया, बल्कि हमारी परम्परा में मानव का प्रकृति के साथ सह-सम्बन्ध होने के कारण उसके सभी रूपों को ईश्वर तुल्य माना है। धार्मिक मान्यताओं एवं आस्था, संस्कृति, परम्पराओं के कारण जहाँ नदियों में मल-मूत्र आदि गंदगी का परित्याग करना वर्जित था। वहीं आस्था व संस्कारों का परित्याग कर हम आधुनिकता के प्रवाह में इस तरह बह रहे है कि गंगा मैया में मल-मूत्र आदि गंदगी बेरोकटोक प्रवाहित कर रहे है। जलस्रोत आज गंदगी और संरक्षण के अभाव में क्षीण होते जा रहे है। जिस पर ध्यान देने के बजाय हम प्रकृति के साथ लगातार छेड़छाड़ करने में लगे हुए हैं। प्रकृति आपदाओं के रूप में समय-समय पर चेतावनी भी देती रहती है परन्तु हम उन्हें अक्सर नजर अंदाज करते रहे है, जिसके नतीजे अक्सर भयाभय होते हैं।

कोविड-19 और पर्यावरण- दुनिया की महाशक्तियां जो परमाणु हथियारों के जखीरा खड़ा करने में मशगूल थे, कोरोना वायरस के सामने ये सब लाचार और विवश नजर आने लगे है। दुनिया का ध्यान अपनी ओर खीचते हुए कोरोना वायरस ने गोली-गोली का फर्क समझा दिया है कि उन्हें जीवन बचाने वाली गोली चाहिए या जीवन लेने वाली गोली। इस वायरस ने बता दिया है कि यदि मानव जीवन को स्वस्थ व खुशहाल बनाना है तो घातक हथियारों की नही जीवनोपयोगी चीजों की आवश्यकता है। दुनिया जब इस वायरस पर काबू पाने में विफल रही तो इससे बचने का एकमात्र उपाय सामाजिक दूरी को माना गया, जिसके कारण अधिकत्तर देशों को अपने यहां लॉकडाउन करना पड़ा। इसका प्रभाव अर्थव्यवस्था से लेकर जीवन के हर क्षेत्र में देखने को मिल रहा है, जिससे उभरने में दुनिया को लम्बा वक्त लगेगा, परन्तु इसके सकारात्मक प्रभाव को भी नजर अंदाज नही किया जा सकता है। लॉकडाउन की बजह से लोग भागदौड़ से दूर एकांत में रहते हुए अपनी आवयश्कताओं को सीमित करके जीना सीख रहे है, जिससे प्रकृति में प्रतिदिन फैलने वाला लाखों टन कूड़ा, हानिकारक अवशिश्ट पदार्थ, विशैली गैसें, जहरीला पानी, धुआं, ध्वनि, वायु प्रदूशण जो करोड़ों वाहनों एवं लाखों फैक्ट्रियों से नदियों एवं पर्यावरण में मिलता था, लॉकडाउन के कारण कम हो गया है। कूड़ा-करकट एवं मैली कुचैली गंगा-यमुना जैसी प्रमुख नदियां स्वच्छ, साफ, निर्मल हो गई हैं और हिमालयी पर्वत श्रृखलायें दूर-दूर से नजर आने लगी है।

मन्दिरों, मस्जिदों, चर्च एवं सामाजिक सामारोह में जमा होने वाली गंदगी के अम्बार कही नजर नही आ रही हैं। गंगा की सफाई एवं स्वच्छता पर अरबों रुपये खर्च किये जाने के बावजूद जो नतीजे देखने को नही मिल रहे थे, वह आज देखने को मिल रहे हैं। भारतीय संस्कृति में नमस्ते हजारों वर्षों से रची-बसी परम्परा थी जो आधुनिकता की भेंट चढ़ गई थी, कोरोना ने पुर्नजीवित कर दुनिया को नमस्ते करने के लिए बाध्य कर दिया है।

उत्तराखण्ड के गांव जो पलायन के कारण खण्डहर और खेत बंजर हो गये थे, आज उन गावों में रौनक लौट आई है। वर्षों से जो लोग अपनी खेती-बाड़ी छोड़कर शहरों एवं नजदीकी कस्बों में चले गये थे, लॉकडाउन के बाद अपने लावारिस घरों की सफाई और बंजर खेतों को संवारने में लगे हुए है। जिस कार्य को राज्य सरकार का पलायन आयोग नही कर सका, उसे लॉकडाउन ने करके दिखा दिया है। लोगों को समझ आ गया है कि शहरों में नौकरी करने के बावजूद जब हम कुछ दिनों का खाना नही जुटा पाये हैं, जिसे गांव में खेती-बाड़ी कर आसानी से जुटा सकते हैं। इससे हमें सबक लेना होगा है कि मानव लाख कोशिश कर ले पर प्रकृति से कभी न जीता था, न जीता है और न जीतेगा। यह हम पर निर्भर करता है कि प्रकृति के साथ हम सामंजस्य बनाकर आगे बढ़ना चाहते है या चुनौती खड़ी कर संघर्ष का रास्ता अपनाते है। प्रकृति से संघर्ष का मतलब साफ है कि पत्थर पर सिर मारो, चाहे पत्थर की सिर पर मारों नुकसान केवल सिर का ही होगा।

वस्तुत - लॉकडाउन की विस्तृत कार्ययोजना बनाकर प्रकृति को बचाने के लिए एक सर्वोतम मॉडल के रूप में प्रयोग किया जा सकता है, जिसने देश-दुनिया की आवो-हवा को बदलकर रख दिया है। दूर-दूर तक साफ आसमान, हवा एवं ध्वनि प्रदूषण का कही नामोनिशान नही, साफ नदियों का जल एवं वातावरण में फैली रहने वाली धुन्ध आज नदारद है, जिससे एक उम्मीद की किरण नजर आती है। अन्त में "स्वस्थिर मानुषेभ्यः उर्ध्वम जिकातु भेषजम्, सम्नो अस्ति द्विपदे, सम चतुश्पदे, ओम शान्तिः शान्तिः शान्तिः" यानि सभी मनुष्य समृद्ध हो, सभी वनस्पतियां और जीव-जन्तु फले-फूले, सभी मनुष्यों में सद्भावना हो, सभी जीव-जन्तुओं में परस्पर प्रेम हो, हर तरफ शान्ति, शान्ति और शान्ति हो। इन सबके लिए हमें सहयोगी बनना होगा, तभी जल, जंगल और जमीन जन-जन को सुख एवं शांति दे पायेंगे और इसके लिए हमे वेदों और पुराणों में कही गई बातों को रूढ़िवादिता और अंधविश्वास से जोड़ने के बजाय उसकी उपयोगिता को समझना होगा, तभी हम सुखी और खुशहाल जीवन निर्वाह कर सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. बिश्ट, शेरसिंह, 1998, पर्यावरण एवं भारतीय संस्कृति, मिश्र, नित्यानंद एवं पाण्डेय, शिवचरण द्वारा सम्पादित पुस्तक पर्यावरण संस्कृति प्रदूषण एवं संरक्षण, अल्मोड़ा बुक डिपों, अल्मोड़ा, पृष्ठ-16
2. सती, वी.पी.; 2000, पर्यावरण और प्रदूषण, पोइन्टर पब्लि. जयपुर राजस्थान, पृष्ठ-101-102
3. अखण्ड ज्योति, वर्ष-70, अंक-7, जुलाई, 2006, अखण्ड ज्योति संस्थान मथुरा, पृष्ठ-23
4. पाण्डे, रमेश; 1994, वन पंचायतें, भुवनेश्वरी महिला आश्रम, अंजनीसैंण, टिहरी

गढ़वाल, पृष्ठ–125.
5. सती, वी. पी.; 2000, पर्यावरण और प्रदूषण, पोइन्टर पब्लि. जयपुर राजस्थान, पृष्ठ–20
6. भट्ट, दिव्या; 1998, पर्यावरण संरक्षण कुमाऊँ की सांस्कृतिक परम्परा, मिश्र, नित्यानंद एवं पाण्डेय, शिवचरण, पर्यावरण संस्कृति प्रदूषण एवं संरक्षण, अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा, पृष्ठ–67
7. मिश्र, लालबिहारी; सं. 2062, नित्यकर्म–पूजाप्रकाश, गीता प्रेस गोरखपुर, पृष्ठ–2
8. मिश्र, लालबिहारी; सं. 2062, नित्यकर्म–पूजाप्रकाश, गीता प्रेस गोरखपुर, पृष्ठ–9
9. अखण्ड ज्योति, वर्ष–70, अंक–7, जुलाई, 2006, अखण्ड ज्योति संस्थान मथुरा, पृष्ठ–23
10. चातक, गोविन्द; 1998: पर्यावरण परंपरा और संस्कृति का सृजन, मिश्र, नित्यानंद एवं पाण्डेय, शिवचरण द्वारा सम्पादित पुस्तक पर्यावरण संस्कृति प्रदूषण एवं संरक्षण, अल्मोड़ा बुक डिपों, अल्मोड़ा, पृष्ठ–133
11. अग्रवाल, अनसूया, 2012: पर्यावरण और संस्कृति संरक्षण में छत्तीसगढ़ की महिलाओं का योगदान, पर्यावरण विमर्श, इंडिया वाटर पोर्टल (हिन्दी), पृष्ठ–1
12. मिश्र, नित्यानंद एवं पाण्डेय, शिवचरण; 1998: पर्यावरण संस्कृति, प्रदूषण एवं संरक्षण, अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा पृष्ठ–98
13. भारती, रेशमा, कल की गंगा, जनसत्ता, इंडिया वाटर पोर्टल–हिन्दी

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 3.928, ISSN 0973-3914
Vol.- 32nd, Hindi Edition, Year-16, June 2020

कोरोना संकट,कृषि और श्रमिक

नीरज कुमार राय

सारांश–इस समय कोरोना वायरस की महामारी ने पूरी दुनिया पर कहर बरपाया हुआ है। इस महामारी के कारण न केवल सभी देशों की सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था पर अचानक से बहुत बोझ बढ़ गया है बल्कि, इस संकट ने किसी मुश्किल वक्त पर संवाद की चुनौती भी खड़ी कर दी है। इस महामारी की शुरआत मध्य चीन के वुहान शहर मे दिसंबर मे प्रारम्भ हुआ। यह मानव से मानव के संचरण का प्रमाण हैं । इसका प्रारंभिक लक्षण निमोनियां के रूप में दिखा । वुहान मे कोरोना से पहली मौत की पुष्टि 9 जनवरी 2020 को हुयी। तेजी से फैलते इस संक्रमण के कारण 11 मार्च 2020 को विश्व स्वास्थ्य संगठन ने कोविड–19 को वैश्विक महामारी घोषित कर दिया। क्योंकि उस समय तक कोरोना वायरस से संक्रमित मरीजों की संख्या तेरह गुना बढ़ चुकी थी। उस समय तक भारत में इस वायरस से संक्रमित केवल 62 मामले सामने आए थे,जो एक प्रतिशत से भी कम था। प्रोफेसर विल्सन के अनुसार, कोविड–19 से संक्रमित लोगों को चार श्रेणियों में बांटा जा सकता है। पहली श्रेणी में वे लोग होते हैं, जिनमें कोई लक्षण नहीं दिखता है। इसके आगे की श्रेणी में वे लोग हैं, जिनमें श्वसन नली के ऊपरी हिस्से में संक्रमण होता है। इस स्थिति में संक्रमित लोगों को बुखार, कफ, सिरदर्द या कंजक्टीवाइटिस (आंख संबंधी बीमारी) के लक्षण होते हैं। इन लक्षणों वाले लोग संक्रमण के वाहक होते हैं, लेकिन संभवतः उन्हें इसकी जानकारी नहीं होती है। तीसरी श्रेणी में कोविड–19 पॉजिटिव लोग होते हैं, जिनमें निमोनिया जैसे लक्षण होते हैं और उन्हें अस्पताल में रहना होता है। चौथी श्रेणी के लोगों में निमोनिया जैसी बीमारी का गंभीर रूप दिखता है। कोरोना वायरस मुख्य रूप से हवा की बूंदों के माध्यम से फैलता है।

मुख्य शब्द– कोरोना, कृषि, श्रमिक, वायरस

चीन से भारत मे कोरोना के फैलने की पुष्टि 30 जनवरी 2020 को हुयी । 30 जनवरी से 3 फरवरी के बीच केरल में सिर्फ तीन केस सामने आए थे। ये सभी वो छात्र थे जो वुहान से लौटे थे। कोरोना के मामलों का अगला चरण मार्च में शुरू हुआ जिसमें वो मरीज भी शामिल थे जो दुनिया के दूसरे हिस्सों से यात्रा करके लौटे थे। इस दौरान चीन में मरीजों का आंकड़ा 10,000 से बढ़कर 78,000 हो गया और बीमारी 60 देशों में फैल गई। इस दौरान दक्षिण कोरिया, इटली और ईरान कोरोना के बड़े केंद्र बन गये। सभी देशों से आने वाले लोगों के लिए अनिवार्य स्क्रीनिंग की शुरुआत 4 मार्च को हुई। भारत के लिए सभी वीजा को उसके एक हफ्ते बाद निलंबित किया गया। फिर 18 मार्च को अंतर्राष्ट्रीय उड़ानों पर पाबंदी लगाई गई। 19 मार्च को, 30 मिनट के लाइव टेलीकास्ट के दौरान, भारतीय प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने सभी नागरिकों को 22 मार्च को सुबह 7 से 9 बजे तक जनता कर्फ्यू करने के लिए कहा। इस कर्फ्यू के दौरान उन्होंने सभी को घर में रहने के लिए कहा। उन्होंने लोगों से स्वास्थ्य प्रणाली पर बोझ को कम करने के लिए नियमित जांच और वैकल्पिक सर्जरी से बचने के

● सहायक प्रोफेसर (समाजशास्त्र), राजकीय महिला महाविद्यालय,ढिंढुई,पट्टी, प्रतापगढ़

लिए भी कहा। उन्होंने एक COVID-19 आर्थिक प्रतिक्रिया कार्य बल के गठन की घोषणा की। प्रकोप के दौरान विभिन्न क्षेत्रों द्वारा किए जा रहे कार्यों की सराहना के लिए उन्होंने लोगों से शाम 5 बजे अपने दरवाजे, खिड़कियों या बालकनियों के सामने इकट्ठा होने और पांच मिनट के लिए उनकी सराहना करने का आग्रह किया। राज्य और स्थानीय अधिकारियों से कहा गया कि वे लोगों को सायरन बजाने के लिए कहें। 24 मार्च को, मोदी ने 21 दिनों की अवधि के लिए उस दिन की मध्यरात्रि से देशव्यापी लाकडाउन की घोषणा की। उन्होंने स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र के लिए ₹15,000 करोड़ (US$2A19 बिलियन) की सहायता की भी घोषणा की। इस धन का उपयोग परीक्षण सुविधाओं, पीपीई, आईसीयू, वेंटिलेटर और प्रशिक्षण चिकित्सा कर्मचारियों के विकास के लिए किया जाएगा। 3 अप्रैल को, प्रधान मंत्री मोदी ने संबोधित करते हुए कहा कि 5 अप्रैल को पूरे देश में सभी नौ मिनट के लिए रोशनी बंद करें और मोमबत्ती, दिया या मोबाइल की फ्लैश लाइट जलाएँ। लेकिन गंभीरता को देखते हुए 14 अप्रैल सुबह 10 बजे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने देश को संबोधित करते हुए लाकडाउन की अवधि आगे बढ़ाकर 3 मई करने का फैसला लिया और कहा कि अगले एक हफ्ते नियम और सख्त होंगे। साथ ही मोदी ने कहा कि जहां नए मामले सामने नहीं आएंगे वहाँ कुछ छूट दी जाएगी। मार्च के प्रारंभ में दिल्ली के निजामुद्दीन मरकज मस्जिद में होने वाला तबलीगी जमात नामक मजहबी जनसमूह कोरोना वायरस के एक तीव्र -प्रसारक घटना के रूप में सामने आया, जिसके बाद 900 से अधिक मामलों की पुष्टि हुई तथा देश भर में इस घटना से जुड़े कम से कम 10 लोगों की मौत हो गई। 9,000 से अधिक मजहबी-प्रचारकों ने जनसमूह में भाग लिया, जिनमें से अधिकांश भारत के विभिन्न राज्यों से थे तथा 40 अन्य देशों से 960 लोग उपस्थित थे। 4 अप्रैल तक, 17 राज्यों में 1,023 मामले तबलीगी जमात महामारी विस्फोट-केन्द्र (हॉटस्पॉट) से जुड़े हैं, जो भारत में पुष्ट किए गए सभी मामलों के 30 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व करते हैं। तबलीगी जमात के सदस्यों और देश भर में उनके संपर्कों सहित कुल 22,000 लोगों को क्वारंटाइन में रखा गया है। बचाव हेतु संकट को रोकने के लिए लाकडाउन के दौरान लोगों को अपने घरों से बाहर निकलना निषेध किया गया है। सभी परिवहन सेवाओं - सड़क, वायु, और रेल को निलंबित किया गया है हालांकि आग, पुलिस, जरूरी सामान और आपातकालीन सेवाओं का उपयोग किया जा सकेगा। शैक्षिक संस्थानों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों और आतिथ्य सेवाओं को भी निलंबित कर दिया गया हैं। खाद्य दुकानें, बैंक और एटीएम, पेट्रोल पंप, अन्य आवश्यक वस्तुएं और उनके विनिर्माण जैसी सेवाओं को छूट दी गई है। गृह मंत्रालय ने कहा कि जो व्यक्ति लॉकडाउन का पालन नहीं करेंगे उन्हें एक साल तक की जेल भी की जा सकती है। इस दौरान लगातार प्रधानमंत्री सामाजिक दूरी और अलगाव के माध्यम से समस्या से निपटने हेतु अपील कर रहे हैं। प्रधानमंत्री ने अपने सम्बोधन मे सप्त निर्देशों को भी चिन्हित किया हैं जो इस संकट से बचा सकते हैं। पीएम मोदी जी ने जनता से कहा की 1 -अपने घर के बूढ़े-बुजुर्गों का ख्याल रखें, 2- गाइडलाइन का सख्ती से पालन करें, 3-अपनी इम्युनिटी बढ़ाएं इसके लिए आयुष मंत्रालय द्वारा दिये गए दिशा-निर्देशों का पालन करें, 4-आयुष ऐप जरुर डाउन लोड करें और दूसरों को भी करवाए, 5-जितना हो सके उतना गरीब परिवार की मदद करें उनके लिए भोजन की व्यवस्था करें, 6-आप अपने व्यवसाय, अपने उद्योग में अपने साथ काम करने वाले लोगों के प्रति संवेदना दिखाए, किसी को भी नौकरी से न निकालें, 7-देश के कोरोना

योद्धाओं, हमारे डॉक्टर- नर्सेस, सफाई कर्मी, पुलिसकर्मी इन सभी का पूरा सम्मान करें।

सरकार ने पूरे देश में जिस लाकडाउन का एलान किया है, उसे साम्राज्यवाद के दौर के कानून एपिडेमिक डिजीज एक्ट के तहत लगाया गया है। ये कानून आज से 123 साल पहले यानी वर्ष 1897 में बना था। इसके अलावा सरकार ने अपनी घोषणा को कानूनी जामा पहनाने के लिए वर्ष 2005 में बने राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन कानून की भी मदद ली है। भारत में नए कोरोना वायरस की वजह से फैली कोविड-19 की महामारी ने खतरे की घंटी बजा दी है। इससे न केवल हमारे देश की सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था की खामियां उजागर हो गई है। बल्कि जोखिम से जुड़े संवाद और संकट के प्रबंधन से जुड़े कानूनी ढांचे की कमियों को भी सामने ला दिया है। लाकडाउन के पहले दिन, लगभग सभी सेवाओं और कारखानों को निलंबित कर दिया गया था, जिसका परिणाम यह हुआ की काफी जगह लोग आवश्यक सामान स्टॉक करते देखे गए। इसके साथ ही लाकडाउन के दौरान लोगों को मानदंडों का उल्लंघन करते पाये जाने पर गिरफ्तार किया गया, जैसे कि बिना किसी आपात स्थिति के बाहर निकलने, व्यवसाय खोलने और घरेलू संगरोध का उल्लंघन। सरकार ने ई-कॉमर्स वेबसाइटों और विक्रेताओं के साथ बैठकें की, ताकि लॉकडाउन अवधि के दौरान पूरे देश में आवश्यक सामानों की निर्बाध आपूर्ति सुनिश्चित की जा सके। कई राज्यों ने गरीब और प्रभावित लोगों के लिए राहत राशि की घोषणा की, जबकि केंद्र सरकार प्रोत्साहन पैकेज को अंतिम रूप दिया। 26 मार्च को, वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने लाकडाउन से प्रभावित लोगों की मदद के लिए ₹1,70,000 करोड़ (US$24A82 बिलियन) प्रोत्साहन पैकेज की घोषणा की। इस पैकेज का उद्देश्य गरीब परिवारों को तीन महीने के लिए सीधे नकद हस्तांतरण, मुफ्त अनाज और रसोई गैस के माध्यम से खाद्य सुरक्षा उपाय प्रदान करना। इसमें चिकित्सा कर्मियों के लिए बीमा कवर भी प्रदान किया। 27 मार्च को भारतीय रिजर्व बैंक ने लाकडाउन के आर्थिक प्रभावों को कम करने में मदद करने के लिए कई उपायों की घोषणा की, लेकिन इस कोरोना संकट ने आमजन के सामने एक गंभीर संकट पैदा किया हैं और इससे सबसे ज्यादा परेशान तबका किसान, श्रमिक, मजदूर, छोटे कर्मचारी, छोटे उद्योग-धंधे और दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले लोग हैं, जो रोज सुबह कमाते हैं और शाम को खाते हैं। अगर ये सुबह ना कमाए तो शाम को खाना भी नसीब नहीं होगा।

कृषि, किसान और श्रमिक - कोरोना संकट एक ऐसी महामारी हैं, जिसने भारतीय सामाजिक आधार को ही ध्वस्त करने का पूरा मन बना लिया है। लाकडाउन के कारण सबसे बुरी स्थिति किसानों की हैं। लाकडाउन के चलते अभी भी भोजन का संकट इसलिए नहीं उत्पन्न हुआ की हमरे पास खाद्यान का बड़ा भंडार रखा हुआ है। लेकिन जब सम्पूर्ण अर्थव्यस्था, बाजार और कारखाने बंद हैं, समाज का प्रत्येक इंसान अपने और अपने लोगो को बचाने मे लगा हुआ है, उस समय किसान की चिंता अपने फसलों को बचाने की हैं, जिस समय प्रतिबन्ध लागू हुआ, उस समय वही किसान के लिए महत्वपूर्ण हैं, क्योकि अधिकतर फसलों की कटाई का यही समय हैं और इसी समय अधिक मजदूरों और कटाई मे लगे श्रमिकों की जरूरत पड़ती हैं जो प्रतिबंधों के चलते मिल नहीं पा रहे हैं। देश के अनेक हिस्सों मे आलू के किसानो को सबसे ज्यादा नुकसान उठाना पड़ रहा हैं। कई जगहों पर फसलों को खेत मे छोड़ना पड़ा हैं। कर्नाटक में टमाटर के किसानो को काफी नुकसान उठाना पड़ा हैं। दक्षिण भारत और महाराष्ट्र से आम की खेप बाजार मे आने को तैयार हैं,

लेकिन उचित व्यवस्था नहीं होने के कारण ये अभी बाजार से दूर हैं। अंगूर किसानो को भारी संकट का सामना करना पड़ रहा हैं। दक्षिण में मिर्च ,गुजरात में जीरा, सौफ, धनिए की फसल कट चुकी हैं, लेकिन मार्केटिंग का इन्तजार हैं। एक बड़ा पहलु दूध उत्पादक किसानो का भी हैं। देश में रोजाना करीब पचास करोड़ लीटर दूध का उत्पादन होता हैं, जिसमे चालीस फीसदी किसान खुद ही उपयोग कर लेता हैं और साठ फीसदी बाजार मे पहुँचता हैं। इसमें करीब एक तिहाई यानि करीब नौ करोड़ लीटर दूध ही संगठित बाजार में आ पाता हैं बाकि चालीस फीसदी दूध यानी की बीस करोड़ लीटर दूध असंगठित क्षेत्रो में ही जाता हैं। दूध के कुछ उपयोग को छोड़कर अधिकतर उत्पादों का उपयोग बंद हैं, जिससे दूध की कीमते गिरी हैं। दूध के किसानो को प्रतिदिन दो सौ करोड़ का नुकसान हो रहा हैं। अनुमान हैं की पूरी लाकबंदी मे करीब आठ हजार करोड़ का नुकसान होगा। कृषि से सम्बंधित दूसरे उत्पादों की कीमतों में कमी आयी हैं। कृषि आय नकारात्मक स्तर पर पहुंच गयी हैं। कोरोना संकट से कृषि कारोबार लगभग बंदी के कगार पर हैं।आई. ऐल. ओ. के मुताबिक अनौपचारिक क्षेत्र की करीब चालीस करोड़ आबादी ग्रामीण इलाको में काम करती हैं, आज यह आबादी गंभीर रोजगार संकट का सामना कर रही हैं। अगर कुछ नहीं हुआ तो ये गरीबी के दुश्चक्र मे फस जायेगे, जिसके गंभीर परिणाम होंगे। भारत की सत्तर फीसदी आबादी मांसाहारी हैं और करीब दो करोड़ लोग पशु प्रोटीन सेगमेंट मे कार्यरत हैं। मांसाहारियों के लिए पशु प्रोटीन का सबसे बड़ा जरिया हैं। कोरोना संकट से सबसे ज्यादा नुकसान इस क्षेत्र को हुआ हैं। पोल्ट्री किसान हर महीने दो किलो वजन वाले पचास करोड़ चिकन तैयार करते हैं। किसानो के लिए उत्पादन लागत अस्सी रूपये किलो हैं, जबकि अब दाम और गिर गया हैं। अफवाह और सच्चाई के बीच इसका बाजार बिलकुल बंद हो गया हैं। यह दिवालिया होने के कगार पर हैं। किसान मांश बेच नहीं पा रहे हैं और मुर्गियों को खिलाने के लिए चारा नहीं हैं। आठ हजार करोड़ से अधिक के नुकसान की संभावना की गयी हैं। मछली पालन में प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से दो करोड़ के करीब लोग रोजगार मे लगे हैं। अस्सी से अधिक देशो में इसका निर्यात होता हैं और बीस फीसदी से अधिक हिस्सेदारी कृषि निर्यात में हैं, लेकिन आज यह नुकसान में हैं। सरकार ने लाकडाउन के दूसरे चरण में अनुमति दी हैं, लेकिन प्रतिबंधों के चलते यह अभी संकट मे हैं। अप्रैल और मई में सबसे अच्छी फिशिंग होती हैं, लेकिन अभी भी नौ अरब की फिशिंग बंद हैं। गुजरात और अन्य जुड़े प्रदेशो में अठ्ठाइस हजार से अधिक वोट अभी भी किनारे खड़ी हैं, जो वोट पर काम करने वाले मजदूरों का इंतजार कर रही हैं ।

कोरोना से उद्योगों पर संकट– लाकडाउन से भारतीय उद्योग काफी प्रभावित हुए हैं। घरेलू और वैश्विक रेटिंग एजेंसियों ने आर्थिक विकास मे भारी गिरावट की आशंका जताई हैं। अनुमान लगाया गया है की आर्थिक विकास दर तीन दशक के सबसे निचले पायदान पर पहुंच सकता हैं। एक अनुमान है की मार्च अंत और अप्रैल की प्रथम सप्ताह मे पच्चीस फीसदी के साथ बेरोजगारी दर चरम पर होगी । कपड़ा उद्योग पर अगले कुछ महीनो तक बुरा असर बना रहेगा। चीन मे लाकडाउन होने से कृत्रिम धागो का आयत हुआ महंगा जिससे तैयार माल की कीमते बढ़ने की पूरी सम्भावना व्यक्त की गयी हैं। इससे वस्त्र उद्योग में देश से बारह फीसदी की गिरावट हो सकती है।

कोरोना संकट से वाहन और पार्ट्स उद्योगों मे भी उत्पादन रुका है। इससे नकदी का संकट और वाहनों की निजी खरीद काफी स्तर तक प्रभावित और वैश्विक मंदी से निर्यात

पर बुरा असर पड़ेगा। रसायन और पेट्रोकेमिकल उद्योग भी गिरावट का शिकार हैं। वैश्विक मांग और पूर्ति के आभाव से भारतीय निर्यात पूरी तरह प्रभावित हुआ है। रीयल एस्टेट और निर्माण क्षेत्र भी इस संकट से नहीं उबर सका। सिम्मेंट और इस्पात सहित कच्चे माल की आपूर्ति प्रभावित होने से अधिकतर परियोजनाएं बंद हो गईं हैं। करीब तीस से चालीस फीसदी रोजगार घटने की आशंका है। विश्लेषकों द्वारा निवेशकों के मुँह मोड़ने की भी आशंका की गयी हैं। उपभोक्ता और खुदरा सामान से जुड़े व्यापारी और निर्माणकर्ता भी काफी सशंकित हैं क्योकि उन्हें भी दैनिक जीवन के वस्तुओं के उपयोग की कम खपत होने की शंका हैं। कच्चे माल के आयात में दिक्कते और गैर जरूरी जिंसों की मांग काफी कम होगी। खाद्य पदार्थ और किराना की दुकानों को छोड़ दिया जाय तो अन्य जगहों पर नकदी की भरी कमी दिखाई पड़ रही है। वित्तीय क्षेत्र मे काफी नकद की संभावना भी काफी कम हो गयी है क्योकि लोगो का बैंको की तरफ जाना बंद हैं और इसमें छोटे कामगार वर्ग ज्यादा हैं। छोटे वित्तीय बैंक नकदी संकट का सामना कर सकते हैं, ऐसी संभावना हैं। वाहन,ट्रेवल,हॉस्पिटैलिटी, खुदरा, रियल स्टेट में एन. पी. ए. बढ़ेगा ऐसी उम्मीद की जा सकती हैं। नुकसान की आशंका, किफायती आवास और जमीन खरीद में हैं। उपभोक्ता साख के डगमगाने की पूरी संभावना हैं। कच्चे माल के उत्पादन में ऊतार- चढ़ाव की आशंका ,कई जगह उत्पादन ढप्प और निर्यात प्रभावित होने की संभावना, सबसे ज्यादा ठेका मजदूर और छोटे कर्मगारों को हटाने की सम्भावना दिख पड़ती हैं।

निष्कर्ष के बदले में हम कह सकते है की आयातित कोरोना संकट बुरी तरह से भारत मे अपना घर बनाने की फिराक में हैं हालाँकि सरकार, समाज के जागरूक लोग और समाज की संस्थाए पूरी तरह से संकट से बचने हेतु प्रयास कर रही हैं और दूरी ही बचाव हैं के मूल मंत्र का पालन कर रही हैं, लेकिन परिणाम भी उतने भयावह प्रतीत हो सकते हैं क्योकि जब हम इस संकट से उबर चुके होंगे तो इसके परिणामो और चुनौतियों से निपटने के तरीकों को ढूढ़ना होगा और सामाजिक व्यस्था को पटरी पर लाने के लिए समाज के किसान, श्रमिक, मजदूर, छोटे कर्मचारियों, छोटे उद्योगों, संगठित और असंगठित क्षेत्रों को मजबूत करने पर विशेष जोर देना होगा, क्योकि यही सामाजिक संरचना के मूल हैं और इनका उबरना भारतीय समाज की मजबूती के लिए अति आवश्यक भी हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

- Hui, David S; Azhar, Esam E; Madani, Tariq A; Ntoumi, Francine; Kock, Richard; Dar, Osman; Ippolito, Giuseppe; Mchugh, Timothy D; Memish, Ziad A (14 january 2020) "The continuing epidemic threat of novel coronaviruses to global health – the latest novel coronavirus outbreak in Wuhan, China" International Journal of Infectious Diseases.
- Gettleman, Jeffrey; Schultz, Kai (24 March 2020) "Modi Orders 3-Week Total Lockdown for All
- Billion Indians" The New York Times
- Gallagher, James (18 january 2020) "New Chinese virus 'will have infected hundreds'", BBC

- "Coronavirus" (16 january2020) World Health Organization (WHO)
- मिश्रा, नीलेश (2 अप्रैल 2020) तबलीगी जमात के कोरोना संदिग्धों ने पार कीं जाहिलियत की हदें, गाजियाबाद न्यूज, नव भारत टाइम्स
- सिंह ,हरवीर (2020), कोरोना के असली योद्धा लाचार,आउटलुक, 4 मई 2020
- सरदाना, विजय (2020), अफवाहों और लाकडाउन से बेहाल पोल्ट्री –डेरी सेक्टर, इंडिया टुडे, 4 मई 2020
- दैनिक भास्कर 23 अप्रैल 2020

RNI No MP BIL 01034 / 12 / 1 / 2005 - TC
REGISTRAR OF NEWS PAPERS IN INDIA, GOVT. OF INDIA

Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P) India
Registered Under M.P. Society Registration Act,
1973, Reg. No. 1802, Year-1997
www.researchjournal.in

ISSN 0973-3914

Editor : Prof. Braj Gopal, Printed and Published by Dr. Gayatri Shukla on behalf of Gayatri Publications,Rewa - 486001 (M.P.) and Printed at Lineage Offset Rewa - 486001 (M.P.)